इवान तार्बा

सूरज हमारे यहाँ उदय होता है

Иван Ҭарба

Амра ҳара ҳҷы игылоит

इवान तार्बा

सूरज हमारे यहाँ उदय होता है

उपन्यास

Иван Ҭарба

Амра ҳара ҳҷы игылоит

प्रगति प्रकाशन ० ताश्कन्द

१९७९

अनुवादक : सुधीर कुमार माथुर
सम्पादक : राय गणेश चन्द्र
कलाकार : अन्द्रेई मर्कोविच

$T\ \frac{70303-246}{016(01)-80}$ 722-79

3703060100

इवान नार्वा लोकप्रिय अबखाज़ियाई कवि हैं। पिछले कुछ समय से उन्होंने गद्य लिखना आरम्भ किया है। पाठक "सोवियत लेखक" प्रकाशन गृह द्वारा प्रकाशित उनके उपन्यास "प्रसिद्ध नाम" से पहले से ही परिचित हैं। "सूरज हमारे यहाँ उदय होता है" नामक उपन्यास इवान तारबा की दूसरी गद्यरचना है। उनकी पिछली रचना की तरह इस उपन्यास का विषय-क्षेत्र भी अबखाजिया का एक पर्वतीय गाँव है। लेखक ने अपनी शैली के प्रति पूर्णतया निष्ठावान रहते हुए पर्वतीय गाँवों की जीवनचर्या, उनके रीति-रिवाजों और अबखाज़ियाई लोगों के जीवन का बिना किसी अतिरंजना के बड़ा सरल एवं सजीव चित्रण किया है। लेखक की सतर्क दृष्टि से समय की गति, नियमित परिवर्तन और पुनर्निर्माण छिपे नहीं रहे हैं।

उपन्यास की शैली काव्यमय, रोचक एवं सत्यनिष्ठ है।

एक

हमारे गांव का नाम है नोवालूनिये। इसका यह नाम कैसे पड़ा मुझसे न पूछिये, मैंने भी कभी किसी से इसके बारे में नहीं पूछा। गांव में भी कोई किसी से इसके बारे में नहीं पूछता। सब समझते हैं, यही नाम सदियों से चला आ रहा है। पीढ़ियां बदलती रहीं पर गांव का नाम यही रहा।

वैसे मेरा जन्म तो किसी दूसरे गांव में हुआ था। अपने मां-बाप का मैं इकलौता ही बेटा था। पिता लड़ाई के दौरान मारे गये और मां वैसे ही मर गयी। डॉक्टर तो उसकी मौत का कारण कैंसर बताते हैं लेकिन मैं सोचता हूँ उसे ग़म ले डूबा। मैं अकेला रह गया। विद्यालय की पढ़ाई ख़त्म करने के बाद मुझे काम करने के लिए नोवालूनिये में भेजा गया। जब मैं पहली बार इस गांव में पहुँचा, सामूहिक फ़ार्म के दफ़्तर में अपने काग़ज़ात दिखाये, प्रथम परिचितों से मिला, उस समय भी मैंने किसी से नहीं पूछा इसका नाम यही क्यों पड़ा। तो ठीक है न, आप भी मुझसे न पूछिये। इससे कहीं अधिक महत्व की बात तो यह है कि गांव मुझे पहले दिन से ही भा गया। अब मैं पूरी तरह से इसका आदी हो चुका हूँ और इसे अपना कहने लगा हूँ... सिर्फ़ कहता ही नहीं, मानता भी हूँ।

स्वभाव से ही मैं गँवई हूँ। मेरी गँवई आदतों पर विद्यालय में मेरे दोस्त अकसर हंसा करते थे। शायद, इन आदतों में से कुछ मैं अपनी शहरी ज़िन्दगी के दौरान भूल चुका हूँ। पर दिल से, स्वभाव से और मन से मैं गाँव का ही रह गया हूँ, यह मैं अच्छी तरह जानता हूँ। शायद, इसी कारण मैं इतनी जल्दी नोवालूनिये का आदी हो गया, उसे प्यार करने लगा।

पेशे से मैं डॉक्टर हूँ – पशुचिकित्सक। मुझे बीमार जानवरों का इलाज करना सिखाया गया था और अब सारी ज़िन्दगी मैं यही करूँगा। कुछ लोग मेरे पेशे को तुच्छ समझते हैं। जब नोवालूनिये के लड़कों के पास से गुज़रता हूँ, वे एक दूसरे को आँख मारते हैं, हँसते हैं। कभी कोई कह भी देता है, अरे, देखो, गायदेव आ रहे हैं! वे मेरे हँसी उड़ा रहे हैं, शायद यह मेरा भ्रम ही हो पर क्या

पता, यह सच ही हो। लेकिन मुझे इसकी कोई परवाह नहीं, मैं इसे कोई महत्व नहीं देता। चाहे नोवालूनिये के लड़के आँख मारें, चाहे हँसे, मैं जानता हूँ, उनकी हँसी केवल ऊपरी है। आखिर वे भी तो किसान हैं। हर किसान पशुचिकित्सक की इज़्ज़त करता है, आखिर वही तो उसके जानवरों का इलाज करता है। और मेरी भी इज़्ज़त की जाती है; शायद, उससे कहीं ज़्यादा जितनी के मैं अब तक क़ाबिल हूँ।

मेरे काम को सबसे अच्छी तरह, यानी मुझे भी, केवल हरज़ामान ही समझता है। वह समझता है, जहाँ जानवर पाले जाते हैं, वहाँ पशुचिकित्सक का होना कितना जरूरी है। इसके अलावा वह इस तरह सोचता है, आदमियों का इलाज करनेवाले डॉक्टर का काम कहीं हल्का और आसान होता है। वह मरीज़ के पास आता है, उसकी उम्र पूछता है, फिर पूछता है – वह धूम्रपान करता है या नहीं, क्या काफ़ी समय से करता है, शराब पीने का शौक़ीन है या नहीं, या सीधे – क्या अकसर पीता है, क्या ज़्यादा पीता है और नशे के दूसरे दिन कैसा महसूस करता है। फिर पूछना शुरू करता है, मरीज़ को क्या शिकायत है, मरीज़ से डॉक्टर उसकी बीमारी के बारे में विस्तार से पूछता है – क्या तकलीफ़ काफ़ी अर्से से है, दर्द कौन-सी जगह में है, बेकार के हज़ारों सवाल पूछ लेने के बाद वह किसी तरह बीमारी की असली जड़ तक पहुँच पाता है। इसके बाद डॉक्टर दवाई की खुराक लिखता है जो घोड़े के लिए भी काफ़ी होती है और फिर आत्मसन्तुष्ट होकर चला जाता है।

पशुचिकित्सक का काम बिलकुल दूसरा है। जानवर न तो कुछ कह सकता है न कोई शिकायत कर सकता है, न ही अपनी बीमारी का इतिहास बता सकता है। वह केवल शिकायत भरी आँखों से देखता रहता है, उसकी आँखों में शिकायत के साथ-साथ मूक विनती और आशा भी नजर आती है। यह आदमी, यानी मैं पशुचिकित्सक, फ़ौरन उसकी मदद करेगा। मुझे बिना किसी सूचक प्रश्न के, बिना कुछ पूछताछ किये कि मर्ज़ कहाँ छिपा है, उस पर हमला करना होता है और

कमज़ोर करके फिर उसका सफ़ाया करना होता है, हमेशा के लिए... स्वस्थ हुआ आदमी डॉक्टर को सैकड़ों बार धन्यवाद देता है, पर घोड़ा या बकरी? फिर केवल मैं ही जानवर की निगाह में शुक्रगुज़ारी और प्यार पढ़ सकता हूँ।

हरज़ामान बचपन से जानवर पालता रहा है। बकरियाँ, जिन्हें हम सूचीपत्रों में सींगवाले छोटे जानवर कहते हैं, पालना हरज़ामान का इस धरती पर और जीवन में मुख्य काम और एकमात्र पेशा है। जब से नोवालूनिये में सींगवाले छोटे जानवरों का फ़ार्म खोला गया, तब से ही हरज़ामान को उसका मैनेजर बना दिया गया। उससे अच्छी तरह भला कौन मेरे पेशे के महत्व को समझ सकता है?

बेशक, हरज़ामान मेरी तरह विद्यालय में नहीं पढ़ा। भेड़ या बकरी की शरीर-रचना वह केवल अपने अनुभव से जानता है – उसे उन्हें काटना पड़ा, मरे जानवरों की चीर-फाड़ करनी पड़ी, भेड़ का माँस खाना भी पड़ा, कभी उबला हुआ तो कभी सीख-कबाब के रूप में। पर बात है यह कि, शरीर रचना विज्ञान के साथ-साथ वह सींगवाले अपने छोटे जानवरों के दिल की बात, उनके मनोविज्ञान को भी समझता है और इस लिए उसके द्वारा इलाज, बीमार बकरी की प्राथमिक चिकित्सा, मेरे से कहीं ज़्यादा असरदार होती है, हालांकि मेरा काम विज्ञान पर आधारित है। पर हरज़ामान और मैं, दोनों मित्रतापूर्वक रहते हैं, मिलजुलकर काम करते हैं। मैं तो कहूँगा हम एक दूसरे के सफल पूरक हैं: उसके पास अनुभव और बड़े-बूढ़ों से विरासत में मिली अक़्लमन्दी ज़्यादा है और मेरे पास आधुनिक ज्ञान अधिक है।

सींगवाले बड़े जानवरों के फ़ार्म का मैनेजर भी काफ़ी होशियार

है। मैं मानता हूँ अगर लिखना ही है, तो बेहतर है पढ़े-लिखों के ढंग से लिखा जाये – भेड़ें, बकरियां, घोड़े, आदि। पर सामूहिक फ़ार्म में हमेशा मेरा वास्ता विलेखों और कई तरह के काग़ज़ातों से पड़ता रहता है। सींगवाले छोटे और बड़े जानवरों जैसे शब्दों का मैं वैसे ही आदी हो गया हूँ, जैसे एक साधारण डॉक्टर मिओ-कार्डियम जैसे शब्द का हो जाता है, हालांकि उसे सीधी सादी भाषा में दिल भी कहा जाता है।

वैसे हमारे सामूहिक फ़ार्म के सींगवाले बड़े जानवरों का मैनेजर जफ़ास बिगुआ भी भला आदमी है। शायद, वह हरज़ामान से बुरा नहीं है, पर हरज़ामान को मैं नज़दीक से देख चुका हूँ और उसे ज़्यादा चाहने लगा हूँ। जहाँ तक चरवाहों का सवाल है तो हमारे सामूहिक फ़ार्म के दोनों फ़ार्मों के चरवाहे बहुत अच्छे हैं।

हमारा सामूहिक फ़ार्म एक बहुद्देश्यीय कृषि उद्योग है। हमारे यहाँ तम्बाकू, मक्का और फल भी होते हैं। फिर भी, जब साल के आखिर में हम हिसाब मिलाते हैं तो मालूम पड़ता है, पशुपालन का स्थान सबसे नीचे नहीं है। हम नोवालूनिये के लोग, ऐसी जगह में रहते हैं, जहाँ कहते हैं कि पशुपालन करने को स्वयं भगवान ने कहा है। जैसे ही आप सारे गांव को पार करके आखिरी घर के पास पहुँचते हैं पर वास्तव में, यह सबसे पहला मकान ही, हरज़ामान का घर है, और बिल्कुल वहीं से पहाड़ियाँ शुरू हो जाती हैं। आप जानते ही हैं, पहाड़ी चरागाह इन्हीं पहाड़ियों में हैं।

सर्दियों में हम जानवरों को पहाड़ों की तलहटी में रखते हैं। जाड़े भर काम आने लायक़ चारा जमा कर लेते हैं और जानवरों के लिए पशुशालाएँ बनाते हैं। फिर जैसे ही गर्मी शुरू होती है, हम पहाड़ियों पर ऊपर की ओर बढ़ना शुरू करते हैं। जैसे-जैसे गर्मी की तेज़ी बढ़ती जाती है, हम अपने सींगवाले छोटे और बड़े जानवरों को लेकर उतना ही ऊपर चढ़ते जाते हैं। पतझड़ की ठंड और सर्दी तक हम नीचे गांव को लौट आते हैं। हमारा जीवन ऐसे ही चलता है। जिस ताल के साथ घड़ी का दोलक चलता रहता है उसी ताल के साथ पहाड़ी चरागाहों और तलहटी के बीच हमारी

ज़िन्दगी सर्दी और गर्मी में घूमती रहती है। नोवालूनिये में पशुचिकित्सक नहीं था, सो विद्यालय की शिक्षा पूरी करने के बाद मुझे यहाँ काम करने भेज दिया गया।

मेरा नाम अलोऊ है और कुलनाम नानबा। मैं आपको अपना पूरा परिचय देना चाहता हूँ। धूलभरी केबिन में छुपे, फुसफुसा कर कलाकारों को हिदायत देनेवाले नाट्य-निर्देशक-सा मैं नहीं लगना चाहता। जिन लोगों से मैं बात कर रहा हूँ या जिन्हें मैं कहानी सुना रहा हूँ, उन्हें मैं और मेरा चेहरा दिखाई देता रहना चाहिए। उन्हें विश्वास होना चाहिए जो शब्द मैं बोल रहा हूँ, वे मेरे ही शब्द हैं, उन्हें न मुझे किसी ने बताया है और न ही उन्हें पहले से किसी ने मुझे तैयार करके दिया है।

हालांकि मैं लेखक नहीं हूं, मैं दूसरे लोगों और उनकी ज़िन्दगी के बारे में बताने का निश्चय कर रहा हूँ। अगर मेरे संस्मरणों में प्रवाह न हो या सब कुछ नियमानुसार न हो तो आप मुझे दोष न देंगे। मुझे आखिर, साहित्यिक अनुभव और कौशल कहां से मिल पाता! नोवालूनिये पहुँचने के पहले दिन से ही मैंने अपनी डायरी लिखनी शुरू कर दी थी। शुरू में मैंने सिर्फ़ अपने विचार और अनुभूतियां लिखनी शुरू की और फिर अन्य लोगों के साथ बीती घटनाएँ भी लिखने लगा। फिर अपनी डायरी को थोड़ा सुधारकर साहित्यिक कृति का रूप देने का विचार मेरे दिमाग़ में आया। इसके बाद मैंने अपने संस्मरण नोवालूनिये में सुखूमी से आये एक पत्रकार को दिखाये। उसने कहा अगर मैं उनके ऊपर थोड़ी और मेहनत करूँ तो वास्तव में एक किताब बन सकती है। संक्षेप में यही कहूँगा, आप इन पृष्ठों में जो कुछ पढ़ रहे हैं वह मैंने, अलोऊ नानबा, नोवालूनिये गांव के पशुचिकित्सक ने लिखा है।

कहीं-कहीं आपको ऐसी भी घटनाएँ मिलेंगी जिनमें मैंने कोई भाग नहीं लिया क्योंकि उस समय मैं कहीं और था। तो जनाब अपनी सफ़ाई में मैं बस इतना ही कह सकता हूँ, अपनी डायरी में ऐसी घटनाओं को लिखने से पहले मैंने उनके बारे में विस्तार में पूछताछ करके बारीकी से जांच की है और उनकी यथार्थता

में पूरा विश्वास होने के बाद ही उन्हें अपनी डायरी में लिखा है।

इस तरह, प्रिय पाठक, मैं आपको नोवालूनिये गांव ले चलता हूँ, जिसकी आस पास की पहाड़ियों, निकट बहनेवाले चश्मों, मुझसे परिचित निवासियों के बारे में मैं आपको बताना चाहता हूँ। अच्छा हो, अगर आप भी नोवालूनिये को वैसे ही चाहने लगें, जैसे मैं यहाँ पहली बार काम करने आनेवाला और इसके पहले इस नाम के गांव के बारे में कभी न सुननेवाला।

लोगों का विश्वास है, जिसने एक बार नोवालूनिये के चश्मे का पानी पिया, उसे सारी उम्र दूसरा पानी बेस्वाद लगेगा। हमेशा वह आदमी नोवालूनिये आना चाहेगा, जिससे यहाँ का अद्‌भुत पानी एक बार फिर जी भरकर पी सके।

पहले मैं भी इस बात पर हँसता था पर अब मैं भी यही कहता हूँ। निजी तौर पर तो मुझे कोई दूसरी जगह इतना आकर्षित करती ही नहीं और किसी भी कीमत पर मैं इस गाँव को छोड़ने को तैयार नहीं हूँ। बिना नोवालूनिये के इस धरती पर मुझे न तो खुशी है, न जिन्दगी। शायद, ऐसा इसलिए भी क्योंकि नोवालूनिये में मैंने आत्मनिर्भर जीवनपथ शुरू किया।

जब मैं दूर पहाड़ की ऊँचाई से गाँव पर नज़र डालता हूँ, वह मुझे हरी घास पर थककर आराम करने के लिए लेटनेवाले महावीर जैसा लगता है। अपना सिरहाना गाँव ने पहाड़ियों के उभार को चुना है और उसके पैर काला सागर की कलकल करती प्यारी लहरों को छूते हैं।

ठीक समुद्र-तट से ही टेकरियां, पहाड़ियां और चोटियां शुरू हो जाती हैं वे सब सीधे तने खड़े हैं, घूमकर फिर नीचाइयों और घाटियों में बदल जाते हैं और फिर भी बिना झुके सीढ़ी दर सीढ़ी ऊँचे ही ऊँचे होते जाते हैं। हरी टेकरियां तनी खड़ी रहकर सीढ़ियों के समान तब तक ऊपर ही ऊपर चढ़ती चली जाती हैं, जब तक वे आंखों को चौंधिया देनेवाली हिमधवल चोटियों तक नहीं पहुँच जातीं। कभी-कभी जंगलों और हरी घास से ढकी

पहाड़ियों के बीच जैसे पूरी पकी पीली बड़ी गोल करावाई* की तरह, जुती और बोई हुई पहाड़ियाँ दिखाई देती हैं जो अब पके मक्के के कारण सुनहरी लगती हैं। इन सब हरी और सुनहरी पहाड़ियों के चारों ओर अनगिनत पगडंडियाँ किसी पहाड़ी आदमी के सिर पर बाश्लीक** जैसी मालूम पड़ती हैं।

भला ऐसा कौन-सा पेड़ है जो हमारे गांव में नहीं होता! सब से ज़्यादा संख्या फलवाले पेड़ों की है। अब आप ही बताइये। हमारे यहाँ समुद्र है, साफ़-सुथरे पहाड़ हैं, हम बाग़ में रहते हैं, जिसमें उज्ज्वल चश्मे बहते हैं, भला इसके अलावा इस धरती को स्वर्ग कहे जाने में और किस चीज़ की कमी है? अगर आपके हाथ से अचानक बीज गिर जाये या आपने उसे थूक दिया तो वह कभी बेकार नहीं जायेगा। इस बीज से अवश्य एक नया फलदार पेड़ निकल आयेगा।

उत्तर में जहाँ पहाड़ी की तलहटी में टिका हमारा गाँव खत्म होता है, अबखाज़ियाई लोगों की टोपी जैसी एक गोल पहाड़ी खड़ी है। वहाँ से नोवालूनिये का सब से पहला और सब से आख़िरी मकान दिखाई देता है, जो इस पर निर्भर करता है – आप किस तरफ़ से गिनना शुरू करते हैं। जब बल खाती पगडंडी के सहारे आप चलते हैं, यह मकान कभी हरियाली के पीछे ओझल हो जाता है, कभी फिर दिखाई देने लगता है। यही हरज़ामान आहवा का घर है।

देखिए, वह ख़ुद ही इस बल खाती पहाड़ी पगडंडी पर चला आ रहा है। उसकी पीठ पर एक छोटा-सा सफ़री थैला चाल की लय के साथ थिरक रहा है। पथिक के बायें कन्धे पर लकड़ी का प्याला लटका है, जिसके बग़ैर कोई पहाड़ी सफ़र पर नहीं निकलता। हमारे यहाँ ऐसे प्यालों को अखमाचीर कहते हैं। हरज़ामान के हाथों में लोहे की टोपीवाली लाठी है। हर क़दम पर जब लोहा चकमकदार पहाड़ी पगडंडी से टकराता है, चिंगारियाँ निकलती हैं

---

* करावाई – एक प्रकार की बड़ी गोल रोटी।

** बाश्लीक – सिर पर लपेटा जानेवाला हुड।

पर वे दिखाई नहीं देतीं क्योंकि सूरज, भले ही वह क्षितिज की ओर झुक रहा हो, तेज चमकता होता है।

हरज़ामान का पहनावा हल्का और सीधा-सादा है। सफ़र में वह भारी भरकम चीज़ें लादकर नहीं चलता। उसकी उम्र कम नही है पर वह बिना किसी मुश्किल के तेजी से चल रहा है जैसे दूरी तय नहीं कर रहा बल्कि अपने लिए कोई अतिआनन्ददायक काम कर रहा हो। इतनी आसानी और खूबसूरती से केवल असली पहाड़ी लोग ही चल सकते हैं।

हरज़ामान अपने रंग-रूप और क़द-काठी से भी असली पहाड़ी है। अगर कोई चित्रकार उसके चेहरे को चित्रित करे तो वह उसमें काले और पीले रंग भरेगा। वह धुएं, धूप और हवा में अच्छी तरह सुखाये मांस के समान और अनावश्यक झुर्रियों के बग़ैर बनी कांसे की पुरानी मूर्ति के समान मज़बूत है हालांकि उसके चेहरे पर झुर्रियां हैं पर निहायत कम और गहरी हैं जो उसके चेहरे के उभार, अभिव्यंजकता और अपने ही ढंग की खूबसूरती के लिए आवश्यक हैं। नाक चौड़ी और उभारदार है, बाक़ी चेहरे के मुकाबले नरम। उसकी चांदी से ढली मूँछें एक बहादुर आदमी के चित्र को पूर्णतया देती हैं।

हरज़ामान का सिर मूंछों से अधिक सफ़ेद है, बिलकुल सफ़ेद, पर ढली धातु सरीखे इस सिर को देखने पर आदमी सोचता है, सिर होने को तो सफ़ेद हो गया पर उससे एक भी बाल नहीं गिरा, सब वैसे ही पूरे और स्वस्थ हैं, जैसे शुरू में, जवानी में थे।

भौंहें घनीं और नीचे को झुकी हुई हैं, जिनके तले आँखें क्या, दो छोटी पहाड़ी झीलें हैं। सूरज की सुहाती गर्म किरणों से वे चमक रही हैं।

हरज़ामान अपने वज़न का ख़्याल नहीं रखता और शायद कभी वज़न लेने की मशीन पर खड़ा भी न हुआ होगा पर दसियों साल से क्या मजाल जो वह मोटा हुआ हो या दुबला। जवानी में उसके शरीर ने जो सुन्दर स्वरूप धारण कर लिया, युवा होने तक जिस हद तक क़द-काठी बढ़ पायी, बिना बदले वह वैसा ही का वैसा

रह गया, समय उसका कुछ नहीं बिगाड़ पाया। और तो और, हरज़ामान की कमर भी रत्ती भर न घटी, न बढ़ी। तभी तो उसे अकसर अपनी पेटियाँ बदलनी पड़ती। अगर हरज़ामान का पेट बढ़ता या घटता तो अलग-अलग छेदों पर बांधने के कारण पेटी ज़्यादा दिन चलती... लेकिन अब हाल यह है कि बकसुआ जहाँ टिका तो बस टिका ही रहा और एक ही जगह बार-बार रगड़ पड़ने से पेटी जल्दी टूट जाती। उसे नयी ख़रीदनी पड़ती।

नेकी और सचाई तो जैसे हरज़ामान के चेहरे पर ही लिखी है। यदि कोई उसके चेहरे पर नज़र डाले तो हटाना मुश्किल होगा क्योंकि उसके चेहरे में एक अजीब-सा आकर्षण है, बस देखते ही रहने को जी चाहता है। हरज़ामान की नेकी आपको जैसे मोहित कर लेती है। आप ख़ुद को भी अधिक भला और बेहतर महसूस करने लगते हैं। लगता जैसे शाम को शान्त समुद्र के किनारे बैठे सुकून महसूस कर रहा हो, सारी चिन्ताएं, असफलताएं और पीड़ाएँ छूमन्तर हो गयी हों। दिल में बच रहती केवल भलाई। चाहे जितनी बार हरज़ामान की नीली आंखों में आप झांककर देखें, उनमें कभी भी चालाकी, स्वार्थ, बुराई या छल कपट की झलक नहीं मिलेगी।

हरज़ामान के चेहरे पर पहली नजर डालते ही लगता है, वह जैसा ढल गया था, वैसा ही हमेशा के लिए रह गया। पर वास्तव में न तो वह कांसे की मूर्ति है और न ही फोटो। वह उतना ही जानदार और परिवर्तनशील है, जितना समुद्र, जो पहली उदासीन नज़र में बस गहरे नीले रंग का ही लगता है। जब हरज़ामान प्रसन्न होता है, उसकी प्रसन्नता उज्ज्वल और सुन्दर होती है, जब उसे कोई बात बुरी लगती है या उसे गुस्सा आता है, उसका गुस्सा तेज और अर्थपूर्ण होता है।

हरज़ामान भला आदमी है और उसकी रग-रग आँखों को भानेवाली है। पर न भलाई और न ही उसकी नज़रों का स्नेह उस साहस को कम करते हैं जो हरज़ामान में दिखाई देता है। यह सच है, साहसी होने के लिए चेहरे पर क्रूर या कठोर अभिव्यक्ति होना बिलकुल ज़रूरी नहीं। बहादुर आदमी सुशील हो सकता है... उसे उस कायर के समान लोगों के सामने

आँखें झुकाने की कोई जरूरत नहीं जो जीते जी मरे के समान है और जो जानता है, कितना ही निर्दोष वह क्यों न दिखाई दे, बर्तन के पेंदे के समान उसकी नज़र गंदी ही रहती है। वस्तुतः हरजामान का दिल उतना ही साफ़ है जितना चश्मे का पानी, जिसे वह कई वर्षों से, बचपन से ही या लगभग पैदा होने के दिन से ही पीता आया है।

अगर हरजामान कुछ सोच रहा हो तो उसकी झलक उसकी आँखों के कोनों में दिखाई देती – कोने कुछ धुँधले अचपल, अकसर किसी एक ही बिन्दु पर टिके होते। तब उन्हें कुछ नहीं दिखाई देता हो, ऐसी बात नहीं। पर कभी-कभी सामने की हर चीज गुम हो जाती। वह चलता तो पहले जैसी तेज़ी से ही पर उसकी चाल अपने आप धीमी हो जाती, क़दम छोटे हो जाते हैं... हो सकता है, वह किसी गहरे सोच में न भी पड़ा हो, पर सिर्फ़ उसे उस जगह पहुँच जाने का गुमान हो आया हो जहाँ उसे रुक जाना चाहिए।

हरज़ामान चाहे कहीं भी जा रहा हो, घर को या घर से बाहर, चरागाह को या चरागाह से कहीं और, वह पहाड़ी से फूटनेवाले चश्मे के पास जरूर रुकता। खाने के सामानवाला थैला जमीन पर रखकर वह खुद किसी ऊँचे पत्थर पर बैठ जाता।

चट्टान के बीच की दरार अधिक बड़ी नहीं, जैसे किसी चौड़ी कटार से वार करने पर घाव हो गया हो। तंग, सिकुड़े घाव से तेजी से पानी की धार निकलती रहती है। धरती के गर्भ से अनवरत प्रवाहित शुभ्र धार दरार के नीचे पत्थर से टकराकर फुहारों के रूप में हवा में यूँ बिखरे जाती है कि किसी स्त्री के ग़म के मारे सफ़ेद होकर बिखरे लम्बे बालों का भान होता।

हरजामान ऊंचे पत्थर पर झरने के पास बैठा नीचे हरियाली से ढकी टेकरियों को देखता है मानो नीचे घने पेड़ों में कुछ ढूंढ़ रहा है और मिल जाने पर उस पर नजर टिका देता है, उसके चेहरे पर सन्तुष्टि छा जाती है। नहीं, वह मुस्करा नहीं रहा है पर उसके चेहरे पर फैली सौम्यता उसके नाक-नक़्श के तीखेपन को कम कर देती है।

जिस चीज़ पर हरजामान की नज़र ठहरी थी, वह उसके घर के चूल्हे की चिमनी थी। चिमनी घर की छत से, पेड़ों से थोड़ी ऊंची निकली हुई है। वैसे तो उसे यहाँ से भी देखा जा सकता है, बशर्ते उससे धुआँ निकल रहा हो। अगर यूँ ही मामूली तौर पर नजर डाली जाये तो चिमनी और घर दोनों ही पेड़ों के पीछे छुप जाते हैं, कोई यहाँ रहता है, अन्दाज़ लगाना मुश्किल हो जाता है। इस समय हरजामान के घर की चिमनी से धुआं नहीं निकल रहा है। उसे दूरबीन से भी देख पाना मुश्किल था पर हरज़ामान उस जगह को, जिसे केवल वही पहचानता है, पहचान लेता है, जहाँ पेड़ों के बीच से चिमनी ऊपर निकली हुई है। वह उसे देखता है और उसके चेहरे पर सौम्यता फैल जाती है। हाँ, केवल हरज़ामान ही अपनी बाज जैसी पैनी नजर से अपने दिल में बसे प्रिय बिन्दु को देख पाने में समर्थ होता है। दूसरों की लापरवाह नजर घनी हरियाली में फिसलकर कुछ भी नही देख पाती।

हरज़ामान के पूर्वजों ने अपने रहने के लिए बड़ी सुन्दर जगह चुनी है जो एकान्त में भी है, गाँव के अन्दर भी और एक कोने में भी। न उसे कोई तंग करता है और इससे भी अधिक महत्वपूर्ण यह है कि वह खुद भी किसी को तंग नही करता। चारों ओर घने पेड़ हैं और बायीं ओर दर्रे में घायल मादा रीछ के समान, कभी एक पत्थर से दूसरे पर कूदती, तो कभी शोर और गरज के साथ लुढ़कती, झाड़ियाँ उखाड़ती, कभी उनमें उलझती, आलीप्सता नदी बह रही है।

पत्थर पर बैठे-बैठे हरज़ामान पहाड़ियों और टेकरियों के ऊपर की ओर देख रहा है, जहाँ काफ़ी दूर समुद्र और आसमान की संगम-रेखा पर रक्तिम सूरज भासित है। हरज़ामान देख रहा है, कैसे सूरज नीचे ही नीचे डूबता जा रहा है, कैसे वह समुद्र की नीलिमा को छू लेता है, जिस के कारण समुद्र की नीलिमा अरुणिम हो जाती है, कैसे वह पहले आधा और फिर पूर्णतया समुद्र की गहराइयों में डूब जाता है।

तभी हरज़ामान चिन्तन से जाग उठता। बिना किसी हड़बड़ी

के प्याला चश्मे की धार के नीचे रख, पीता और पत्थर से नीचे उतर, थैले को कमर पर डाल चल देता। उसकी चाल कहीं हल्की, कहीं तेज हो जाती। इस समय हरज़ामान जल्दी में है, वह परिवार के लोगों के खाना खाकर सो जाने से पहले घर पहुँचना चाहता है।

वैसे तो कभी-कभी दिन और रात के बीच की सीमा साफ़ दिखाई दे जाती है। लेकिन, आज आसमान में तैरते बिना हत्थे के हंसिये जैसे नये चांद ने यह सीमा मिटा दी है। चांद ने मुट्ठी भर किरणें उस पहाड़ी पगडंडी पर बिखर दी हैं जिस पर हरज़ामान चल रहा है।

और यह रहा घर। फाटक खोलिये और आंगन में जा पहुँचिये पर आसमान की धुँधली नीलिमा में उग आये अनगिनत तारों ने हरज़ामान को मुग्ध कर लिया है। वह रुक गया। तारे उन जलते अंगारों के समान थे जिन्हें बुझते हुए अलाव से निकालकर निशा की शीतल घास पर बिखेर दिया गया हो और भी बहुत से तारे आसमान में अनगिनत मुर्गी के बच्चों जैसे भागकर निकल आये। लाठी टेककर खड़ा हो हरज़ामान आसमान में अपने तारे को खोजने लगा। यूँ तो "हरज़ामान" नाम का कोई भी तारा नहीं। तारों के किसी भी मानचित्र में इस नाम का तारा अंकित नहीं। धरती पर कोई ऐसा दूसरा आदमी भी नहीं जो उसे जानता हो और इन बिखरे सुनहरे सितारों के ढेर में उसे ढूंढ़ सके। कोई उसकी पहचान नहीं जानता, न ही उसे दूसरे तारों से अलग कर सकता है। केवल हरज़ामान ही अपने तारे को पहचान सकता है। देखिये, वह खड़ा है, लाठी का सहारा लिये आसमान को निहारता।

कितने सारे तारे हैं! वे सब एक के बाद एक, एक साथ बिखर गये, जैसे अपने को दिखाना चाहते हों। पता नहीं हंस रहे हैं या चालाकी कर रहे हैं, उनमें से हरेक दूसरे से पहले आँखों के आगे आता है, आँख मिचकाता है, हरज़ामान की नज़र थाम लेने के लिए उसे लुभाता है। पर नहीं वह अपने एकमात्र तारे को ढूंढ़ रहा है। इसी कारण, उसकी नज़र तारों पर फिसल रही है,

कहीं टिक नहीं रही। पर आखिर कब तक इस तरह नज़र को फिसलने दिया जा सकता है, एक अकेले तारे पर नज़र टिकाने के लिये कितने तारों को पीछे छोड़ा जा सकता है जिससे उसे अन्य तारों से अलग किया जा सके। बस, उस पर अपनी खोजती हुई नज़र टिकाने की देर है और वह स्वयं ही अलग हो जायेगा और आकाश के अन्य तारों से अधिक तेज़ी से चमकने लगेगा।

तो आखिर, उसे अपना चहेता तारा मिल ही गया। जब तक हरज़ामान उसे देखता रहा, वह अपने मित्रों से अलग हो गया, उसकी चमक बढ़ने लगी, मानो उसे इतना समय बेकार ही निकल जाने का अफ़सोस हो। उसका अविश्वसनीय शीतल प्रकाश हरज़ामान की आँखों में पड़ा और उसकी आत्मा को प्रकाशमान कर गया। कितनी दूरी पर हैं वे एक दूसरे से! लेकिन उन्होंने एक दूसरे को देख ही लिया – तारा हरज़ामान को देख रहा है और हरज़ामान तारे को। तारे की पैनी किरणें निशा के अंधकार को चीर रही हैं, जिससे वे अपने पैनेपन से पेड़ों के पास खड़े तारोंभरे आसमान को निहारनेवाले तक पहुँचकर छू सकें। मालूम होता है, तारे यूं ही नहीं जगमगाते। हर तारा इस लिए जगमगाता है कि उसे कोई मनुष्य अपनी दृष्टि और हृदय से ढूंढ़ ले, उसे प्यार करे और रात के अंधेरे में उससे बातचीत कर सके।

हरज़ामान के एकटक देखते रहने के कारण तारे में धुंधला कर छुप जाने की शक्ति न रही और न ही हरज़ामान में उस पर से नज़र हटाने की। कभी लगता, उनके बीच कोई रहस्य उत्पन्न हो रहा है, फिर लगता, कोई रहस्य ही नहीं। हरज़ामान विचारमग्न है, वह कुछ बुदबुदाकर बोल रहा है, तारे को अपने दिल की बातें बता रहा है। उसे विश्वास है, उसके होंठों और दिल से निकलनेवाले शब्दों को आसमान के दूसरे तारे नहीं सुन रहे; सिर्फ़ उसके, एकमात्र मनचाहे तारे को ही सुनाई दे रहा है, जिसे वह देख रहा है।

हर बार उसके दिल में एक डर समा जाता है, कहीं ऐसा न हो, अचानक यह तारा उसे धोखा दे जाये, फिर कभी आसमान

में निकले ही नहीं ? या ऐसा हो, खुद वही उसे ढूंढ़ ही न पाये, किसी दूसरे तारे को अपना तारा समझ बैठे ? आखिर, उसकी कोई ख़ास पहचान तो है नहीं। सभी तारे अच्छे हैं, समान रूप से चमकते हैं, जगमगाते हैं। यह तो केवल हरजामान का दिल है जो उसे बताता है और वह अन्य तारों के बीच अपने तारे को ढूंढ़ लेता है। हर बार उसे नये सिरे से ढूंढ़ना पड़ता है, पर इससे क्या अगर इतने सालों में हरज़ामान ने एक बार भी उसे ढूंढ़ने में ग़लती न की हो।

कितनी दिलचस्प बात है, क्या धरती पर रहनेवाले हर आदमी के लिए एक तारा है ? क्या हर आदमी का अपना तारा है, क्या वह उसे पहचानता है ? क्या वह उसे आसमान में ढूंढ़ सकता है ? मिसाल के तौर पर मैंने कभी अपने तारे को नहीं ढूंढ़ा और मैं इतना भी नहीं जानता मेरा तारा है भी या नहीं। हालांकि मैं तारों को प्यार करता हूँ। बहुत प्यार करता हूँ। पर मैं सब को समान रूप से चाहता हूँ, पूरे तारों भरे आसमान को। पर मेरे लिए वे सब एक से खूबसूरत हैं, मेरा कोई ऐसा ख़ास तारा नहीं है जिसे मैं उसी तरह ढूंढ़ सकूं जैसे पहाड़ी हरजामान अपनी नज़रों से ढूंढ़ता है। क्योंकि उसे विश्वास है, उसका तारा केवल उसी के लिए चमकता है, उसे स्वास्थ्य प्रदान करता है, उसकी उम्र बढ़ाता है, उसके घर की रक्षा करता है, पहाड़ी पगडंडियों पर उजाला करके उसे रास्ता बताता है, उसके हृदय को शान्ति पहुँचाता है।

"मेरे तारे जगमगाओ, मुझे धोखा न दो, मुझे बेसहारा न छोड़ो," हरज़ामान ने मन-ही-मन अपने तारे से कहा और फाटक की ओर बढ़ गया।

फाटक खोलकर आँगन में घुसते ही हरज़ामान को सब से पहले अपनी कुतिया बील्गा दिखाई दी। वह घिसटती चाल से स्वामी की ओर ऐसे बढ़ी जैसे उसके पिछले पैरों को लक़वा मार गया हो। वह धीरे धीरे कूं-कूं कर रही थी। स्वामी से काफ़ी समय तक दूर रहने के विषाद, उसके वापस दूर जाने के डर और उसके वापस लौट आने की खुशी ने कुतिया को बिल्कुल पंगु बना दिया था।

जैसे-जैसे वह घिसटती करीब आ रही थी, उसकी कूं-कूं तेज
होती जा रही थी। आखिर वह अपने को रोक न पाई,
उछलकर पंजे हरज़ामान के कंधों पर टिका दिये और
जीभ से उस के मुँह को चाट लिया।
हरज़ामान ने कुतिया को सहलाया, थपथपाया।
वह हमेशा सबसे पहले घर की देहरी
पर क़दम रखने के पहले ही,
उसका स्वागत करती
थी ...

दो

ज्यों-ज्यों नोवालूनिये क़रीब आता गया, मैं यह सोच-सोचकर परेशान होता रहा कि पता नहीं गाँव में मेरे ठहरने का क्या इन्तज़ाम होगा, शायद गाँव में घूम-घूमकर खाली कमरे के बारे में पूछताछ करनी होगी। पर ऐसा कुछ भी नहीं हुआ। सामूहिक फ़ार्म के दफ़्तर में लोगों को मेरे आने के बारे में पहले से जानकारी थी। मेरा हार्दिक स्वागत हुआ और मुझे बताया गया कि हरज़ामान के घर में रहना है। इस तरह सब इन्तज़ाम मेरे पहुँचने के पहले ही हो चुका था। शायद सामूहिक फ़ार्म के दफ़्तरवालों ने सोचा होगा, पशुचिकित्सक के रहने के लिए अनुभवी पशुपालक का घर ही ठीक रहेगा। हाँ, अगर मुझे कोई एतराज़ न हो तब।

अच्छा होता, अगर मैं राज़ी न होता। इसलिए नहीं कि मैं किसी बुरे घर में फंस गया। सारे गाँव में तो क्या, अबख़ाज़िया भर में उससे बेहतर परिवार ढूँढ़े नहीं मिलेगा। मेरा स्वागत उस सगे बेटे की तरह किया गया, जो कई साल शहर में रहने के बाद अपने घर वापस लौटा हो। मुझे एक पल भी यह महसूस नहीं

होने दिया गया कि मैं इस घर में मेहमान हूँ। मुझे तो परिवार का बस बराबर का ही आदमी मान लिया गया और यही बात मेरे दिल पर बोझ-सी बन गयी, मैं कुछ खिन्न रहने लगा। मैं कितना भाग्यशाली होता, अगर इस परिवार में दो-एक दिन के लिए मेहमान बनकर आया होता। मैं आज़ाद पक्षी की तरह चाहे जहां उड़ता, मंडराता। मैं उन नैतिक ज़िम्मेदारियों से मुक्त हो जाता जो हरज़ामान के परिवार की ज़रूरत से ज़्यादा मेहमाननवाज़ी के कारण मुझ पर लद गई थीं। अबख़ाजियाई रीति-रिवाजों, दस्तूरों को निभा पाना, उनके प्यार और गर्मजोशी को साफ़ दिल से स्वीकार करना आसान नहीं।

आप पूछेंगे, यहाँ दिल का क्या लेना-देना? इसलिए कि मेरे साथ ऐसा व्यवहार किया जा रहा है, जैसे मैं सारी जिन्दगी इसी परिवार में पला और बड़ा हुआ हूँ, जैसे इसी परिवार के साथ सारी पीड़ाएँ और खुशियाँ बांटी हों, जैसे अपना सब कुछ इन लोगों के साथ बांटता रहा होऊँ, परिवार की आमदनी में हिस्सा दिया हो, सब के साथ मिलकर उसे खुशहाल बनाया हो। लेकिन सच तो यह है कि मैंने अभी तक इन भले लोगों के लिए रत्ती भर भी कुछ नहीं किया है।

सब मेरा आदर करते हैं, मेरी हर इच्छा आंखों ही आंखों में समझकर पूरी कर देते हैं, मेरा ख़्याल रखते हैं। मुझे सबसे अच्छा खाना परोसते हैं, सबसे मीठा पीने को देते हैं, मुझे तो लगता है जैसे मैं जिन्दा ही स्वर्ग में पहुँच गया हूँ।

मैं अच्छी तरह समझता हूँ सब काम समय पर और ढंग से करने में कितनी मुश्किल होती है। इसके लिए न केवल सोचने की बल्कि मेहनत की भी ज़रूरत होती है। यदि इस मेहनत के लिए एक पैसा भी देने की कोशिश की जाये तो ऐसा करने पर सारे परिवार, उसके हर सदस्य का ऐसा व्यक्तिगत अपकार, ऐसा घोर अपमान हो जाता, जैसा कि अब तक सुना न गया होगा। मैं क्यों ऐसे लोगों को नाराज़ करूँ, जो मेरे साथ इतना अच्छा बर्ताव करते हैं, अब मुझे क्या करना चाहिए?

क्या सिर्फ़ अकेला हरज़ामान ही ऐसा है या उसी का परिवार? हरेक अबख़ाजियाई परिवार ने बिल्कुल ऐसा ही व्यवहार किया होता। कुछ भी नहीं किया जा सकता है, परम्परागत अबख़ाजियाई अतिथि-सत्कार स्वीकार करना और इस की भारी सलीब को चुपचाप ढोना होगा। जैसा देश वैसा वेश। अपने को इन लोगों के अनुकूल बनाना होगा। चाहे मेरे लिए यह सब बोझ ही क्यों न बन जाये, पर उन्हें बुरा लगने से यह ज़्यादा अच्छा है।

मैं काफ़ी समय तक चुप रहा, सहन करता रहा, पर लगता है मेरी सहनशक्ति ख़त्म हो रही है। इसके अलावा, बात सिर्फ़ अतिथिसत्कार की नहीं उससे भी कुछ अधिक महत्वपूर्ण है।

यह है हरज़ामान का सारा परिवार जिसमें मैं कबाब में हड्डी की तरह आ टपका हूँ। हम सब, शाम का खाना खाने रसोई में नीची मेज़ की दोनों ओर बैठ जाते हैं। इससे अच्छा और क्या हो सकता है, जब अबख़ाजियाई परिवार शाम का खाना खाने रसोई में बैठे और खाने में से चूल्हे के धुएं की हल्की सौंधी गंध आती रहे!

हां, जब मेहमान आते हैं, तो दस्तरख़ान घर के सबसे बड़े कमरे में लगाया जाता है, जिसे बैठक कहा जा सकता है। हमारी भाषा में उसे अकुआस्किआ कहते हैं। हरज़ामान के घर में भी ऐसी बैठक है। वहाँ एक बड़ी फ़ोल्डिंग मेज़ रखी है। पर शाम का खाना रसोई में नीची मेज़ पर खाने में कहीं अधिक मज़ा आता है।

मेज़ के मुख्य भाग में परिवार का मुखिया हरज़ामान बैठता है। दायी तरफ़ उसका बेटा अलीआस और बायी ओर मुझे बैठाया जाता है मेरे बराबर अलीआस की बीवी देस, और सामने इन की बेटी, हरज़ामान की पोती, अमरा। यही है सारा परिवार।

हम सब एक छत के नीचे रहते हैं, एक मेज़ पर खाना खाते हैं।

परिवार में हरज़ामान की पत्नी की कमी खलती है। पर उसे यह ज़िन्दगी छोड़े अर्सा हुआ। मैंने हरज़ामान से कभी इस बारे में नहीं पूछा। मुझे उसके बारे में सब कुछ बाहर के लोगों ने ही बताया है। वह घर से कुछ ही दूर, अपनी ही जमीन में दफ़नाई हुई है। जहाँ हरज़ामान की जमीन खत्म होती है, वहाँ एक ऊँची ढलवाँ पहाड़ी है। वहीं, उस पहाड़ी के तले हरज़ामान के परिवार की क़ब्रगाह है। वहाँ उसके पिता, दादा, चाचा और अब उसकी बीबी दफ़न है। क़ब्रगाह के चारों ओर नीची बाड़ है। उसके चारों ओर वर्गाकार रूप में देवदार के ऊँचे पेड़ खड़े हैं। क़ब्रों पर बहुत से फूल रखे हैं और उनके सिरहानों पर नीचे पत्थर लगे हैं।

हरज़ामान खाना शुरू करने से पहले हमेशा मेज़ की दूसरी तरफ़ उस खाली जगह की ओर देखता है, जहां उसकी पत्नी को बैठा होना चाहिए था। हर बार वह उस ओर देखता है और शराब का एक छोटा गिलास पीता है। वह शराब को चुपचाप, क्षुधावर्द्धक के रूप में पी लेता है। पर मुझे मालूम है, वह मन में कुछ सोच रहा है। वह एक बार भी बिना सोचे, खोये-खोये या यूं ही नहीं पीता। वह अपने मन में क्या कह रहा है, मुझे मालूम नहीं। इस बारे में पूछा भी नहीं जा सकता है।

हरज़ामान अपने नजदीकी रिश्तेदारों को जिन्दा करके वापस नहीं ला सकता पर वह उनसे बिछुड़ना भी नहीं चाहता, उन्हें अपने दिल में रखना चाहता है। वह उन्हें अपनी ज़मीन की सीमा से दूर नहीं जाने देना चाहता। वह सोचता है, वे केवल उसके घर से अलग होकर ऊँची उभरी हुई चट्टान के तले देवदार के विचारमग्न पुराने पेड़ों की छाया में रहने लगे हैं। वे अधिक दूर नहीं गये। वे उसके आंगन की हद में ही हैं और उनके नज़दीक होने के ख्याल से उसे सुकून मिलता है। अब मैं हरज़ामान को अच्छी तरह समझ गया हूँ, बिलकुल ठीक बता सकता हूँ कि किन क्षणों में वह अपने सम्बन्धियों के बारे में सोचता है, हालांकि कभी उसका दिल छोटा नहीं होता और न ही उनके बारे में वह कुछ बोलता है।

वह शराब का गिलास पीते समय उन्हें याद करता है, हालांकि उसके चेहरे पर कभी न ग़म दिखाई देता है न दर्द। उसके चेहरे पर सौम्यता और भलाई फैली रहती है, जिनसे मेज़ के गिर्द जुटी हमारी छोटी-सी मंडली तेजोमय हो उठती है।

हम खाना खा रहे हैं। लेकिन हाय! मुसीबत का मारा मैं अपनी आंखें तश्तरी से हटा नहीं पा रहा। इस तरह बिना रुके, खाने पर पिल पड़ते देखकर मुझे हफ़्तों से भूखा सोचा जा सकता है। मैं बस खाने की ओर देख रहा हूँ। मैं जानता हूँ, यह बदतमीज़ी है पर करूँ भी तो क्या, मैं अपने आप को रोक ही नहीं पा रहा। अगर मेरी ओर कोई देखे तो शायद उसे हँसी आ जायेगी। पितृघाती की तरह मेरी गर्दन झुकी है! मैं लोगों के बीच में बैठा हूँ, उनसे बातचीत कर रहा हूँ, पर वे मेरी आंखें देख नहीं पा रहे हैं।

भले आदमी हैं वे। खुले और साफ़ दिल के, शांतिपूर्वक रहते हैं। उनके बीच मेरा आना यूँ था जैसे इन भले लोगों के मकान से अंधेरा मनहूसियत से भरा कोई ऐसा कमरा जुड़ गया हो जिसमें सूरज की किरण कभी झांक नहीं पाती।

मैं मेज़ के किनारे अपनी तश्तरी के दोनों ओर हाथ टिकाये ऐसे बैठा हूँ जैसे उसकी रक्षा कर रहा होऊँ – किसी ने हाथ लगाया नहीं कि मैं मुर्गे-सा झपटा। मैं जानता हूँ, मैं न ठीक से बैठा हूँ, और न तमीज़ से पेश आ रहा हूँ पर मैं अपने आप में होऊँ तब न। मैं आंखें तो नहीं उठा पा रहा पर मुझे दिखाई दे रहा है, बाक़ी लोग बिना किसी दिखावा या हड़बड़ी के खाना खा रहे हैं, न कि मेरी तरह भौंहें चढ़ाये, झिझकते हुए।

लगता है, बिल्ली भी कहीं जान-बूझकर ग़ायब हो गई है। नहीं तो अकसर वह अपना बदन मेरे पैर से रगड़ती है, पंजों से मुझे छूती है, म्याऊँ-म्याऊँ करती है और इस तरह मुझे मुसीबत से छुटकारा दिलाती है। मैं बिल्ली में व्यस्त हो जाता हूँ, उसे कुछ खाने को देता हूँ या भगाता हूँ; अपनी तश्तरी पर से मेरा ध्यान हट जाता है, मैं कुछ स्वाभाविक लगने लगता हूँ। चूँकि बिल्ली नहीं, सो ध्यान बंटाने का कोई बहाना भी नहीं।

आंखें उठाये बिना मैं शराब का गिलास हाथ में ले धीरे-धीरे पीने लगता हूँ। फिर मदिर आंखों से अपने सामने की ओर देखता हूँ और ... सच ही कहा है किसी ने – डरा सो मरा। शाम आंख बचाते गुजरी थी – डर था, कहीं सामने देखा और अमरा से नजर जा टकरायी तो! लेकिन संयोग यूँ हुआ कि इस समय हमारी नज़रें लड़ ही गयीं।

पहले तो मुझे बिजली का झटका-सा लगा, फिर जोड़ सुन्न होते महसूस हुए, माथे पर पसीने की बूंदें चुहचुहा आयीं। झट से मैंने अपनी नज़रें दुबारा तश्तरी पर गड़ा दीं। खाना ख़त्म होने तक यूँ ही नज़रें झुकाये रहा।

शाम को खाना खाने के बाद हरजामान और मैं काफ़ी देर तक बॉलकनी में बैठे रहे। रसोई से अमरा और देस के बर्तनों को उठाने-रखने की आवाज़ आ रही थी। वे नाश्ता शाम को ही बना लेती हैं, जिससे सुबह सिर्फ़ गरम करके हमें परोसा जा सके। वे इस बात का ख़्याल रखती हैं कि हम में से किसी को भी काम पर देरी न हो। अलीआस, दूसरों से ज़्यादा थका मालूम हो रहा था। और वह सबसे पहले सो गया।

मैं भी लेट गया। पहले मैंने पास ही बेंच पर रखे लैम्प को नहीं बुझाया, सिर्फ़ बत्ती नीचे सरकाकर रोशनी कम कर दी। मैं लेटे-लेटे सिगरेट पी रहा हूँ। यहां अकेले में मैंने अपने-आपको आज़ाद और बेहतर महसूस किया, चैन की सांस ली और अपने को होश में पाया। मैंने एक के बाद एक कई सिगरेटें पी डालीं और सारा कमरा धुएं से भर गया। हवा खुली खिड़की से अन्दर आकर तम्बाकू के धुंए को कोनों और छत पर बिखराकर चारों तरफ़ फैला रही है। ताज़ा हवा और सफ़ेद धुआँ मेरे कमरे में एक दूसरे से उलझ रहे हैं, कूद रहे हैं, एक दूसरे का जोर से आलिंगन कर कलाबाजियां खा रहे हैं।

इस उम्मीद से कि अंधेरे में नींद जल्दी आ जायेगी मैंने लैंप बुझा दिया। अब मेरे ताज़ा ख़्याल और गहरी नीन्द भी हवा और धुएं जैसे आपस में लड़ने लगेंगे। मैं करवटें बदल रहा हूँ, कभी सिर तकिये में

दबाकर उल्टा, तो कभी जोर से आंखें मींचकर पीठ के बल, तो कभी कमर के बल लेट जाता हूँ, पर नीन्द का नामोनिशान भी नहीं।

आखिरकार ऐसा लगा जैसे नीन्द मुझे अपनी आगोश में ले रही है, मेरी चेतना धुंधला रही है, मैं करवटें बदलना बन्द करके शान्त होता जा रहा हूँ और दुनिया में सभी आवाजें बंद होती जा रही हैं।

पर अचानक मुझे हल्के क़दमों की आवाज सुनाई देती है और मेरे सारे शरीर में एक सिहरन दौड़ जाती है। क़दमों की आवाज इतनी साफ़ मानो मेरे कमरे में ही कुछ सेन्टीमीटर की दूरी से आ रही हो। वास्तव में आवाज बहुत पास से आ रही थी; बस, पर्दे की दूसरी ओर से। तो यह अमरा है, अपने कमरे में। बारीक पर्दा मानो हर आवाज़, हर सरसराहट तेज़ कर रहा था। मैंने सिर पर्दे की ओर घुमाया और वैसे ही रह गया। कदमों की आवाज तो बन्द हो गयी थी पर कुरता उतारने की सरसराहट साफ़ सुनाई दे रही थी। कुरता तह करके उसने कुर्सी पर लटका दिया। उसके शरीर के बोझ से पलंग चरमराया, चादरों की सरसराहट हुई और घर में पूरी शान्ति छा गई।

मुझे कँपकँपी छूटती महसूस हुई। कंपकंपी रोकने के लिए मैं दांत भींच लेता हूँ। खामोशी मुखर हो उठती है। धीरे-धीरे मैं अमरा की सांसों की आवाज़ पहचानने लगता हूँ। क्यों न होता ऐसा, जब इतनी थोड़ी दूरी और बीच में नासपीटा झीना पर्दा हो!

अमरा सो चुकी है। उसकी सांसें गहरी और एक-सी हैं। आखिर दिन भर काम करके थक भी तो जाती है। मुझे लग रहा है, मैं केवल उसकी सांसें ही नहीं सुन रहा, बल्कि उसकी सांसों की गर्मी मुझे लपेटे भी जा रही है। आखिर कुछ ही सेंटीमीटर की दूरी तो है। हां, अमरा सो रही है। मुलायम तकिये का स्पर्श करते ही नीन्द ने उसे अपनी आग़ोश में ले लिया। निस्संदेह नींद ने उसे जकड़ लिया है, पूरी तरह अपनी बाँहों में – अपनी मनमानी करने के लिए। अमरा सो रही है और मैं लेटा-लेटा अपनी सांसें रोके, उसकी सांसें सुन रहा हूँ, मुझे उसकी गर्म सांसें अपनी लपेट में लेती लग रही हैं।

ख़ामोशी गहरी होती जा रही है और संवेदनशीलता बढ़ती जा रही है। उसके दिल की धड़कनें मुझे सुनाई देने लगती हैं — निरन्तर और सम लय। जबकि मेरा दिल एक टाँग से पकड़ी मुर्गी की तरह फड़फड़ा रहा है। अपने दिल की धड़कनों का शोर कम करने के लिए मैं बिस्तरे में गहरे धँस जाता हूँ। मुझे डर है, इस ख़ामोशी में उनका शोर कहीं अमरा न सुन ले पर मेरा दिल है जो उस ताक़तवर मछली की तरह छटपटाये जा रहा है जिसे हथेलियों से ज़मीन पर जबरन दबा रखा गया हो। गलती मेरी भी नहीं। अपने दिल की धड़कनों पर मेरा वश ही नहीं, वह दूसरे दिल की धड़कनें सुन और जवाब दे रहा है। दो दिल, जो इस दुनिया में एक दूसरे को पहचान गये हों, केवल तभी शान्तिपूर्वक और समान रूप से धड़कते हैं, जब वे मिलकर एक हो जाते हैं।

घर में नीरवता छायी हुई है। मेरे अलावा सब सो रहे हैं। कोई भी बेमिज़ाजी, परेशानी, भाग्योदय की चिन्ता या नीन्द को दूर भगा देनेवाले विचारों के साथ नहीं सोया। अमरा भी बिना हिले डुले सो रही है। सब के सब घर की छत तले व्याप्त शान्ति में सुरक्षित सो रहे हैं। मैं यहाँ क्यों आया? इस घर में मैंने क़दम क्यों रखे? कहीं इस घर में व्याप्त शांति और नीरवता को भंग करने के लिए तो नहीं?

तीन

पहाड़ियों के पीछे से दिन झाँकने लगा था। यूँ सूरज तो अभी नहीं निकला था, उसकी शीतल पीली किरणें आंगन और बाग़ को

रोशन करने लगी थीं। धूसर घास पर चमकती ओस की बूंदें तेज़ी से भाप बनकर उड़ गयीं, हरी-हरी घास चमकने लगी।

सबसे पहले मुर्ग़ियों की नींद खुली। वे पेड़ों से ज़मीन पर ऐसे कूदीं जैसे किसी ने पके हुए भारी सेबों से लदे पेड़ को हिला दिया हो। वे कुड़कतीं, पंजों व चोंचों से न जाने क्या ज़मीन में कुरेदने चुगने लगीं। उनका कुड़कना पल भर को भी बन्द नहीं हुआ। शायद अपनी भाषा में वे इस बदक़िस्मती की बात कर रही हों कि देर-सबेर वे खा डालने के लिए ही पैदा होती हैं। शायद वे अपनी मालकिन का इन्तज़ार करते हुए अनुमान लगा रही थीं कि वह उन्हें कब और क्या खिलायेगी। अथवा गपबाज़ी या आपस में लड़ने में लगी हों।

अगर मुर्ग़ियों की कोई भाषा है तो शायद उनकी मालकिन देस उसे समझती होगी, क्योंकि अभी मुर्ग़ियां तितर-बितर भी नहीं हुई थीं कि वह मक्का से ऊपर तक भरा बर्तन लेकर बाहर आयी।

उसके पीछे ही पीछे हरज़ामान भी आंगन में घुसा। उसके कंधों पर एक सफ़ेद तौलिया बाश्लीक की तरह पड़ा है। होश संभालने से अब तक बिना चूके हरज़ामान रोज़ाना सुबह अपने आंगन के पीछे बहनेवाले चश्मे पर नहाने जाता है।

हरज़ामान हाथ-मुंह धोता है और सर्दी हो या गर्मी, बर्फ़ीले ठंडे पानी से कमर तक स्नान करता है। सुबह की ताज़ा हवा और ठंडा पानी से उसे ताज़गी मिलती है, इतनी शक्ति और स्फूर्ति उसमें आ जाती है कि वह पत्थर को भी अखरोट की तरह तोड़कर टुकड़े-टुकड़े कर सकता है।

मालकिन देस को देहरी पर देखकर मुर्ग़ियों ने इतना शोर मचाया कि उनकी आवाज़ें दूर-दूर तक सुनाई देने लगीं। मुर्ग़ियां अपनी मालकिन की ओर आंगन के सब कोनों से दौड़ पड़ीं, जो थोड़ी दूर या कोनों में थीं, अपनी सहेलियों की आवाज़ें सुनकर उड़ती हुई वहां आ पहुंचीं। वे मालकिन के इर्द-गिर्द एक दूसरे को धकेलती, इठलाती चल रही थीं। उनकी गर्दनें तनी थीं मानो वे मालकिन को अपनी ख़ूबियां एक दूसरे से बढ़-चढ़कर दिखाना चाहती हों।

मालकिन देस मुट्ठियां भर-भरकर मक्का मुर्गियों की ओर उछाल देती है। मुर्गियां दानों पर टूटी पड़ रही हैं। वे उन्हें आनन-फानन में निगल जाती हैं, ज़मीन पर से मक्के के दाने ऐसे ग़ायब हो जाते जैसे गिन-गिनकर छुपायी जा रही अशरफ़ियाँ हों। मुर्गियां ज़मीन पर चोंच मारकर अशरफ़ियों की तरह ही मक्के के दानों को गलथैलियों में भरती जा रही हैं। दानों के टकराने से अशरफ़ियों जैसी ही आवाज़ होती।

देस को देखते ही हरज़ामान ने एक गहरी सांस ली। गहरी सांस का मतलब यह नहीं कि वह अपनी पुत्रवधू को नहीं चाहता। शायद ही किसी ने सुना हो कि देस को भी कोई पसन्द नहीं कर सकता। भूले से भी वह देस से कभी कटु शब्द नहीं बोला। सच तो यह है कि हरज़ामान उसका आदर करता है और इससे भी ज्यादा वह उसे प्यार करता है, मानता है। अगर अबख़ाज़ियाई रीति-रिवाज इजाज़त दें तो वह अपने सबसे चहेते आदमी की तरह उसके नाम की सौगंध खा ले। पर अबख़ाज़ियाई रीति-रिवाजों के अनुसार अपने से छोटे आदमी के नाम की सौगंध वर्जित है। स्वयं देस भी वृद्ध का आदर करती है, उससे प्यार करती है, उसकी ज़बान से वृद्ध के लिए कभी कोई बुरा शब्द नहीं निकलता। हरज़ामान ने गहरी सांस तो इसलिए ली कि देस क़िस्मत की थोड़ी खोटी है, अमरा के अलावा उसके कोई सन्तान नहीं। कभी बीमार पड़ी और उसके बाद बच्चे होने बन्द हो गये। फिर भी इस गहरी सांस में किसी प्रकार का उलाहना नहीं लेकिन वह अपनी सहानुभूति भला और किस तरह जता सकता है?

और फिर ईश्वर की कृपा से उनकी इकलौती बेटी अमरा तो है—वह सुन्दर भी है। वह सौभाग्यशाली हो, हरज़ामान बस यही चाहता है।

हरज़ामान तौलिया छज्जे में टांगकर बाग़ में चला गया।

जब मुर्गियों ने गलथैलियां ठूंस-ठूंसकर भर लीं, और उनके मुंह से आवाज़ आनी बन्द हो गयी देस घर के अन्दर चली गयी।

नाश्ते के बाद हम सब अपने-अपने काम में लग गये। जब अमरा बग़ल में किताब-कापियां दबाये कमरे से बाहर निकल रही थी, देस भी शायद रसोई का काम खत्म करके ऊपर जा रही थी। मां और बेटी सीढ़ियों पर मिल गयीं। मां एक क़दम पीछे हटकर बेटी को यूं एकटक देखने लगी मानो पहली बार देख रही हो अथवा सुंदर बेटी को देखने से बढ़कर दुनिया में और कोई काम ही न हो। मां ने बेटी के सिर पर हाथ फेरकर उसे सीने से लगा लिया। वह अमरा का आलिंगन इस तरह सावधानी से, छोह के साथ कर रही थी मानो बाँहों से अमरा के फड़फड़ाकर हमेशा-हमेशा के लिए उड़कर दूर चली जाने का उसे डर हो।

अमरा उस दिन विशेष रूप से बनी-सँवरी और सुंदर लग रही थी। बसंत के चटकीले रंगों के फूलोंवाला उसका कुर्ता उसकी युवा काठी को लपेटे था। उसके काले-काले बाल दो चोटियों में गुथे थे और चोटियां पीछे कुर्ते के किनारे तक पहुंच रही थीं। उसकी आंखें प्रमुदित और सप्राण थीं, भौंहें नभचर पक्षी के शक्तिशाली पंखों की तरह तनी थीं।

अमरा का चेहरा लगभग गोल-मटोल-सा है, ठुड्डी अंडाकार। काले-काले बालों, काली-काली भौंहों और चमकती काली-काली आंखों के बीच हिमपुंज पर पड़ते तीव्र श्वेत प्रकाश की तरह उसका चेहरा सार्थक हो उठता है। उसका चेहरा पीला नहीं, संगमरमर-सा चकमक गोरा है।

छोटी और थोड़ी चपटी नाक दूसरी किसी लड़की पर शायद ही अच्छी लगती, लेकिन उसके चेहरे में तो सोने पर सुहागे का काम करती। नाक अगर रत्ती भर भी सीधी या थोड़ी झुकी होती

तो उसके होंठों को भी थोड़ा-बहुत ढक लेती लेकिन तब फिर अमरा अमरा कैसे रह जाती! नाक चपटी न होती तो उसका चेहरा बिलकुल ही दूसरा दिखाई देता और तब वह अमरा नहीं, कोई दूसरी ही, अनजानी-सी लड़की होती। अक्सर ऐसा होता है कि कोई फालतू रेखा, या कोई फालतू काला तिल, सारे चेहरे को बदल डालता है, उसे फीका बना देता है।

"तू जा रही है, अमरा?" मां ने कुछ इस तरह घबराते हुए पूछा मानो अमरा वास्तव में लम्बे समय के लिए बहुत दूर जा रही हो।

"हां, मां, मुझे अब जाना चाहिए।"

"अच्छा, जा, बेटी तू जायेगी ही, घर में तो रोका नहीं जा सकता। तुझे जाना ही है, कुछ किया तो जा नहीं सकता।"

"हां," मां की बातों के दुहरे अर्थ को न समझने का भाव जताते हुए अमरा बोली, "मुझे वैसे ही देर हो रही है। आज मुझे जरा जल्दी जाना चाहिए। इम्तहान भी लेना है।"

"तू अब बिलकुल उस चिड़िया की तरह हो गयी है जो बड़ी हो गयी हो और जिसके पंख मज़बूत हो गये हों। तू हमारे घर में हिरनी-सी रहती है – अभी खड़ी दिखाई दी और अगले ही पल फ़ुर्र से यूँ ग़ायब हो जाती है जैसे हवा उड़ा ले गयी हो। पर करे भी क्या, जिन्दगी ही यही है। जो हो चुका है, इनसान बस उतना ही जानता है, होनी के बारे में कुछ भी नहीं।"

"तुम कह क्या रही हो मां?"

"अरे, बस यूं ही, बेटी तू मेरी बातों पर ध्यान न दे। पर जीवन और सत्य अपनी-अपनी गति से चलते रहते हैं – किसी से सलाह नहीं लेते। वे तुझसे और मुझसे भी नहीं पूछेंगे तू अब बड़ी और समझदार हो गयी है।"

"तुम आज यह सब क्या कह रही हो?"

"अच्छा, अच्छा, तू जा बेटी। अगर मेरी बातें समझ नहीं पा रही तो इसका मतलब है तू अभी बच्ची ही है।"

अमरा जितनी सोच में डूबी सीढ़ियों पर चढ़ी थी, उससे

ज्यादा सोच में डूबी नीचे उतरी। बील्मा फ़ौरन अपनी दुम हिलाती उसकी तरफ़ दौड़ी आयी और अपनी छोटी मालकिन को छोड़ने जाने लगी। फाटक के बाहर आकर अमरा ने रुककर बील्मा से ऐसे कहा जैसे किसी आदमी से कह रही हो,

"अच्छा, बील्मा, मुझे इससे आगे छोड़ने जाना जरूरी नहीं। चलो, अन्दर जाओ।"

कुतिया वहीं रुक गयी पर घर के अन्दर नहीं गयी। वह अमरा की ओर तब तक देखती रही जब तक मोड़ पर मुड़कर वह उसकी आंखों से ओझल नहीं हो गयी।

अमरा पुराने चिक्कण वल्कों के बीच में बल खाती पगडंडी पर होकर जा रही थी। मुख्य सड़क, जिस पर मोटरें, साइकिलसवार और लोग चलते हैं, उसके घर से काफ़ी दूर है। केवल यही बल खाती पगडंडी अमरा के घर को मुख्य सड़क से जोड़ती है। यह पगडंडी हरज़मान, स्वयं अमरा और उसके माता-पिता के पाँवों तले रौंदी जा चुकी है। यदाकदा इस पगडंडी पर से होकर लोग पहाड़ी चरागाहों को भी जाते हैं। मुख्य सड़क अमरा के घर से काफ़ी दूर है, पर इस चौड़ी सड़क को, जिसपर मोटरें चलती हैं, उसके घर के पास नहीं लाया जा सकता और न ही वे अपना घर सरकाकर उसके पास ला सकते हैं।

आज चिड़ियों को क्या हुआ है! चारों ओर के सारे पेड़ उनसे ढके हैं। वे चहचहाती, गाती, कूकती एक डाल से उड़कर दूसरी पर बैठ रही हैं, उन्हें दम लेने या सैकंड भर के लिए भी चुप होने की फ़ुरसत नहीं। अपने गीतों, अपनी प्रसन्नचित्तता और अपने हावभावों से वे लोगों से कह रही हैं: अपनी चिंताएं और सोच-विचार भूलकर वसन्त का स्वागत कीजिये! यह एक दिन और आ गया है, ऊंघते, जंभाई लेते इसे व्यर्थ मत बिताइये, क्योंकि यह अतिसुंदर दिन है।

पगडंडी पर चल रही युवा अमरा उतनी ही पवित्र है जितनी चिड़ियों की ये आवाजें, पर्वतीय हवा, वसंत की यह सुबह, जिसे धरती ने लोगों को भेंट किया है। पगडंडी की एक ओर

एक घने पेड़ के नीचे उसे अपना शिष्य खड़ा दिखाई दिया। वह मुंह ऊपर की ओर उठाये चिड़ियों की आवाज़ें सुन रहा था। यह ताल्येई ही है। उसके अलावा कोई भी इस तरह मंत्रमुग्ध-सा चिड़ियों की आवाज़ें नहीं सुन सकता। उसकी जगह दूसरे लड़के होते तो पत्थर मार-मारकर चिड़ियों को अब तक उड़ा दिया होता। ऐसा किस तरह किया जाये कि दूसरे भी अपनी धरती माता का इतना ध्यान रखें, उसे इतना प्यार करें जितना कि ताल्येई करता है?

"ताल्येई, देखो, तुम्हें स्कूल जाने में देर हो जायेगी।"

ताल्येई चौंक उठा और नाली फांदकर उसके साथ हो लिया। शिक्षिका और शिष्य, दोनों एक ही पगडंडी पर चल पड़े।

अमरा ने क्लास में हाज़िरी ली और ब्लैकबोर्ड के पास जा खड़ी हुई।

"आज हम लेख लिखेंगे। निबंध। मैंने ब्लैकबोर्ड पर लिखा है: "बसंत का आगमन"। आप सब, जो कुछ बसंत के बारे में सोचते हैं और जानते हैं, लिखिये। बसन्त और अन्य ऋतुओं में क्या अन्तर है? हमारे लिए बसन्त के आगमन का क्या महत्व है? बसन्त के आगमन का हमारे गांव नोवालूनिये के लिए क्या महत्व है? आप कल्पना कीजिये कि जब आप बसन्त के बारे में सोचते हैं तो किस प्रकार के दृश्य आपकी आंखों के सामने उभर आते हैं। आप सब अपने शब्दों में वर्णन कीजिये।"

कुछ विद्यार्थी तुरन्त लिखने लगे; कुछ अपनी क़लमें दांतों तले दबाने लगे। ताल्येई भी सोचने लगा। उसके लिए क्लास के कमरे की दीवारें ग़ायब हो चुकी थीं। बसन्त के दृश्य उसकी आंखों के आगे तैरने लगे थे।

पहाड़ियों के पीछे से सूरज उदय हो रहा है। उसकी उष्मा बढ़ती जा रही है। उसकी गर्मी से पहाड़ों में बर्फ़ पिघलने लगती है। श्वेत हिम छोटी-छोटी पारदर्शक धाराओं में परिवर्तित हो, भूरे, धूसर पत्थरों पर से होकर बहने लगती है। अभी वे छोटी हैं, शरमीली हैं। वे अपना रास्ता गड्ढों और दरारों में ढूंढ़ रही हैं। बाहर को निकली चट्टानों पर से गिरकर वे हिमकणिकाओं में

परिवर्तित हो जाती हैं जो चूरचखेली* जैसी लगती हैं। पर ये हिमकणिकाएं पारदर्शक, नीली और निर्मल हैं। उनकी नुकीली नोकों से स्वच्छ बूंदें टपक रही हैं। गिरने से पहले हर बूंद हिमकणिका की नोक पर कांपती है और धूप में झिलमिलाती है। हर हिमकणिका से एक नन्हा-सा सूरज टपक रहा है।

बाद में सोते निर्भीक हो जाते हैं, ज्यादा शोर करने लगते हैं। हिम कई जगह ढहकर ढलानों पर से लुढ़कने लगता है, लटकी हुई चट्टानों से उखड़ पड़ता है। नदियां भी लबालब भरकर शोर करने लगती हैं, अपने बल खाते किनारों से बाहर निकलने लगती हैं। उन्हें रास्ते में जो कुछ मिलता है, साथ बहा ले जाती हैं: लकड़ी, पिछले साल के पत्ते, सूखी घास की पूलियां; चरम उन्मत्तता में वे साथ में पत्थर भी नीचे बहाने लगती हैं।

आकाश गर्म और स्वच्छ हो उठता है। सब चिड़ियों से ऊपर काली चील उड़ान भरने लगती है। मानो उसे धागे से लटकाकर उंगली से धक्का दे दिया गया हो और वह धीरे-धीरे नीले आकाश में झूलने लगी हो।

ताल्येई कल्पना कर रहा है। उसे पेड़ों में निकलते नये पत्ते, ऊंची डालों पर फुदकती गिलहरियां, सूरज की किरणों से गरम होती रीछ की मांद और उसमें से रीछ, रीछनी व उनके नटखट छोटे बच्चे बाहर निकलते दिखाई दे रहे हैं।

ताल्येई अपनी कल्पना में सारे नोवालूनिये को नये पत्तों से ढका देख रहा है। इनमें पीलापन का निशान अभी नहीं मिटा और इसी कारण गांव नवजात चूज़े-सा लगता है। खेतों की जुताई शुरू हो गयी है, मिट्टी की मोटी-मोटी परतें उलटी-पुलटी जा रही हैं।

शीतकालीन तूफ़ानों में उफान और हिलोरें खाकर समुद्र की लहरें थक चुकी हैं। हल्के छपाकों के साथ अब वे बड़ी शान्ति से कंकरों और रेत को छू जा रही हैं। समुद्र के किनारे की रेत सूख चुकी है, तूफ़ानों के बाद तपकर अब वह धूप में बिखरे गेहूं के दानों की तरह बिखरी पड़ी है।

ताल्येई क्लास में बैठा है पर उसकी कल्पना आसपास के पहाड़ों

*चूरचखेली – अखरोट की गिरी को अंगूर के गाढ़े रस में पागकर बनाई जानेवाली एक प्रकार की मिठाई।

और खेतों के चक्कर लगा रही है। वसन्त, तेरे कितने रूप हैं, कितनी पहचानें हैं! उन सबको याद रखना, शब्दों में व्यक्त करना असंभव है। बस कुछ को ही चुना जा सकता है—सबसे अहम। तात्येई एक फूल से दूसरे पर मंडराती मधुमक्खी की तरह अपनी कल्पना में उभर रहे दृश्यों पर मंडरा रहा है। मधुमक्खी जहां शहद देखती है, वहीं रुक जाती है। तात्येई को जो दृश्य मनोहर लगता है, वहीं रुककर लिखने लग जाता है। सारे विद्यार्थी नोवालूनिये में वसन्तागमन पर लेख लिख रहे हैं।

चार

वसन्त और गर्मी के दिनों में जब काम का जोर होता है, हमारे गांव के लोग दिन नहीं गिना करते। बिना छुट्टी मनाये काम करते हैं। रविवार के दिन कोई भी किसान हाथ पर हाथ धरे घर नहीं बैठता। हाँ, जब फ़सल काट ली गयी हो, मक्कों से अनाज की कोठियाँ भर दी गयी हों, जानवरों का चारा जमा कर लिया गया हो, सर्दी के लिए लकड़ियाँ जुटा ली गयी हों, तो फिर कीजिये आराम।

आज बाहर गर्मी है, धूप खिली हुई है। रविवार का दिन है, पर घर पर बैठे रहने का विचार हमारे गांव के किसी आदमी के भी दिमाग़ में नहीं आया। क्या बूढ़े और क्या बच्चे—सभी खेत में पहुँच चुके हैं। सामूहिक फ़ार्म में बुवाई का काम लगभग पूरा हो चुका है। शीघ्र ही ज़मीन के उन टुकड़ों में अंकुर फूट आयेंगे, जिनमें बुवाई सबसे पहले की गयी थी। आज हम बचे हुए आखिरी टुकड़ों में बुवाई कर रहे हैं, क्योंकि अगर सारी ज़मीन में एक साथ बुवाई कर दी जाये तो अंकुर एक साथ ही फूट निकलेंगे, निराई करना कठिन हो जायेगा और सारे खेत भर जायेंगे।

हम तम्बाकू रोप रहे हैं। सारा गांव यहां जमा है। कल हुई ताज़ा बारिश का लाभ उठाना चाहिए, इसीलिए हमने अपनी सारी ताक़त तम्बाकू रोपने में लगा दी है। वर्षा के बाद मिट्टी नरम हो गयी है। लकड़ी ज़मीन में आसानी से धंस जाती है। पौधे को नम और गहरे गड्ढे में रोपिए तो उसमें पानी देने की ज़रूरत नहीं पड़ती, वह बड़ी जल्दी जड़ पकड़कर बढ़ने लगता है।

शिक्षक और छात्र-छात्राएं भी हाथ बंटाने आयी हैं। उनमें अमरा भी है। जिस काम को भी वह शुरू करती है बिना किसी रुकावट के पूरा हो जाता है और बड़े सुंदर ढंग से। उसने दूसरी लड़कियों से न तो ज़्यादा बुरे कपड़े पहन रखे हैं, न ज़्यादा अच्छे। उसने रंग उड़ा पुराना कुर्ता पहन रखा है और सिर पर छींट का रुमाल बांध रखा है पर यह सब उस पर इतना फब रहा है कि वह दूसरों से अलग ही दिख रही है। कोई भी लड़की उतनी आकर्षक नहीं लग रही, जितनी अमरा।

खेत में अधेड़ उम्र के किसान भी आये हुए हैं। हरज़ामान भी घर में नहीं बैठ सका। तम्बाकू रोपना बूढ़ों के बस का काम नहीं पर वे दूसरों की मदद कर रहे हैं। वे क़तारों में आगे-आगे चलते हुए पौधे रखते जा रहे हैं। हरज़ामान ने बेशक अपनी पोती को ही चुना और अब वह उसकी क़तार में चल रहा है। हरज़ामान पूरी ताक़त से काम कर रहा है पर उसे लग रहा है, अमरा बस अब उसके बराबर पहुंचने ही वाली है और तब होगा यह कि वह बूढ़ा उसके काम में रुकावट डाल देगा। हरज़ामान और ज़्यादा तेज़ी से काम करने की कोशिश करने लगता है। अमरा अपने बाबा को हद से ज़्यादा ज़ोर लगाते देख रही है। वह उसकी थकान भाँपकर उसे सांस लेने का मौक़ा देने लिए ख़ुद कमर सीधी करने का बहाना करके कभी रुक जाती है, कभी धीरे-धीरे चलने लगती है, जैसे बुरी तरह थक गयी हो। हरज़ामान इस बीच सुस्ता लेता है।

उसकी मां देस भी बेटी से पीछे नहीं।

अमरा के साथ-साथ मैं भी तम्बाकू रोप रहा हूँ। मुझे किसी ने भी उसके टुकड़े में काम करने के लिए नहीं कहा। सच कहूँ तो मैंने

खुद ही उनके परिवार के एक सदस्य होने की हैसियत का फ़ायदा उठाकर अमरा के नजदीक काम करने का निश्चय किया। पर अच्छा होता, अगर मैं ऐसा नहीं करता। अच्छा होता, अगर मैं एकान्त में, किसी कोने में दूसरे लोगों के साथ काम करता, जिससे न अमरा मुझे देख पाती और न ही कोई और।

अचानक मेरी ताक़त जवाब दे गयी। इसलिए नहीं कि मुझे तम्बाकू रोपना नहीं आता। मैं छोटी उम्र से ही यह काम जानता हूँ और अपने बचपन में भी मैं तम्बाकू रोपने और पत्ते चुनने में बड़ों से पिछड़ता नहीं था। पर अब अमरा के नजदीक होने से लग रहा है जैसे मैं तम्बाकू पहली बार देख रहा हूँ। मुझे लग रहा है, मैं फुर्तीली अमरा के मुक़ाबले में हास्यास्पद, सुस्त और गंवार दिख रहा हूँ।

मैं उकड़ूं बैठकर पौधे रोप रहा हूँ क्योंकि मेरी कमर लगभग नहीं झुक रही है। मेरे हाथ गठिया के मरीज की तरह अकड़ गये हैं। जिस डंडे से तम्बाकू रोपा जाता है, वह मेरे हाथ से अकसर छूट रहा है। और पौधों को भी मैं वैसे नहीं रोप रहा हूँ, जैसे उन्हें रोपना चाहिए। और हो भी क्या सकता है, अगर मेरी आंखें अमरा पर ही टिकी रहें। वह कितनी फुर्ती, खूबसूरती से अपनी क़तार में चलती जा रही है और उसके पीछे-पीछे मजबूत पौधों का जंगल लगता जा रहा है।

यह अच्छी बात है कि मेरे इर्द-गिर्द काम करनेवाले लोगों का ध्यान मेरी ओर नहीं, वे मेरा काम नहीं देख रहे, नहीं तो शायद वे मुझे भगा देते जिससे मैं उनको परेशान न करूँ और उनकी आंखों में खटकूं नहीं। पर लोग मुझे नहीं देख रहे। वे गर्म और धूप खिले दिन से खुश हैं, अपने काम में रमे हैं। या तो लोग मेरी ओर देख ही नहीं रहे या फिर अगर कोई देख भी रहा है तो उसे शायद मुझसे सहानुभूति ही हो रही है कि मुझे तम्बाकू रोपना नहीं आता। भला ये भले लोग ऐसे आदमी के काम में मीन-मेख निकाल सकते हैं जो उनकी मदद करने आया हो। आखिर, मैं तम्बाकू उगानेवाला तो

हूं नहीं। मेरी सहायता पर वे कोई खास निर्भर भी नहीं करते, उनमें से बहुत से लोग तो मुझे अपना आदमी मानने के बजाय अपने गांव का मेहमान ही मानते हैं। एक कहावत है: "मुर्गी का इस लिए भी शुक्रिया अदा करना चाहिए कि वह अंडे देती है।" शायद मेरे बारे में भी वे ऐसा ही सोच रहे हैं: "तुम्हारा शुक्रिया जो तुम यहां आये।" सब दिल लगाकर काम कर रहे हैं। उन्हें मेरे विचारों, मेरे पछतावों से क्या वास्ता। शायद इन भले लोगों को मालूम नहीं कि मेरे दिल में क्या है।

पर अमरा तो कम-से-कम एक बार मेरी ओर आंख उठाकर देख लेती। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो मेरा कोई अस्तित्व ही नहीं, जैसे मैं वहां हूं ही नहीं, जैसे उसके साथ-साथ तम्बाकू रोप ही नहीं रहा।

काश, मैं जान पाता कि अमरा इस समय मेरे बारे में क्या सोच रही है? काश, मैं जान पाता कि उसके दिल में क्या है? क्या वास्तव में उसे मेरा रत्ती भर भी खयाल नहीं, वह नहीं देख रही कि मैं कितना उदास हूं? वह अपने काम में इतनी खोयी है कि उसे मालूम ही नहीं – दुनिया में तम्बाकू रोपने के अलावा भी कोई काम है। खेत में आकर पहला पौधा उठाने से अब तक उसने एक बार भी मेरी ओर नहीं देखा। आखिर, उसके मन में मेरी मदद करने का विचार आ भी कैसे सकता है। नहीं, मेरी जगह तम्बाकू रोपने की जरूरत नहीं पर कम-से-कम एक बार तो मेरी आंखों में झांक लेती... अगर वह एक बार ही मेरी आंखों में झांक ले तो मैं उस शांत और निर्मल आकाश की सौगंध खाकर कहता हूं, जिसके कारण

आज का दिन शांत है, उस काली मिट्टी की सौगंध खाकर कहता हूँ जिस पर आज मैं अनाड़ियों की तरह काम कर रहा हूँ, अगर वह एक बार ही मेरी ओर देख ले, अगर मैं उसकी आंखें देख लूँ तो मैं पहाड़ उखाड़ देता। मेरे हाथों में से पौधे खुद ही गड्ढों में गिरने लगते। मैं अमरा को देख रहा हूँ। मैं हास्यास्पद लग रहा हूँ। पर अमरा मेरी ओर बिलकुल भी ध्यान नहीं दे रही।

दोपहर में जब गर्मी असह्य हो गयी, हम अखरोट के पेड़ की छाया में बैठ गये। लंबी शाखाओंवाले अखरोट के पुराने पेड़ की छाया हम सबके लिए काफ़ी थी। यहां छात्र-छात्राएं और वृद्ध, सब बैठ गये। थकान का नामोनिशान तक नहीं। सब खुश थे, एक दूसरे को लतीफ़े सुना रहे थे, मजाक़ कर रहे थे। इन भले लोगों की सोहबत का मेरे मिज़ाज पर फ़ौरन असर हुआ। मैं अब उतना अकेला न था, जितना आधा घंटे पहले। आमोद-प्रमोद के वातावरण में मैं भी उसी लहर में बहने लगा...

पर अमरा! हर बार वह मुझे कितने अचंभे में डाल देती है... काम के दौरान तो जैसे उसे कुछ दिखाई ही नहीं दे रहा था, मानो पौधों के अलावा दुनिया में कुछ भी नहीं, मानो मनपसंद काम के समय दुनिया से एकदम बेखबर हो गयी हो। और अब ऐसा लग रहा है जैसे यह कोई दूसरी अमरा हो। अब तो जैसे काम के दौरान संचित हर्षोल्लास बिखेरे डाल रही हो, अपने रंग में सब को रंगे डाल रही हो। अपने इर्द-गिर्द जमा हो गये युवा लोगों से उसने मजाक़ व छेड़खानी शुरू कर दी है। उसके हास-परिहास ने सबको एक दूसरे के इतना निकट ला दिया है कि मैं खुद को भी इन गांववालों का अपना आदमी समझने लगा। और अमरा हमारे विशाल परिवार की आत्मा बन गयी। प्रकृति ने उसे हाजिरजवाबी और विनोदी स्वभाव इतनी उदारतापूर्वक प्रदान किया है कि वह सबसे अलग ही दिखाई देती है और मुझे उसकी इस नयी खूबी की जानकारी हुई। उसके चरित्र के इस पहलू का मुझे अभी तक पता न था। मैं अमरा की ओर देखता रहा, मेरी आंखों में अभी तक छाया अंधेरा धीरे-धीरे दूर होने लगा। काम

के दौरान मुझे परेशान कर रही कातरता हमेशा के लिए गायब हो गयी।

अखरोट के पेड़ के तले अचानक किसी ने नृत्यगीत छेड़ दिया। सबके लिए यह एक इशारा था। लड़कियों ने अपनी मधुर, पतली और ऊंची आवाज़ों में साथ दिया। सबने गीत की लय में तालियां बजानी शुरू कर दी और उनकी आवाज से आसमान फटने लगा। युवक भी गाने और चिल्लाने लगे: "गोय-या, गोय-या"। शुरू में गीत की गति धीमी रही, पर तालियों की आवाज के साथ-साथ उसमें तेज़ी आती गयी। नृत्यगीत के बीच-बीच में बढ़ावा देने के लिए नौजवानों की जोशीली आवाज़ें गूँज उठतीं, "ताली, ओये ताली!"

गीत की शक्तिशाली स्वरलहरी अपने आरोह में सीधे नीले आकाश में ऊर्ध्वगमन कर जाती और तालियों की गूंज उससे टकराकर उसे वापस धरती पर ले आती। हम सब गीत के भंवर में फँसे खुद को सैलाब में गोते व चक्कर खाते पत्तों की तरह महसूस कर रहे थे। हम ज़मीन पर पैरों से ताल देने, हाथ और कंधे हिलाने लगे, स्वयं धरती भी हमारे साथ नाचने लगी। गीत लोहार की भट्टी में लोहे के समान तपने और दहकने लगा। तालियों से तो जैसे तूफ़ान आ गया, बिजली कड़क उठी। नृत्यगीत अपनी सीमा तक तप चुका था। उसे ठंडा होना था नाच के साथ... लेकिन कौन पहल करे? लोग एक दूसरे की ओर देखते हुए आंखों से वृत्त की ओर इशारा करने लगे: "चलो, निकलो", "नहीं, तुम, निकलो"। किसी का साहस नहीं हो रहा था।

अचानक जैसे ही गीत गूंजता हुआ चिनगारियां बिखेरने लगा, अमरा मछली की तरह झुंड में से बाहर उछल पड़ी।

अब फ़ैसला हो चुका था। मालूम नहीं, मुझे क्या हुआ, मैं भी निकल पड़ा। पर उसी क्षण जैसे ही अमरा के पैर ज़मीन पर टिके, मुझे अपने पर आश्चर्य हुआ कि मैं भी वृत्त में ऐसे कूद पड़ा मानो किसी ने मुझे पीछे से धक्का दिया हो।

गीत गूंजता रहा, झंकृत होता रहा, चिनगारियां बिखेरता रहा। अमरा वृत्त के बीच में आ खड़ी हुई, एक पल रुकी मानो

सांस ले रही हो, अपनी शुभ्र आंखों से सबको देखा फिर कंधे झटक, हाथ फैलाकर नाचने लगी। उसके पैर क्या कमाल कर रहे थे! मैंने अपने जीवन में बहुत से नाच देखे, पर नाच ऐसा भी हो सकता है, मैंने कभी सोचा भी न था। सिर चकरा देनेवाली तेज लय में अमरा नाच रही थी, उसके पतले पंजे तो जैसे ज़मीन को छू ही नहीं रहे थे। उसके हाथ चिड़िया के पंखों की तरह कभी फैलते, कभी गिरते। वह मेरे इर्द-गिर्द उड़-सी रही थी और मैं भी उसके झोंके में बहता हुआ उसे पकड़ने की कोशिश करने लगा, पर पकड़ नहीं पाया। अमरा के नृत्य से मुझमें भी सुष्ठता आ गयी थी। उसकी कला का प्रसाद मुझे मिल गया था और मैंने महसूस किया, ज़िंदगी में मैं पहली बार इतनी अच्छी तरह नाचा था। आखिर मैंने अमरा तक पहुंचकर उसे हौले से छू ही दिया और हम रुक गये। हम अपने ज़ोरों से धड़कते दिलों के साथ वृत में खड़े थे और हमें घेरे खड़े लोग प्रशंसापूर्वक हमारी ओर देखते मुस्करा रहे थे। मानो अपना ध्येय पूरा करके गीत शांत हो चुका था। अमरा और मैंने ही गीत छेड़ा था, हमने ही उसे समाप्त भी किया।

"धन्य हो पहाड़ियो, धन्य हो उत्तर के वासियो," हमें घेरे खड़े लोग कह रहे थे। "काम में भी शानदार, नाच में भी।"

अचानक ही मैं भी उत्तरवालों, गांव के पर्वतीय भाग के निवासियों की प्रतिष्ठा बढ़ानेवालों में से एक हो गया।

दोपहर के खाने के बाद हमारे सामूहिक फ़ार्म में एक ऐसी घटना हुई जिसके कारण लोग मेरे और अमरा के नाच को भूल गये।

जिस खेत में तम्बाकू रोपा जा रहा था, उसमें अचानक एक ट्रैक्टर दिखाई दिया। ट्रैक्टर के आगे-आगे अलीआस ऐसे चल रहा था मानो भैंस के सींग पकड़कर चल रहा हो। अलीआस ट्रैक्टर-चालक को वह खेत दिखा रहा था जिसे तम्बाकू रोपने के लिए छोड़ा हुआ था। ट्रैक्टर को देखते ही सब तम्बाकू रोपनेवाले अपना काम छोड़कर अभी तक अनदेखा तमाशा देखने लगे। तम्बाकू रोपने के लिए बनाई गयी कतारों में बिना भटके चलते हुए ट्रैक्टर खुद ही जमीन में पौधे रोपने लगा। लोगों ने अलीआस को पौधे उठाकर

ट्रेलर पर चढ़ते देखा, फिर लोहे का घोड़ा थोड़ा कांपा और चल पड़ा। ट्रेलर पर खड़ा हुआ अलीआस पौधे उठा-उठाकर मशीन में डाल रहा था। और मशीन खुद ही पौधे रोप रही थी। हम सब – बूढ़े, जवान, औरतें इस चमत्कार को देखने भागे। ट्रैक्टर बिलकुल आदमी की तरह तम्बाकू रोप रहा था। हर आदमी हाथों से तम्बाकू नहीं रोप सकता क्योंकि उसे रोपना नहीं आता और यह गूंगी मशीन एक जीवित प्राणी की तरह मनुष्य की सेवा कर रही है। क्या कमाल है!

अलीआस ने हाथ उठाकर ट्रैक्टर-ड्राइवर को इशारा किया और उसने ट्रैक्टर रोक दिया। अलीआस ट्रेलर से नीचे कूदकर मशीन द्वारा रोपी गयी तम्बाकू की कतार देखने लगा। उसने एक पौधे के पत्ते पकड़कर खींचे, फिर दूसरे के। उनमें से एक भी नहीं उखड़ा।

"मजबूती से रोप रहा है, एक की भी जड़ नहीं उखाड़ी जा सकती!" उसने ट्रैक्टर-चालक से चिल्लाकर कहा और अपनी जगह लौट गया।

"बेटा तुम्हारा ट्रैक्टर इतनी अच्छी तरह तम्बाकू रोपता है कि मैं सोचता हूं, अब हमारी यहां कोई जरूरत नहीं," हरज़ामान ने अपने बेटे से मज़ाक़ में कहा।

"अभी वह हर जगह नहीं रोप सकता। अभी तो वह केवल समतल ज़मीन पर ही रोप सकता है। जल्दी ही शायद ऐसी मशीन भी बन जायेगी जो पहाड़ियों की ढलानों पर भी पौधे रोप सकेगी," अलीआस ने पूर्ण विश्वास के साथ कहा। "आखिर चाय चुननेवाली मशीन तो है ही, दूसरी भी बन जायेगी – तम्बाकू के लिए।"

"इसमें तो मुझे भी शक नहीं है, पर तब हमारे हाथ किस काम के रहेंगे? क्या वास्तव में वे सिर्फ़ खाने ही के काम आयेंगे? उन्हें बेकार करना अच्छा नहीं होगा," – हरज़ामान ने छेड़ना जारी रखा। पर अलीआस ट्रैक्टर पर बैठ चुका था, उसने हरज़ामान के अन्तिम शब्द सुने ही नहीं।

हम लोग अंधेरा होने तक तम्बाकू रोपते रहे।

काम का दिन खत्म होने के बाद जो शाम आयी तो देखने

योग्य थी। गर्म शाम से, वह भी केवल गांव की ही नहीं बल्कि नोवालूनिये की शाम से सुंदर भला और क्या हो सकता है। जब से मैं इस दुनिया में आया हूँ, मैंने एक बार भी इतनी सुंदर, गर्म और सुरभित शाम नहीं देखी। हम काम से थके हुए लौट रहे हैं, पर हमें हमारी थकान सुखद लग रही है क्योंकि हम न हाथों में भारीपन महसूस कर रहे हैं, न सिर में, न दिल में।

सारा परिवार क़तार में पगडंडी पर चलता घर लौट रहा है। सबसे आगे हरज़ामान है। उसके पीछे उम्र के हिसाब से बाक़ी लोग हैं। धरती पर शांति छा रही है। पहाड़ियों की दरारों और घाटियों में फैलता अंधेरा पेड़ों को डुबो रहा है। ऊपर से, पीछे से सोतों की कलकल आवाज़ और सामने से बील्या के भौंकने की आवाज़ सुनाई दे रही है। उसे घर के पीछे बैठे-बैठे ही हमारी टोह लग गयी और अब वह बेचैनी से फाटक पर झपटती भौंक रही है। हम चुपचाप चल रहे हैं। हम सब थक चुके हैं, हर कोई अपने ही विचारों में डूबा बीते हुए दिन को याद कर रहा है।

घर भी आ गया। अब खाना खाकर सो जायेंगे। कम-से-कम आज तो मुझे चैन की नींद आनी चाहिए जिससे अमरा के मेरे क़रीब होते हुए भी उसे न पा सकने की पीड़ा से, मानो वह पतले पर्दे के पीछे नहीं किसी दूसरे ग्रह पर हो, मुझे तड़पना न पड़े।

पांच

चाबुक रसीदकर मैंने घोड़े की लगाम ढील दी। घोड़ा तीर की तरह दरवाजे से बाहर निकल हमारे चरागाहों की ओर जानेवाली पगडंडी पर सरपट दौड़ चला। शुरू में घोड़ा आसानी से चलता

रहा पर जैसे-जैसे चढ़ाई खड़ी होती गयी, उसे ज़्यादा ज़ोर लगाना पड़ा और अंत में वह क़दमचाल पर आ गया। इसके अलावा वह समझ गया था, मैं अपने होश में नहीं, न उस पर सवारी कर रहा हूँ, न इच्छा शक्ति दिखा रहा हूँ, बल्कि काठी पर रखे चेतनाशून्य बोरे की तरह हिलडुल रहा हूँ। उसने फ़ौरन मेरी कमज़ोरी का फ़ायदा उठाया और अब जैसे उसके जी में आ रहा है, वैसे ही चल रहा है।

और सच कहूँ तो मुझे खुद भी नहीं मालूम कि मुझे क्या चाहिए, मैं कहाँ और क्यों जा रहा हूँ। मैं घोड़े पर बैठा पहाड़ों पर जा रहा हूँ पर वास्तव में मैं पूरे तौर पर अमरा के पास हूँ। दृष्टि तो मेरी घोड़े की अयाल पर टिकी है लेकिन दिखाई मुझे सिर्फ़ अमरा का चेहरा दे रहा है।

प्यास बुझाने घोड़ा जब सोते के पास रुका, मुझे होश आया। घोड़ा जल्दी-जल्दी पानी पी रहा था। पानी की शीशे जैसी सतह पर उसकी परछाईं हिलती-डुलती, तिरती-सी थी। यह सब देखकर मुझे होश आया, मैं वास्तविक दुनिया में लौट आया। मैंने घोड़े को मारा नहीं, सिर्फ़ चाबुक दिखाकर एड़ियाँ पेट में घुसेड़ दीं। वह फुनफुनाता, शोर करता सोता फांद गया और दुलकी चाल से अपनी रफ़्तार बढ़ाता मुझे पहाड़ों पर ले दौड़ा।

चरागाह में चरवाहे की कोठरी के पास खूंटे से बंधी दो बकरियां लंगड़ा रही थीं। मेरे दिल ने मानो जान लिया कि आज यहां मेरी ज़रूरत है।

"इन्हें क्या हुआ है?" घोड़े से उतरते हुए मैंने नज़दीक आ रहे चरवाहे से पूछा।

"तुम तो जानते ही हो, ये किस तरह के जानवर हैं। आसपास की चट्टानों पर चढ़ते रहते हैं, दरारें फांदते रहते हैं। एक जगह ऊपर से पत्थर लुढ़के और इन दोनों जानवरों के पैरों में चोट आ गयी।"

मैंने उनके घाव देखकर साफ़ किये, उनपर पट्टी बांध दी। बकरियां थोड़ी लंगड़ाती, खुशी से मिमियाती, अपने रेवड़ में जा मिलीं। मेरे लिए करने को कुछ और नहीं रह गया था। मेरी समझ

में नहीं आ रहा था, अपने विचारों और निरंतर तंग करनेवाले विषाद से बचकर मैं कहां जाऊं। घोड़े को खोखे के पास छोड़कर पगडंडी के सहारे पहाड़ों की ओर चल पड़ा। मुझे आशा थी – पैदल चलने से ध्यान बंट जायेगा, नहीं तो कम-से-कम मैं थक ही जाऊंगा। रुके या पीछे मुड़के देखे बिना मैं चलता ही रहा, ऊपर ही ऊपर चढ़ता चला गया। मेरा कोई लक्ष्य नहीं था। धीरे-धीरे मैं थकने लगा। शायद काफ़ी ऊंचाई पर पहुंच गया था। मैं पत्थर पर बैठकर चारों ओर नज़र दौड़ाने लगा।

जब आदमी ऊंचे पहाड़ से दुनिया पर नजर डालता है, तो खुद भी ऊंचा उठ जाता है। वैसे तो आदमी वैसा ही रहता है जैसा कि पहाड़ की तलहटी में था, हां अगर रास्ते में उसे कोई कड़ी परीक्षा नहीं देनी पड़ी हो। लगता है, होता इसका बिलकुल विपरीत है, पहाड़ जितने ऊंचे और महान होते जाते हैं, मनुष्य उतना ही क्षुद्र लगने लगता है। पहाड़ साधारण क़द के मनुष्य को एक कीड़े से ज़्यादा नहीं समझते और वे चाहें तो उसे एक ही पत्थर से दबाकर कुचल सकते हैं। पर इसके साथ-साथ ये पहाड़ ही हैं जो मनुष्य को धरती से उठाकर बादलों तक, नीले आकाश तक ले जाते हैं, उसका हृदय माधुर्य से भर उठता है। मनुष्य जब इतनी ऊंचाई से अपनी चारों ओर की दुनिया को देखता है तो मानो स्वयं भी अधिक शक्तिशाली और ऊंचा हो उठता है।

पहाड़ों की अपनी पवित्रता, अपना गौरव है। उनकी अपनी विशेष आकृति भी होती है। और अपने ऊपर चढ़नेवाले क्षुद्र जीव से भी वे आकृति, गर्व और पवित्रता की आशा रखते हैं। मनुष्य न चाहते हुए भी आत्मनिरीक्षण करने लगता है, न चाहते हुए भी पवित्र और उच्च विचारों का होने लगता है या निरंतर पवित्र बनने का प्रयत्न करता है। पहाड़ मनुष्य को सिखाते हैं कि वह स्वाभिमानी बने, उसमें एक अद्‌भुत शक्ति भर देते हैं, वे उसकी इच्छा शक्ति और विचारों को केन्द्रित करने में उसकी सहायता करते हैं, उसकी आत्मा को स्पष्टता और बुद्धिमत्ता प्रदान करते हैं।

पत्थर पर बैठकर ऊंचे पहाड़ से दुनिया को देखते मुझको

महसूस होने लगा कि मैं आत्मविश्वास और शक्ति से भर रहा हूं। एक प्रकार के अद्‌भुत उत्साह से मेरा हृदय ओतप्रोत हो उठा, मैं समझ गया, यह जीवन की उमंग है, मुझे किसी का डर नहीं। मैं जीवित हूं, जवान हूं, स्वस्थ हूं। क्या यह ज़रूरी है कि मुझे अपने जीवन में आगे कठिनाइयां ही मिलें और अगर मिलें भी तो क्या?

कोई कारण नहीं कि मैं उनका सामना न कर सकूं? मेरे आगे सारी दुनिया पड़ी है, मुझे सब कुछ देखना, उनका आनंद लेना चाहिए, अपना सारा जीवन उन्हें अर्पित कर देना चाहिए। अगर मेरे आगे इतनी विशाल, भासमान दुनिया पड़ी है तो फिर मुझे दुख और पीड़ा भरी आंखों से उसे देखने की क्या ज़रूरत? मनुष्य अनजाने ही कटु विचारों और हृदय के विषाद का आदी हो जाता है। अगर वह उन्हें छूट दे दे तो वे उसे खोखला कर देंगे, मनुष्य कमज़ोर हो जायेगा। जीवन का प्रकाश उसके लिए धुंधला और क्षीण पड़ जायेगा, आत्मा की म्लानता उसे पराभूत कर देगी। नहीं, मुझे किसी भी तरह निराशा को अपने पास फटकने नहीं देना चाहिए। मैं अभी जीवन में तीन क़दम भी नहीं चला हूं और मुझे लग रहा है, मैं ठोकर खा गया हूं और लंबी यात्रा आरंभ करने से पहले ही हिचकिचा रहा हूं। अगर मैं पहले क़दम पर ही आराम करने लगूं तो क्या मैं ज़्यादा दूर जा सकूंगा?

पर आखिर किसलिए मुझे हरजामान के यहां ठहराया गया? मैं असरा से बहुत कुछ कहना चाहता था, पर एक शब्द भी नहीं कह पा रहा हूं। मेरे लिए सिर्फ़ अपने मन में, अपने खयालों में ही उससे बात करना बाक़ी रह गया है। यह सब इतना मुश्किल नहीं लगता अगर वह कहीं दूर रह रही होती। उसके साथ एक ही

छत के नीचे रहने और उससे कुछ कह पाने का साहस न होने से क्या फ़ायदा... कितनी बार मैंने अपनी कमज़ोरी पर काबू पाने की कोशिश की, कितनी बार मैंने अपने आप को गालियां दीं। और अब भी मैं बोले ही चला जा रहा हूँ। पर बात किससे कर रहा हूँ? सिर्फ़ हवा से। हवा से और इन पहाड़ों से। पर नहीं। बात यह है कि जब भी मैं बोलने लगता हूँ, अमरा मानो कोहरे से निकलकर मेरे सामने आ खड़ी होती है। वह मुस्कराती है, मेरी आंखों में झांकती है और संगीत से भी अधिक मधुर आवाज़ में पूछती है, "तुम कहाँ थे, अलोऊ? आखिर तुम जा क्यों रहे हो, तुम चुप क्यों हो? मत जाओ, अलोऊ, रुक जाओ, मैं जब तुम्हें नहीं देखती, बहुत उदास हो जाती हूँ। मैं तुम्हारे बिना जिंदा नहीं रह सकती।"

वह ये शब्द कहती है और हंसने लगती है। वह मेरी आंखों में झांककर उनकी गहराई तक पहुंचकर कुछ जानने की कोशिश करती है। और उसकी मुखमुद्रा बदलने लगती है। वह चिंतामग्न, दुखी लगने लगती है, मानो उसने जो कुछ मेरी आंखों में देखा, वह उसकी आशा के विपरीत था।

नहीं, मैं ऐसे और नहीं जी सकता। मैं जी रहा हूँ एक परछाईं की तरह। चाहे ये पहाड़ खड़ी दीवार बनकर मेरा रास्ता रोकें या मुझपर टूटकर गिर पड़ें पर किसी भी हालत में मुझे फ़ौरन उसके पास जाकर वह सब कुछ कह देना चाहिए, जो मैं चाहता हूँ। पर पहाड़ मेरा रास्ता नहीं रोक रहे और न ही वे मुझपर टूटकर गिर रहे हैं। इसके विपरीत उन्होंने मेरे पैरों तले अपने घास के मैदानों के गुदगुदे क़ालीन बिछा दिये हैं और इसके साथ-साथ मजबूत और टिकाऊ पगडंडी भी। मैं जल्दी से उतरकर खोखे के पास पहुंचता हूँ और लपककर घोड़े पर सवार हो गांव की ओर सरपट चल पड़ता हूँ।

मैं सरपट घोड़ा दौड़ाता नीचे इसलिए जा रहा हूँ कि अमरा को वह सब कुछ बता हूँ, जो मैं अपने दिल में छिपाये घूम रहा हूँ। पर कैसा लगेगा, अगर मैं दिन दहाड़े बिना किसी काम के,

बुद्धू-सा, सरपट घोड़ा दौड़ाता स्कूल के मैदान में जा पहुंचूँ, स्कूल में जा पहुंचूँ... अगर मैं यह सब कर सकता हूँ और अगर मैं इतना बहादुर हूँ, दृढ़निश्चयी हूँ तो मेरी यह दृढ़निश्चयता अब तक कहां थी? आखिर उसके साथ बातचीत करने के इससे भी ज़्यादा समुचित अवसर मुझे मिल चुके हैं। मैं अब अन्दाज़ लगा सकता हूँ कि जब अमरा मुझे देखेगी तो उसकी आंखें कैसी हो जायेंगी। मैं अपनी हरकत के बेतुकेपन को समझता हूँ, पर अब रुक नहीं पा रहा हूँ। लगता है, घोड़ा भी मेरी मनोदशा को समझकर पगला गया है और अब यूँ उड़ा जा रहा है मानो भेड़ियों से डर गया हो। अगर किसी ने इस समय मेरा रास्ता रोका, तो घोड़ा बिदक उठेगा, उसे कुचलकर कचूमर निकाल देगा। वह युयुत्सु की तरह तड़फड़ा रहा है, दांत पीस रहा है और मेरी धैर्यहीनता, मेरे पागलपन के वशीभूत सरपट दौड़ा जा रहा है। मैं महसूस कर रहा हूँ कि अब अगर मैं चाहूँ तो भी घोड़े को रोक नहीं पाऊंगा। चाहे कोई मेरा रास्ता रोके, चाहे मुझे पत्थर की ओट से गोली मारे, मैं घोड़े पर सरपट दौड़ता मर सकता हूँ, सारा खून बह जाने से मर सकता हूँ, घोड़े पर से मेरी लाश लुढ़ककर गिर सकती है, पर अब मैं रुक बिलकुल नहीं सकता।

मुख्य सड़क पर पहुंचते ही घोड़े ने मोड़ पर मुझे बिलकुल गिरा ही दिया था, उसकी चाल और ज़्यादा तेज़ हो गयी थी। यह बहुत अच्छी बात है कि दिन में हमारे गांव का कोई आदमी बेकार मटरगश्ती नहीं करता। नहीं तो वे मेरे बारे में, मेरे इस तरह सरपट घोड़ा दौड़ाने के बारे में न जाने क्या सोचते। शायद वे सोचते, मैं पगला गया हूँ। शायद मुझे कोई कनखियों से देख भी रहा हो पर मैं ख़ुद तो इधर-उधर देख ही नहीं रहा हूँ और ऐसे घोड़ा दौड़ाये जा रहा हूँ मानो उसे कोहरे में दौड़ा रहा हूँ।

जब मैं स्कूल के पास पहुंचा, दरवाज़े से बच्चे बाहर निकल रहे थे। वे इस तरह एक साथ निकल रहे थे, मानो दरवाज़े के पास इकट्ठे होकर मेरे सरपट घोड़ा दौड़ाते आने की प्रतीक्षा में हों। फिर वे मैदान की हरी-हरी घास पर इधर-उधर फैल गये। अमरा

उनके बीच में खड़ी है। मैं अब क्या करूँ। न मैं पीछे मुड़ सकता हूँ, न घोड़े को रोक सकता हूँ। बच्चे सड़क पर पहुंच चुके हैं, पर पागलों की तरह सरपट घोड़ा दौड़ाते घुड़सवार को देखते ही वे चीखते हुए दोनों तरफ़ भागने लगे। पता नहीं, वे मुझे देखकर हैरान रह गये या मेरी हंसी उड़ा रहे थे। मैं न तो कुछ देख रहा हूँ, न सुन रहा हूँ। मैं घोड़ा सरपट दौड़ाये जा रहा हूँ और मेरे पीछे धूल के बादल उड़ते जा रहे हैं।

अमरा शाम को घर पहुंचते ही पूछेगी, "तुम्हें, ऐसी कहां की जल्दी थी, अलोऊ? कौन-सी मुसीबत ने तुम्हें अंधा और बहरा बना दिया था? तुम कौन से जोश में आगे चलते चले गये?" तब मैं उसे क्या जवाब दूंगा? घोड़ा दौड़ाते-दौड़ाते मैं अपनी सारी बहादुरी भूल चुका था, गंवा बैठा था। मैं तीर की तरह घोड़ा दौड़ाता अमरा के पास से गुज़र गया। उसने मुझे जाते देखा। उस दिन हमने एक दूसरे से कुछ भी नहीं कहा।

छः

हरज़ामान के आंगन के किनारे, उसकी ज़मीन की हद पर बलूत का एक घना पेड़ है। उसकी जड़ें तने के पास से ज़मीन से बाहर निकली हुई हैं। मालूम पड़ता है, वे काफ़ी गांठदार और मज़बूत हैं। वे हर तरफ़ निकली हुई हैं। बलूत का तना और हर तरफ़ निकली, ज़मीन में गहरी धँसी जड़ें पथरीली ज़मीन में मज़बूती से गड़े हुए उकाब के पंजों-सी लगती हैं।

बलूत की छाया मखमल-सी काली है। बलूत के पीछे खड़ी, बाहर को निकली चट्टान से वह काले पर्दे की तरह लटकी दिखाई देती है। कई सदी पुराने इस विशाल बलूत की तलहटी से कुछ दूरी पर एक चश्मा फूट रहा है। यह सब ऐसा लगता है मानो ग्रेनाइट की चट्टान का पूरा भार इस भूगर्भीय जल पर गिर गया हो और इस बोझ से दम घुटने के कारण पानी एक छोटी-सी दरार खोजकर बाहर निकल आया हो। पानी की केवल पहली उछाल क्षुब्ध और विवशतापूर्ण लगती है। चश्मे का आगे का पूरा सफ़र खुशी-खुशी, मन्दगति से पूरा होता है। पत्थर से नीचे गिरते हुए उसने कटोरे जैसा बड़ा गड्ढा बना लिया है और इस समय उसके पथरीले किनारों से बाहर निकल बहने से पहले वह सूर्य के प्रकाश में जाज्वल्यमान हो अठखेलियां कर रहा है। चश्मे के ऊपर लटके चमचे की छाया पहाड़ी लोगों की नमदे से बनी टोपी की तरह गड्ढे के बीच में तैर रही है। पानी इतना स्वच्छ है कि अगर वह धूप में अठखेलियां नहीं कर रहा होता तो गड्ढे में पानी न होने का धोखा हो सकता था। फिर भी उसके आरपार देखने से गड्ढे के तल में बिखरे रंगबिरंगे कंकड़ और अधिक सुंदर दिखाई दे रहे हैं।

हरज़ामान बलूत के तले चश्मे के पास बैठा सुस्ता रहा है, चश्मे के पानी के समान स्वच्छ हवा का हल्का झोंका उसे शीतलता प्रदान कर रहा है। हरज़ामान भेड़ की खाल पर बलूत के कठोर तने का सहारा लिये बैठा है। यही वह ज़मीन है, जहां से इस पेड़, चश्मे और हरज़ामान की जीवनगाथा शुरू होती है। जीवन की यही तीन अभिव्यक्तियां हैं जिनका समागम इस कठोर, पथरीली ज़मीन पर हुआ है। यहीं इन तीनों ने पहली बार दुनिया देखी, यहीं चश्मे की पहली कलकल ध्वनि सुनाई दी थी, यहीं हरज़ामान के मुख से पहला शब्द फूटा था, यहीं इस बालक-बलूत के पत्तों की पहली सरसराहट सुनाई दी थी। यहीं, ज़मीन के इसी टुकड़े पर हरज़ामान ने डग भरना सीखा था। यहीं पत्थरों पर रुक-रुककर, गिरकर, उठकर उसने चलना सीखा था जिससे कि बाद में अपने

पूर्वजों के सुनहरे क़दमों पर चल सके। यहीं, अपने पिता, अपने बाबा की ज़मीन पर, उन लोगों की ज़मीन पर चलकर हरज़ामान ने नाम कमाया, प्रसिद्धि पायी जिनके पहले सुनहरे क़दम यहां पड़े थे। यहीं चूल्हे के समतल पत्थर जमाये गये थे, जहां पीढ़ी-दर-पीढ़ी उसके परिवार का चूल्हा जलता रहा है, जिसके ऊपर मकई के दलिया का धुएँ से काला पड़ा उनका देग चढ़ा रहता है। इस ज़मीन की हर दिशा में हरज़ामान के पूर्वजों द्वारा लगाये पेड़ों की जड़ें घुसी हैं। ज़मीन इन पेड़ों की जड़ों का आलिंगन करके उनका पोषण कर रही है। इस ज़मीन का उत्तरदायित्व अब हरज़ामान का है। मरते समय वह इसकी वसीयत अपने बच्चों के नाम लिख देगा जिससे उसके बाद वे उसकी रक्षा करें, उसे ज़्यादा सुंदर बनाकर बादवाली पीढ़ी को सौंप दें।

इसी ज़मीन में पैदा हुए अन्न से हरज़ामान ने पहली बार भोजन का स्पर्श और स्वाद पाया। इसमें संदेह नहीं कि दुनिया बहुत बड़ी है और सारी ज़मीन लोगों के लिए है। उसके सारे वन, पानी, पहाड़, समुद्र और नदियां भी। उसकी सारी बड़ी सड़कें और छोटी पगडंडियां भी। फिर भी, हर आदमी कहीं न कहीं पैदा हुआ है, यानी अनन्त आकाश के तले उसका ज़मीन का अपना टुकड़ा है और केवल उससे प्यार करते हुए ही वह बाक़ी सारी धरती को प्यार कर सकता है।

ऐसे लोग भी होते हैं जो सोचते हैं: जब तक हम ज़िंदा हैं, ज़मीन पर घूमेंगे, फिरेंगे, उसकी उदारता का लाभ उठायेंगे, खायेंगे, पियेंगे और जो कुछ हमें मिला है, उसे चारों दिशाओं में बिखेर देंगे। सब खा जायेंगे, सारा पहन डालेंगे, सब कुछ साफ़ करके निश्चिंत होकर क़ब्र में लेट जायेंगे। नहीं, हरज़ामान जन्म से ही कभी ऐसा स्वार्थी, लोभी और कंजूस नहीं रहा है जो सिर्फ़ अपने बारे में ही सोचे। हरज़ामान अपने से ज़्यादा उन लोगों के बारे में सोचता है, जो उसके बाद ज़िंदा रहेंगे। वह उन लोगों के साथ भी कंजूसी नहीं करता, जिनके साथ वह इस समय रह रहा है। किसी भी समय उसके घर पहुंचिये, हमेशा मेहमान की तरह

आपका सत्कार होगा, उसके यहां हमेशा आपके लिए रोटी का टुकड़ा और शराब का गिलास मिलेगा। यहां तक कि घर के पास से गुज़रनेवाले अपरिचित आदमी को भी वह अपने घर से बिना कुछ खिलाये-पिलाये नहीं जाने देगा। उसके लिए सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि चूल्हे की आग कभी ठंडी न हो। यह घर बना रहे। उसके पोते और आनेवाली हर पीढ़ी के बच्चे शोर मचाते हुए आंगन में भागते रहें। उसके बच्चे, उसके बच्चों के बच्चे, उसके बच्चों के बच्चों के बच्चे हमेशा इस ज़मीन के स्वामी बने रहें और उसके खानदान का कभी अंत न हो। आदमी स्वयं भी ज़मीन पर मेहमान की तरह ही होता है। वह आया है और चला जायेगा, पर उसका नाम रह जायेगा और नाम सिर्फ़ उसके काम के साथ ही रहेगा, जो उसने अपनी ज़िंदगी में किया हो।

हां, हरज़ामान को पूरा विश्वास है कि आदमी के मरने के बाद दुनिया में उसका नाम रह जायेगा। दूसरे लोग सोचते हैं कि उनके घर का आधार, उनकी रीढ़ की हड्डी – वह मुख्य शहतीर है जिस पर छत टिकी होती है; पर हरज़ामान सोचता है कि बलूत का मोटे से मोटा शहतीर भी तिनके की तरह टूट जायेगा अगर चूल्हे की ऊपर की छत को आदमी के नाम का सहारा नहीं होगा। और कोई उसके इस मत को नहीं बदल सकता। वह बेशक, जो ऐसा नहीं सोचता, उसकी बात बहुत धैर्य के साथ सुनेगा, पर वह मन-ही-मन हंसता रहेगा, अपने मत, ज़िंदगी की अपनी समझ पर डटा रहेगा। और उसकी समझ ऐसी ही है, जैसे यह पेड़ अपनी जड़ों के सहारे ज़मीन पर खड़ा हुआ है। जब तक वह खड़ा रहेगा, इस पेड़ को जो कि इसी जगह पर बढ़ रहा है, दूसरे पेड़ों के बीच

भी पहचाना जा सकेगा। अगर जमीन से पेड़ों की जड़ का सम्बंध टूट जाये, तो लोग आकर उसकी डालें, उसकी शिखा को काट डालेंगे और यह एक लट्ठा बन जायेगा। और लट्ठे बहुत होते हैं, वे सब एक जैसे लगते हैं। हरज़ामान आदमी को भी ऐसा ही समझता है। जब तक वह अपनी जमीन पर रहता है, अपने घर में रहता है, जब तक वह अपनी वंशवृद्धि करता रहता है, तब तक वह आदमी रहता है और उसका अपना नाम बना रहता है। अगर वह पेड़ के पत्ते की तरह गिर या उड़ जाता है, तो वह डाल से टूटे दूसरे पत्तों में मिलकर खो जायेगा। सारे पत्ते, जब उनकी संख्या बहुत होती है तो वे सब एक जैसे लगते हैं। ज़िंदगी की हवा उन्हें बिना छांटे मिला देती है।

हरज़ामान को जमींदार और व्यक्तिवादी समझा जा सकता है क्या। नहीं? नोवालूनिये में कोई ऐसा नहीं सोचेगा। दिल से वह हमेशा लोगों के – पड़ोसियों और गांववालों के साथ है। और फिर, कितने सालों से वह सामूहिक फ़ार्म के खेतों में काम कर रहा है, सामूहिक फ़ार्म के जानवरों को संभाल रहा है – सब सार्वजनिक हित के लिए ही तो।

बूढ़ा चाहे जहां कहीं भी या जिस किसी के लिए भी काम कर रहा हो, वह शाम को घर जरूर लौटेगा। केवल अपने बिस्तर में, अपनी छत के नीचे ही वह गहरी नींद सो सकेगा और सुबह तरोताज़ा होकर उठ सकेगा। अपने घर की हवा के बग़ैर उसका दम घुट जायेगा, अपने घर की रोज़मर्रा की सुखद चिंताओं के बग़ैर वह घुलने लगेगा।

उसके स्वर्गवासी पूर्वजों की आत्माएं कभी-कभी उससे मिलने आती हैं क्योंकि यहां की हर चीज घर के अंदर और बाहर उनकी याद दिलाती है। गांव के निचले हिस्सों के घरों के नजदीक रहना हरज़ामान के लिए कहीं अधिक सुविधाजनक होता, पर अगर अपने पूर्वजों द्वारा संचित सब कुछ छोड़कर वह किसी और नयी जगह चला जाता, तो सब कुछ धुएं की तरह बिखर जाता। आखिर उसके पूर्वज क्या इकट्ठा करके छोड़ गये हैं? अगर घर में दौलत

होती तो उसे नयी जगह ले जाया जा सकता था। अगर जमीन में धन गड़ा होता तो उसे खोदकर अपने साथ ले जाया जा सकता था। नहीं, उससे पहले की पीढ़ियां जमीन में दबी सम्पत्ति छोड़कर नहीं गयी हैं। वे छोड़ गयी हैं – अपने सुनहरे पदचिन्ह ...

हर पत्थर उनका रखा हुआ है, पेड़ उनका लगाया हुआ है, कीलें उनकी गाड़ी हुई हैं, घर के चूल्हे की आग उनकी जलाई हुई है। इस सब को हवा में उड़ा देने का मतलब क्या अपने आपको हवा में उड़ा देना नहीं है?

मिसाल के तौर पर यह चश्मा लीजिए जिसके पास बैठकर हरज़ामान रोज़ाना सुस्ताता है। जब बाबा ने उसे इस चश्मे का इतिहास सुनाया था, उस समय वह बच्चा ही था। उसके बाबा के कहे मुताबिक़ यहां बसनेवाला उनका सबसे पहला पूर्वज किसी दूर के चश्मे से पानी लाया करता था। बाद में उसने देखा कि एक जगह पत्थर से रिस-रिसकर पानी निकल रहा है। फिर उसने पत्थर को तोड़कर भूगर्भीय जल को स्वतन्त्र होने में सहायता दी, तभी से इस पत्थर में से यह पारदर्शक बर्फ़ीली धारा बह रही है। अब न वह आदमी, न उनके बारे में बतानेवाले बाबा ही रहे लेकिन इस पानी को पीनेवाले लोग अभी जिंदा हैं, उसकी कलकल ध्वनि, उसके सौन्दर्य का आनन्द ले रहे हैं। और सब जानते हैं कि इस जमीन पर पानी बहानेवाले बूढ़े अहवा का, पूर्वज अहवा का नाम भुलाया नहीं गया क्योंकि आज भी पत्थर से जीता-जागता पानी बह रहा है।

अगर हरज़ामान अपना घरबार छोड़कर यहां से चला जाये, अपना वंश नष्ट कर दे तो चश्मे का नाम भी फ़ौरन मिट जायेगा, वैसे ही जैसे हजारों दूसरे चश्मों के नाम मिट गये। हरज़ामान को याद है, कैसे उसके बाबा चश्मे की संभाल करते थे, जब वह रुक जाता था, उसकी सफ़ाई करते थे। हरज़ामान भी बिलकुल ऐसा ही करता है। हरज़ामान के बच्चों को भी बिलकुल यही करना चाहिए। यहां का जीवन इसी तरह चलते रहना चाहिए।

इज़ाबेल्ला अंगूर की क़लम हरज़ामान के बाबा ने यहां लगायी थी। हरज़ामान को अपने बाबा की अच्छी तरह याद है। उसे यह

भी याद है कि बाबा ने अंगूर की क़लम किस तरह लगायी थी। लगता है, इस बात के अभी कुछ ही दिन बीते हैं, जैसे कल की ही बात है, पर इन छोटी-सी क़लमों से अंगूर की लंबी और बल खाती बेलें निकल आयी हैं। दूसरे पेड़ों के तनों और शाखाओं से लिपटी वे उनकी ऊंची शिखाओं तक जा पहुंची हैं। उस बाबा को जन्नत नसीब हो जिसने अंगूर की ऐसी बढ़िया बेलें लगायीं।

बाड़ में लगे पत्थरों से लेकर अंगूर की बेलों तक – यहां की हर चीज़ उन सबके सम्मिलित परिश्रम का फल है जो मर चुके हैं और उनके भी जो इस समय जीवित हैं। हरज़ामान चाहता है कि लोग उसे भी वैसे ही याद करें, जैसे वह अपने बाबा को याद करता है। उसकी काफ़ी उम्र गुज़र चुकी है। उसे अब जीवन से किसी विशेष चीज़ की इच्छा नहीं रही है। पर अगर उससे अब कहा जाये कि यहां सब कुछ नष्ट हो जायेगा या उजड़ जायेगा तो शायद वह शाम तक भी जिंदा नहीं रहेगा। वह अगर क़ब्र में भी भी लेटा होगा तो भी करवटें बदलने, ताबूत के ढक्कन से अपना सिर फोड़ने लगेगा।

और कितनी यादें बसी हैं इस टेढ़े-मेढ़े बलूत के साथ! जब अहबा के पहले वंशज यहां आये थे, यह बलूत घास से अधिक ऊंचा नहीं था। लेकिन उन्होंने बलूत के पेड़ को पहचान लिया था और उसी समय उसके चारों ओर बाड़ लगा दी गयी थी जिससे जानवर इसे रौंद न पायें। बड़ा और मजबूत होकर ज़मीन में उसने अपनी उक़ाब के पंजों जैसी या शायद उससे भी मज़बूत जड़ें जमा लीं। तब से अब तक न जाने कितने ख़राब मौसम इसने देखे हैं। कितनी तेज़ हवाओं ने इसकी डालों को झंझोड़ा और झुकाया है। पर निर्बल और निरीह बाल-बलूत की जिन लोगों ने तब रक्षा की थी, बड़े होकर बलूत ने भी उनके विश्वास को निभाया। वह सैकड़ों सालों से अपनी घनी छाया के नीचे रहनेवाले अहबा किसान वंशजों के स्मारक की तरह खड़ा है... क्या इस बलूत को उसके भाग्य भरोसे अकेला छोड़ देने पर दुख नहीं होगा। बिना हरज़ामान और उसके परिवार के शायद वह भी दुख से सूख जायेगा, उसमें कीड़े

लग जायेंगे, दीमक उसे खोखला कर देगी, उसकी जड़ें सूख जायेंगी और वह ज़मीन में से ऐसे उखड़ जायेगा जैसे सड़ा और कीड़ा लगा दांत। नहीं, ऐसे दोस्त को अकेला छोड़नेवाला इस पाप से ज़्यादा देर नहीं बच पायेगा।

वृद्ध हरज़ामान का ज़िंदगी के बारे में यही नज़रिया है। पर क्या उसका बेटा अलीआस भी जिसे हरज़ामान के सपनों और विचारों को साकार करना है, ज़िंदगी के बारे में यही सोचता है? अलीआस के विचार और सपने बिलकुल दूसरे हैं। वे घर से, चश्मे से, बलूत से, फलती-फूलती "इज़ाबेल्ला" की बेलों से बहुत परे हैं। अलीआस घर ऐसे आता है, जैसे किसी होटल में रह रहा हो। खाकर सो जाता है और फिर अपने खेतों में, अपनी मशीनों के पास चला जाता है। यह सच है कि नोवाल्नियै में अलीआस को सब चाहते हैं। रोज़ाना वह कुछ न कुछ नया काम छेड़ता है, कोई न कोई आविष्कार करता है, अपने गांव की भलाई में लगा रहता है। पर देखकर ही पता चल जाता है, वह अपने घर का बिलकुल ख़याल नहीं रखता।

अमरा छात्र-छात्राओं में व्यस्त रहती है। यूं तो अलीआस से ज़्यादा उसे अपने घर और घर के काम से प्यार है लेकिन आख़िर लड़की ही तो है, जल्दी ही पर निकल आयेंगे और वह अपने घोंसले से उड़ जायेगी।

फाटक के चरमराने की आवाज़ आयी और अमरा तात्येई के साथ अंदर आ पहुंची। अमरा के हाथों में सदा उसके साथ रहनेवाली किताब और कॉपियां थीं। लड़का हाथ हिला रहा था, मानो मन में अपने क़दम गिन रहा हो। हरज़ामान को देखते ही वह भागकर उसके पास पहुंच गया। हरज़ामान के मन में जो विचार आ रहे थे, वे तुरंत ग़ायब हो गये। वृद्ध ऐसे खड़ा हो गया मानो अपने सम्मानित और प्रिय अतिथि का स्वागत कर रहा हो। लड़का भागकर हरज़ामान के गले लग गया।

"आ गया, मेरा बेटा। बैठ, थोड़ी देर मेरे पास बैठ।"

हरज़ामान बात करते-करते लड़के के सिर पर हाथ फेर रहा था। वह उसे सिर से लेकर पैर तक स्नेहभरी नज़रों से देख रहा था। और तात्येई उसके इस तरह देखने से सकुचा रहा था। वह ऐसे प्यार का आदी न था क्योंकि बिना बाबा और पिता के बड़ा हुआ था। बाबा उसके जन्म से पहले ही मर गये थे। पिता लड़ाई में मारे गये और मां प्रसव के समय मर गयी। तात्येई अपनी दादी के पास रहता है। अभी घर के दरवाज़े खोलने और बंद करनेवाला, चूल्हे को जलता रखनेवाला उसका कोई तो है। तात्येई और हरज़ामान के ख़ानदानों में बहुत नज़दीकी संबंध हैं। आख़िर तात्येई भी अब्ख़ा है। शायद किसी समय उनका वंश एक ही था और बाद में शाखाएं अलग हो गयीं। हरज़ामान तात्येई को बिलकुल अपने पोते के समान मानता है और उसे बहुत प्यार करता है। लड़के को भी अपने भले बाबा से लगाव है।

अमरा भी हरज़ामान के पास आ गयी। अपने पोते, पोती को देखकर हरज़ामान के दिल में इतना प्यार उमड़ आया कि उसके मुंह से शब्द ही नहीं निकल पा रहे थे। वह केवल प्यार भरी नज़रों से बच्चों को देखे जा रहा था। उसने उन्हें अपने दोनों ओर बैठाकर गले लगा लिया। लग रहा था, मानो वे उसके दो पंख हों जिनकी सहायता से वह समय के ऊपर विजय प्राप्त कर सकेगा। वे उसे धरती पर खड़ा होने के लिए मज़बूत सहारे से लग रहे थे। आख़िर तात्येई की ओर देखकर हरज़ामान बोला,

"मैं जानता हूं, तू क्यों आया है। जा, भागकर ऊपर जा, वह बैठक की दीवार पर टंगा है।"

तात्येई फ़ौरन ग़ायब हो गया और हाथों में दो तारों का अब्ख़ाज़ियाई बाजा अपख़िआरत्सा लेकर वापस आ गया। हरज़ामान ने गज़ से तारों को छुआ कि वे डर के मारे कांप उठे और एक व्याकुल, धीमा-सा स्वर निकल पड़ा। धीरे-धीरे स्वर ऊंचा और स्पष्ट होता गया, जब स्वर वांछित ऊंचाई तक पहुंच गया, हरज़ामान ने अपना स्वर उसके साथ मिलाकर गाना शुरू कर दिया। हरज़ामान का स्वर और तारों की झंकार मिलकर एक हो गये और एक सुंदर

लयबद्ध गीत के रूप में ऊपर उड़ चले। अमरा और तात्येई भी उसका साथ देने लगे।

गीत ऊंचाई से फिर संगीतकार की गोद में लौट आया और तारों की शांत हो रही मधुर झंकार के साथ शांत हो गया। वृद्ध ने अपख़िआरत्सा तात्येई की ओर बढ़ा दिया। लड़के से दो बार अनुरोध करने की ज़रूरत नहीं हुई। उसने फ़ौरन गाना और बजाना शुरू कर दिया।

तात्येई का गीत न हरज़ामान का जाना-पहचाना था, न अमरा का... गीत बड़ी सावधानी से गाया जा रहा था और उसके गायन में आत्मविश्वास की कमी झलक रही थी, मानो वह तारों के लिए भी नया ही हो। शायद नये गीत का पूरा साथ देने से पहले तार भी उसे ध्यान से सुन रहे हों। हरज़ामान को पुराने अब्ख़ाज़ियाई गीत बहुत पसंद थे। वह उन्हें जानता है, उनका आदी हो चुका है, वे उसके दिल को शांति प्रदान करते हैं। पर तात्येई का गीत भी उसे अच्छा लगा। तार गा रहे थे, गुनगुना रहे थे, बिलकुल वैसे ही जैसे भौंरा सिर के ऊपर मंडराता, ऊंचा उड़ता जाता है। इसके बावजूद हरज़ामान को लग रहा है जैसे कोई उससे अनजानी लेकिन मधुर भाषा में बात कर रहा है।

तात्येई ने किसी कविता संग्रह से किसी अब्ख़ाज़ियाई कवि का गीत चुनकर ख़ुद ही उसे संगीतबद्ध करके गाने की कोशिश की थी। उसने गीत की स्वर-लिपि नहीं लिखी थी। ख़ुद संगीत रचना करके याद कर लिया था। अमरा उसका साथ देने की कोशिश कर रही है पर धुन उसकी जानी-पहचानी न थी, इसलिए वह बीच-बीच में केवल अंदाज़ से साथ देती है और फिर चुप होकर सुनने लगती। वृद्ध हरज़ामान ने साथ गाने की कोशिश नहीं की। अंत में उसने पूछा,

"सुन, बेटा, मैं सारे अब्ख़ाज़ियाई गीत जानता हूं, पर इसे पहली बार सुन रहा हूं। तुम्हें यह कहां से मिला?"

तात्येई सकुचाने लगा, उसने शर्म से लाल होकर सिर झुका लिया। अमरा ने उसकी मदद की,

"बाबा, यह गीत तो तात्येई ने खुद लिखा है।"

"कैसे लिखा है? बनाकर खुद गीत भी भला कहीं लिखा जा सकता है?"

"क्यों नहीं... आखिर पुराने गीत भी तो किसी ने शुरू में लिखे ही थे। सिर्फ़ हमें यह मालूम नहीं कि किसने और कब लिखे।"

"तब फिर एक बार और गाकर सुना, मैं सुनूंगा।"

तात्येई ने बाजे की संगत में दुबारा गीत गाना शुरू कर दिया, पहले से भी ज्यादा ऊंची आवाज में, पहले से भी ज्यादा आत्मविश्वास के साथ। वृद्ध मुंह बाये सुन रहा था। उसके होंठ हिल रहे थे। लग रहा था, मानो थोड़ी देर में वह खुद गीत के पीछे-पीछे चलता उसे पकड़ लेगा और गाने लगेगा।

सात

तम्बाकू और मक्के के साफ़-सुथरे पौधे खेत में खड़े थे। हम दूसरी निराई पूरी कर चुके थे और अब सारी फ़सल हमारे सामने मौजूद थी। मक्का और तम्बाकू के पौधे सूरज की ओर तनकर खड़े थे मानो उसकी ओर उड़ने को तैयार हों।

तम्बाकू का विशाल खेत समुद्र के समान हिलोरें ले रहा था। काले रंग में नीली झाँईवाले तम्बाकू के पत्ते सूरज की गर्मी सोखकर अब पकने लगे थे... जल्दी ही हमने पके हुए पत्तों की पहली चुनाई शुरू कर दी। अमरा हमारे साथ पत्ते – दिपसारी – तोड़ रही थी। स्कूल से छुट्टी के बाद वह घर नहीं बैठ सकती। पाठ वह रात में

तैयार करती है। जब तक उस के कमरे की बत्ती नहीं बुझ जाती, मैं नहीं सोता।

अलीआस सारी जिंदगी तम्बाकू की खेती करता रहा है। तम्बाकू की खेती करनेवालों का काम हल्का करने के बारे में उसने बहुत कुछ सोचा है। वैज्ञानिक सहकर्मियों ने मिलकर समतल जमीन पर तम्बाकू रोपनेवाली मशीन तो बना ली है पर अलीआस के दिमाग में हमेशा उस मशीन का खयाल आता रहता है जो पत्ते भी चुन सके। किसी न किसी को ऐसी मशीन भी बनानी चाहिए। वह खुद तो आसमान से उतरनेवाली नहीं है।

क्यों न अलीआस खुद कोशिश करके देखे? इस के लिए प्रयोगशाला के दरवाजे बंद करके बैठना जरूरी नहीं। इस गाँव में ही जहाँ तम्बाकू पैदा किया जाता है, ऐसी मशीन बनाने के बारे में क्यों न सोचा जाये? अलीआस के दिमाग में यह विचार काफ़ी समय से है और उसे दिन-रात चैन नहीं लेने देता। भला उससे ज्यादा अच्छी तरह और कौन तम्बाकू की खेती के राजों को जान सकता है? और उसकी माध्यमिक शिक्षा भी उसके काम आ रही है। पर फिर भी इस काम में वह अपनी बेटी अमरा को अपना मुख्य सहायक मानता है। वह उसकी प्रेरणा है। जब वह अपने आविष्कार की जाँच करता है, जब उसकी नयी मशीन बेटी के इकट्ठे किये हुए पत्तों को पिरोती है तो अमरा हमेशा उसके पास खड़ी होती है और उसे लगता है कि बेटी की बुद्धि और ज्ञान उसकी भी मदद कर रहे हैं। जहाँ तक हरज़ामान का सवाल है, तो उसे केवल आश्चर्य होता है और उसे किसी तरह अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हो पाता कि एक मशीन भी आदमी की तरह समझदारी से काम कर सकती है।

मैं अमरा को तेज़ी और फुर्ती से पत्तियाँ तोड़ते हुए देख रहा हूँ। मालूम नहीं क्यों किसी और टुकड़े में काम करने के बजाय अगरा ब्लाव्वा अमरा के साथ इसी टुकड़े में काम कर रही है... उन के अलावा इस टुकड़े में कोई और मौजूद नहीं। साफ़ दिखाई दे रहा है कि अगरा का दिल काम में नहीं लग रहा, वह अमरा से पिछड़ती जा रही है। केवल शाम होने तक ही वह अपनी सहेली

के बराबर पहुंची और उस के पास आकर यों ही पूछने लगी,

"अमरा ?"

"क्या है ?"

"सुन, अमरा !"

"क्या ?"

"यह अलोऊ ... कैसा आदमी है ?"

"कौन अलोऊ ?"

"वह कुछ ..."

अमरा ने इसका कोई जवाब नहीं दिया।

अगरा ने इस डर से पत्ते तक तोड़ना छोड़ दिया कि अमरा का कोई शब्द सुनने से न चूक जाये, पर अमरा लगातार पत्ते ही तोड़े जा रही थी, जैसे भूल गयी हो कि उससे कुछ पूछा गया था। जाहिर था, अगरा का यह बात छेड़ना उसे अच्छा नहीं लगा था।

"इस ने यह बात छेड़ी किस कारण ?" अमरा ने मन में सोचा। "मक़सद क्या है इसका ?"

अगरा ने सहेली की चुप्पी का अर्थ अपने ही ढंग से लगाया। तो उसका शक सही था।

"वह कुछ घमंडी-सा, अलग-अलग रहनेवाला लगता है। जैसे उसे तम्बाकू के पत्तों के छू जाने से गंदा हो जाने का डर हो।"

"तू ऐसा क्यों सोचती है ?"

"भई तुझे तो ज्यादा ही मालूम होगा न।"

"अलोऊ ऐसा आदमी बिलकुल नहीं।"

"हाँ, हाँ जरूर होगा, तुझे ज्यादा मालूम होगा ... आखिर तुम लोग एक ही घर में तो रहते हो ..."

"हाँ, मैं उसे अच्छी तरह जानती हूँ।"

"क्यों नहीं, अगर मैं भी उसे इतनी अच्छी तरह जानती होती, तो भला तुझसे पूछती ही क्यों।"

"वह बहुत भला लड़का है।"

"मुझे तो पता नहीं, भई, पर अगर और लोगों की बातें सुने तो ..."

"लोग क्या कहते हैं ?"

"घमंडी है, अपने आप को ज्यादा समझता है, लड़कियों के ... क्या कहूँ, तू तो जानती ही है ..."

"क्या ?"

"कि वह ऐसा है ?"

"ऐसा ईर्ष्या से कहते हैं। अलोऊ साफ़ दिल का आदमी है।"

"मैं क्या जानूं। लोग कहते हैं।"

"कौन ?"

"बहुत से हैं ..."

"फिर भी ?"

"मैं क्यों लोगों को एक दूसरे के खिलाफ़ भड़काऊं ... मैं तो बस सच्ची बात जानना चाहती थी ..."

"पर यह सब तो झूठ है !"

"भई, तू ज्यादा जानती होगी ..."

अमरा दिप्पारी तोड़ती रही और काम छोड़े बग़ैर अगरा के साथ धीरे-धीरे बात भी करती रही। लेकिन जब अगरा पीछे ही पड़ गयी तो अमरा बड़ी मुश्किल से गुस्सा रोक पायी। "क्या है, यह सब ? 'तुझे ज्यादा मालूम होगा,' 'तुझे ज्यादा मालूम होगा'। यह मेरे पीछे क्यों पड़ गयी है ? किसलिए ? कौनसी बात है इस के दिमाग़ में ? अलोऊ के बारे में ये अफ़वाहें इसे कहाँ से मालूम पड़ीं ? इस का इरादा कुछ ठीक नहीं लगता। यह इस क़ाबिल नहीं कि इससे कोई वास्ता रखा जाये। यह मेरे सिर पर कहाँ से आ पड़ी ! अच्छा हो, मेरा पीछा छोड़े !" अमरा मन में सोच रही थी।

अमरा को गुस्सा होते देख अगरा ने चुप होकर कुछ देर प्रतीक्षा करने की सोची। वह जानती थी, इस तरह की बात एकाएक नहीं

छेड़नी चाहिए। धैर्य से काम लेना चाहिए लेकिन ज़्यादा देर दम लेने की फ़ुरसत भी नहीं देनी चाहिए। अमरा कुछ देर सोच ले कि अगरा उससे क्या कहनेवाली है।

"पराये दिल में क्या है, कोई क्या जाने," अगरा ने फिर सावधानी से बात छेड़ी।

"यह तू किस के बारे में कह रही है?"

"जाहिर है, अलोऊ के बारे में।"

"अब और क्या कहना चाहती है?"

"अगर मुझे मालूम होता..."

"अगर नहीं जानती, तो फिर ऐसा क्यों कहती है?"

"कहीं सूरत-शक्ल से आदमी को पहचाना जा सकता है?"

"तू मुझसे जानना क्या चाहती है?"

"यह अलोऊ कैसा आदमी है?"

"बहुत अच्छा आदमी है।"

"क्या तुझे मालूम नहीं?.."

"तू ही बता दे, तू क्या जानती है?"

"मैं? मैं तो तुझे बता ही चुकी हूँ।"

"झूठ है।"

"माना है, पर..."

"हाँ, हाँ, हाँ, सब झूठ है!" अमरा तनकर खड़ी हो गयी और दुबारा कड़े स्वर में बोली, "हाँ, झूठ है!"

अगरा चुप हो गयी और कनखियों से उसकी ओर देखने लगी। वह केवल उसके विचार ही नहीं, उसकी भावनाएं भी जानना चाहती थी। उसके दिल में संदेह पैदा करना चाहती थी और जब अमरा डाँवाडोल होने लगे तो उसे सब कुछ साफ़-साफ़ बता देना चाहती थी।

"देख, भई, तुझे तो ज़्यादा मालूम होना ही चाहिए," अगरा चापलूसी करती रही।

"हाँ, मुझे सब कुछ मालूम है," अमरा ने कड़े स्वर में कहा।

"अगर मुझे भी सब कुछ मालूम होता तो मैं संदेह ही नहीं करती।"

"तुझे संदेह काहे का है?"

"भगवान ही जाने, लोग उसके बारे में क्या-क्या कहते हैं।"

"जैसे?.."

"कहते हैं, वह बहुत-सी लड़कियों से खिलवाड़ कर चुका है।"

"किस-किस से?"

"देख, तेरी बात तो हो नहीं रही..."

"क्या?" अमरा के हाथ और उन में पकड़े पत्ते भी काँप उठे। यह बात उसे बुरी लगी थी पर उस ने ज़ाहिर नहीं होने दिया। अपना काम करती रही।

"कुछ और न सोचना तू... मैं तो ऐसे ही... तुझे अलोऊ अच्छा लगता है?"

"तू क्या कह रही है? तुझे यह किसने बताया?"

"किसी ने नहीं..."

"फिर?"

"मुझे ऐसा लगा।"

अमरा गुस्से से उबल पड़ी। वह चिल्लाकर अगरा को अपने से दूर भगा देना चाहती थी लेकिन ऐसा न करके थोड़ी देर चुप रहने के बाद बोली,

"तू ने यह सोचा कैसे?"

"इस में बुराई ही क्या है, अगर वह तुझे अच्छा लगता है... तू खुद ही कहती है, वह एक भला लड़का है..."

"देख, भई," अमरा ने सोच में डूबे हुए कहा, "भले लड़के तो कई हैं, क्या वे सब मुझे पसंद आने चाहिएं?"

"चाहे तू जो भी कह लेकिन क़िस्मत तेरी तेज़ है... लड़का खुद तेरे घर आ पहुंचा है। तू क्या उसे छोड़ देगी?"

"पर तुझे मालूम है, मैं लड़कों के पीछे पड़नेवाली नहीं," अमरा धीरे से हंस पड़ी।

"लड़की को अपनी क़िस्मत बनाने के लिए लड़ना चाहिए!"

"मुझे ऐसी कोई जरूरत नहीं।"

इस तरह, अगरा ने अमरा से वह सब मालूम कर लिया था जो वह उस से जानना चाहती थी। उसने अमरा की ओर कनखियों से देख कर एक ठंडी साँस ली। ऐसा लगा जैसे अब वह इन सारी बातों के छेड़ने के पीछे छुपे सही मक़सद को ज़ाहिर करनेवाली हो।

"बेशक, हर कोई जिंदगी को अपनी ही नज़रों से देखता है," अगरा ने फिर बात छेड़ी।

"हो सकता है।"

"बेशक। तू और अलोऊ कुछ-न-कुछ तो करोगे ही पर अल्दीज़ का क्या होगा?"

"और उसका होना क्या है?"

"आखिर वह मेरा भाई है, मुझे उसके लिए अफ़सोस होता है।"

"उसे क्या हुआ?"

"हुआ क्या? वह जला जा रहा है। सिर्फ़ अपनी आग वह तुझे नहीं लगा सका।"

"पर मुझसे इसका क्या वास्ता?"

"कैसे वास्ता नहीं? वह तुझे प्यार करता है। सुन, वह मरा जा रहा है, कितना प्यार करता है तुझे..."

अमरा खिलखिलाकर हंस पड़ी। एक पल के लिए वह अगरा से अलोऊ के बारे में सुनी हर बात भूल गयी।

"मुर्गी की जान जाये, खानेवाले को स्वाद न आये," अगरा दाँत पीसकर बोली।

"सुन, मैं अल्दीज़ पर नहीं हंस रही। बिलकुल नहीं। पर... मुझे लगा... मुझे लगता है, मेरी तेरी बात हंसने ही लायक़ थी।"

अमरा समझ गयी किस इरादे से इस लड़की ने बातों का यह उलझा हुआ जाल बुना था।

"अगर तुझे मालूम होता कि अल्दीज़ तुझे कितना चाहता है तो तूने उसकी हंसी नहीं उड़ायी होती।"

"तू भी कैसी है, अगरा, भला मुझमें ऐसा क्या है जो मैं

अल्दीज़ को पसंद आ सकूँ?" अमरा ने अगरा के बुने जाल में से सावधानीपूर्वक निकलने का फ़ैसला किया।

पर अगरा ने उसे फंसाने की अपनी कोशिश जारी रखी,

"तू अपनी क़ीमत अच्छी तरह जानती है। शायद तू उसे अपने लायक़ नहीं समझती? साफ़-साफ़ बता। अच्छा होगा, अगर तू साफ़-साफ़ बता दे।"

"मैं?"

"हाँ, तू।"

"अल्दीज़ मुझ जैसी सैकड़ों लड़कियों के क़ाबिल है।"

"तू उस की ज्यादा हंसी मत उड़ा..."

"मैं?"

"हाँ, हाँ, तू!"

अपनी रफ़्तार कम किये बिना अमरा तम्बाकू के पत्ते तोड़ती रही। जिस बात में उसे लपेटा गया था, वह उसे अनचाहे ही परेशान कर रही थी। अगरा क़तार में उसके पीछे चली आ रही थी। अमरा ने साफ़-साफ़, बिना किसी टालमटोल के बात करने का निश्चय किया जिससे कि उसे फिर न छेड़ा जाये।

"प्यारी अगरा, मेरा अल्दीज़ का मज़ाक़ उड़ाने का कोई इरादा नहीं। वह हमारे गाँव का सम्मानित आदमी है। आखिर उसी के बारे में तो कहते हैं कि वह यहाँ के सबसे अच्छे लड़कों में से एक है। जो सच्चा सुख वह चाहता है उसे ज़रूर मिलेगा। वह उसके क़ाबिल है। अगरा, बस यह जान ले कि मैं औरों की तरह बिलकुल नहीं हूँ।"

"ऐसा क्यों?"

"मैं खुद भी अपने आप को नहीं समझ पाती। मैं कुछ अजीब-सी हूँ। अल्दीज़ बहुत अच्छा लड़का है। डॉक्टर है। उसके लिए मैं ज़्यादा से ज़्यादा सुख की ही कामना करती हूँ। पर मैं... मैं खुद नहीं जानती, मुझे क्या चाहिए। मैं यह भी साफ़-साफ़ नहीं कह सकती कि अल्दीज़ जैसा अच्छा आदमी मुझे अभी तक नहीं मिला।

पर... मुझे अभी तक ऐसा आदमी नहीं मिला जो मुझे हर तरह से पसंद हो, जो मुझे अपने साथ लेकर चल सके और मैं भी सब कुछ भूलकर उस के पीछे-पीछे चल सकूँ। पर अगर तू मुझसे पूछे कि वह आदमी कैसा होना चाहिए तो शायद मैं जवाब न दे पाऊं। सच तो यह है कि मैं उसे कभी-कभी अपनी कल्पना में देखती हूँ, पर जैसे ही मैं उसके क़द, नाक-नक़्श, चेहरे को साकार करने की कोशिश करती हूँ, वह ग़ायब हो जाता है। पर अगर वह आदमी मेरे पास से गुज़रे तो मैं उसे फ़ौरन पहचान लूँगी। पर ऐसी मुलाक़ात अभी तक नहीं हुई। पर मैं जानती हूँ, मुझे पक्का विश्वास है, मुझे वह आदमी ज़रूर मिलेगा, जो मुझे पूरी तरह पसंद होगा।"

"अमरा ऽऽ, अमरा ऽऽ!"

लड़की ने सीधे खड़ा होकर उस ओर देखा, जहाँ से उसे आवाज़ दी जा रही थी। वह काफ़ी दूर तक देख सकती थी। तम्बाकू के खेत की ओर कोई भागा चला आ रहा था। अमरा बात अभी समझ भी नहीं पायी थी कि अगरा उसे भागकर आने वाले के पास पहुंचती दिखाई दी। अमरा उसके पीछे भागी। भागते-भागते जिस लड़के की साँस फूल गयी थी, उसे अमरा ने पहचान लिया, वह तात्येई था।

"क्या हुआ तात्येई? क्या हुआ?"

"देस... देस... उसे दिल का दौरा पड़ा है। देस की तबीयत ख़राब है।"

वे तीनों गाँव की ओर दौड़े। अमरा अपनी माँ को बहुत प्यार करती है। उसे मालूम है कि माँ का दिल बहुत कमज़ोर है। उसे अकसर दिल के दौरे पड़ते रहते हैं। पर इन दौरों से अमरा को हर बार इतना डर लगता है कि वह जहाँ भी हो फ़ौरन माँ के पास दौड़ती है। और देस अमरा को देखते ही फ़ौरन बेहतर महसूस करने लगती है। इस समय अमरा अपनी माँ की मदद करने के लिए पूरे ज़ोर से भाग रही है।

अचानक चौराहे पर उन्हें अल्दीज़ दिखाई दे गया। अमरा उसे फ़ौरन पहचान नहीं पायी। लेकिन उसने ख़ुद ही उन्हें आवाज़ दी।

"अगरा, अगरा!"

अगरा भाई को पहचान गयी।

"ठहरो, ठहरो, अल्दीज आ रहा है। सुनाई नहीं दिया?
हमें आवाज़ दे रहा है।"

तब कहीं अमरा ने अल्दीज को देखा। वह उसकी तरफ़ दौड़

"अल्दीज, अल्दीज़..."

"क्या हुआ, अमरा?"

"माँ..." अमरा बड़ी मुश्किल से साँस ले पायी।

अल्दीज़ भी उनके साथ अमरा के घर की ओर भागा। दे
पीली पड़ गयी थी, कमज़ोरी के मारे आँखें बंद किये बिस्तर प
लेटी हुई थी। उसने धीरे से अल्दीज़ को दर्दवाली जगह के बारे
बताया। अल्दीज़ ने बड़े ध्यान से उस की जाँच की फिर क़रीब
बैठकर नब्ज़ देखने लगा... धड़कन क्षीण किन्तु तीव्र थी। उसे
मलेरिया जैसी कंपकंपी भी आ रही थी। संयोग से अल्दीज़ के पास
ज़रूरी दवा थी। उसने मरीज़ को दवा पिलायी। धीरे-धीरे देस के
चेहरे पर लाली लौटने लगी। उसकी तबीयत सुधरने लगी।

भय से पीली पड़ी अमरा अपनी माँ के बिस्तर के पास खड़ी थी। उसे याद आया कि आज घर का कोई काम करने के लिए माँ घर पर ही रह गयी थी। शायद यह काम इतना भारी था, जिससे उसे दौरा पड़ गया। कितनी क़िस्मत की बात है जो तात्येई वहाँ था और वह अमरा को बुलाने के लिए भागा।

देस की तबीयत सुधर रही थी। उसने अपने बिस्तर के पास खड़े लोगों की ओर देखा फिर अल्दीज व अगरा को धन्यवाद दिया। बेटी का हाथ अपने हाथों में लेकर उसने उसे ढाढ़स बंधाया।

अल्दीज़ ने समझाया कि ख़तरा तो टल चुका है लेकिन अभी कुछ देर तक देस की देखभाल करनी होगी। इसलिए आज तो वह उनके घर में ही रुक जायेगा और बाद में जब तक देस अपने पैरों पर उठ खड़ी नहीं होती, वह रोज़ाना आता रहेगा।

बोलते समय अल्दीज़ देस का हाथ अपने हाथ में थामे रहा मानो अगर वह उसे छोड़ दे तो देस के दिल की धड़कन बन्द हो जायेगी।

जब माँ की तबीयत पहले से ठीक हुई, तब अमरा को भी कुछ होश आया। उसे अचानक आज की घटी इन सब घटनाओं के अजीब संयोग का ध्यान आया। अभी थोड़ी देर पहले अल्दीज़ के बारे में उस की बहन अगरा ने खेत में उस से बातें की थीं। अगरा की बातें उसे परेशान कर रही थीं, काँटों की नोकों की तरह उस के दिल में चुभ रही थीं। अल्दीज़ की मौजूदगी से उसे कुछ संकोच हो रहा था।

इस समय अल्दीज़ व्यस्त आदमी की मुद्रा में माँ के पास बैठा है। उसे देखकर साफ़ लग रहा है कि वह इस घटना से खुश है। अब वह हर रोज आयेगा, अमरा से मिलेगा। अगरा के साथ हुई बात के बाद अमरा यही सोच-सोचकर घबराने लगी।

आठ

देस का स्वास्थ्य सुधरता जा रहा था, लेकिन अल्दीज़ ने अभी तक उसे बिस्तर से उठने की मनाही कर रखी थी। अब वह रोज़ वृद्ध हरज़ामान के घर आता-जाता रहता था। वह रोज़ आता और काफ़ी देर तक बीमार के पास बैठा रहता, नब्ज देखता, दवाई देता, उससे बातें करता। शाम को वह देस के पास तब तक बैठा रहता जब तक उसे नींद नहीं आने लगती। धीरे-धीरे घर के सब लोग उसके आदी हो गये और लगता था, वह भी अपने को बाहर का आदमी महसूस नहीं करता था। शुरू में देस उसे केवल एक अच्छा और कर्तव्यपरायण डॉक्टर समझती रही पर बाद में उसने

देखा कि वह जवान और सुंदर लड़का है और गांव का ऐसा वर है, जिस पर सबकी निगाहें लगी हैं। ऐसा कैसे हुआ कि उसने अभी तक इतने अच्छे आदमी की ओर कोई ध्यान ही नहीं दिया था।

अल्दीज बहुत विनम्रता और सावधानी से पेश आता था। चाहे नजरों पर जैसे भी कसा जाये, उसके व्यवहार में बीमार की चिंता, उसे पैरों पर खड़ा कर देने की इच्छा के अलावा कुछ भी देख पाना असंभव था।

अमरा अल्दीज पर बराबर नजर रख रही थी। उसे इस बात का डर था कि अल्दीज पीछे पड़कर बात करने लगेगा लेकिन यहाँ तो माजरा ही दूसरा था। अल्दीज अमरा की ओर कोई ध्यान ही नहीं दे रहा था। तो फिर अगरा तम्बाकू के खेत में क्या बतिया रही थी? तो सारी बात उसकी गढ़ी हुई थी लेकिन क्यों? उसका उद्देश्य क्या था? उसकी उलझी बातों का मतलब क्या था?

देस की हालत सुधरती जा रही थी। अल्दीज पहले की तरह उसकी देखभाल कर रहा था और मां के दिमाग में कुछ विचार आने लगे। यह कैसे हुआ कि उसने इतने सुयोग्य वर की ओर ध्यान नहीं दिया। आखिर वह इसी गांव में रहता है, सबके सामने बड़ा हुआ है, यहीं के स्कूल में पढ़ा है, विद्यालय की पढ़ाई खत्म करने के बाद अपने गांव में डॉक्टर बनकर काम करने आया है। देस न जाने कितनी बार उससे मदद ले चुकी है। फिर यह कैसे हो गया कि अल्दीज़ की ओर उसका ध्यान ही नहीं गया। किसी आदमी को जानने के लिए कि वह दिल को छू जाये, कितनी बातें जानना जरूरी है। अगर अभी उसने ध्यान नहीं दिया तो वह गांव के सबसे सुयोग्य वर को लगभग खो ही देगी। वह सुंदर है, डॉक्टर है, ख्याल रखनेवाला और होशियार है। औरत को अपने सुख के लिए और क्या चाहिए। शुरू में यह विचार खसखस के दाने में से अंकुर की तरह फूटा। पर भगवान ने चाहा तो तना, पत्ते और भरा हुआ फूल भी निकल आयेंगे। हां, ऐसा अकसर होता है, जब बेटी को कुछ मालूम नहीं होता और मां को लड़का पसंद आ जाता है,

तो वह स्वयं ही अपनी बेटी के भाग्य का निर्णय करने लगती है।

देर-सबेर अमरा की शादी होनी ही है; अगर ऐसा ही है तो फिर अल्दीज़ से बेहतर वर ढूंढने की जरूरत ही क्या है? इसके अलावा ऐसा भी हो सकता है कि लड़की की शादी किसी दूर अनजानी जगह में हो जाये तो उससे मिलना भी मुश्किल हो जायेगा। और यहाँ अपने गांव में, मां की आंखों के सामने, बेटी शादी के बाद रहे और उसे जब जी चाहे देखा जा सके, यह तो बड़ी क़िस्मत की बात है। बहुत-सी अबखाज़ियाई मांएं तो सिर्फ़ इसे ही अपना सौभाग्य समझेंगी। इसके अलावा वह सुन्दर भी है और डॉक्टर भी। ऐसा कैसा हुआ कि उसने अल्दीज़ पर पहले ध्यान नहीं दिया? पर यह भी कितने आश्चर्य की बात है कि खुद अमरा का ध्यान भी अभी तक अल्दीज़ की ओर क्यों नहीं गया? और अगर उसने उसकी ओर ध्यान न दिया है तो इसका मतलब है कि वह उसे पसंद नहीं आया।

अगर पसंद होता तो मालूम पड़ जाता। मां के दिल से ऐसी बात छुपाई नहीं जा सकती। अमरा उन लड़कियों में से नहीं जिसे ऐसे आदमी को सौंप दिया जाये, जो उसे पसंद न हो। यही तो मुसीबत की बात है।

देस घर में चलने-फिरने लगी थी। खतरा टल चुका था। सब यही सोच रहे थे कि वे कगार पर खड़े हैं, पर संकट समाप्त हो चुका था और आगे पक्का, समतल रास्ता था। अलीआस, जिसने अपनी पत्नी की बीमारी के दिनों में अपनी मशीन का काम बंद कर दिया था, फिर पहले जैसे उत्साह से उसमें जुट गया।

लम्बे शेड में तम्बाकू के पत्ते पिरोनेवाली औरतें दो कतारों में बैठी हुई हैं। उनके हाथों में तम्बाकू के पत्ते पिरोने के लंबे और बराबर काम में आते रहने से काले पड़े हुए हैं। उनके पास तम्बाकू के पत्तों और मालाओं का ढेर लगा हुआ है। इसी शेड में एक छोटी-सी कोठरी है, जिसमें अलीआस अपने अवकाश का सारा समय बिताता है। वहीं वह स्वयं पत्ते पिरोने वाली मशीन बना रहा है, जो इस शेड में बैठे लोगों को इस काम से छुटकारा दिला दे। कुछ लोगों को अलीआस के धैर्य पर आश्चर्य होता है, कुछ हंसते

भी हैं। ज़रा सोचिये अलीआस ऐसी मशीन का आविष्कार करना चाहता है जिसे सुखूमी और त्बिलिसी के वैज्ञानिक कर्मी भी नहीं बना पाये! अलीआस जानता है, लोग उसके और उसकी मशीन के बारे में क्या सोचते हैं, पर वह अपने चेहरे पर शिकन भी नहीं पड़ने देता है, दुराग्रहपूर्वक सोचता है, फिर से बनाता है, जांचता है, तोड़ता है और फिर शुरू से काम करने लगता।

एक बार वह अपने काम में इतना खोया हुआ था कि कब इसकी वर्कशॉप में तीन आदमी घुस आये, उसे पता ही नहीं चला। उन में से एक सामूहिक फ़ार्म का अध्यक्ष था, जिससे अलीआस आज सुबह ही मिला था। दूसरे आदमी को भी उसने पहचान लिया था। वह अबखाज़िया का कृषिमंत्री था। अबखाज़िया इतना बड़ा देश तो है नहीं कि सामूहिक फ़ार्म का एक साधारण सदस्य अपने मंत्री का चेहरा देखकर न पहचाने। तीसरा आदमी अपरिचित था। पर तुरत अलीआस का उस तीसरे आदमी से परिचय करा दिया गया। वह जार्जिया का कृषिमंत्री था और त्बिलिसी से आया था।

"आपकी मशीन देखने चला आया," मंत्री ने सीधे सादे ढंग से कहा। "सुना बहुत था पर आप तो जानते ही हैं, सौ बार सुनने से एक बार देख लेना ज़्यादा अच्छा है... इसके साथ-साथ यह भी जानना चाहता था कि आपको किस तरह की सहायता चाहिए, हमारा मंत्रालय आपकी किस तरह सहायता कर सकता है।"

"आपको इसके बारे में मालूम कैसे हुआ? मैं तो पहले खुद ... क्योंकि हो सकता है, नतीजा कुछ भी न निकले।"

"निकलेगा। निकलना चाहिए। मुझे इसके बारे में अबखाज़ियाई

समाचारपत्र से मालूम हुआ। आपके गांव के किसी कृषि संवाददाता ने यह रहस्य खोल दिया।"

अलीआस एक ओर मंत्री के आने से खुश था तो दूसरी ओर उसके दिमाग़ में फ़ौरन ही एक और विचार भी कौंध उठा था: अब सब जान जायेंगे, इसका मतलब कुछ-न-कुछ नतीजा जरूर ही निकलना चाहिए। लेकिन कुछ भी नतीजा न निकले, यह सब बेकार का काम साबित हो जाये तो? ऐसा भी तो होता है कि किसी आदमी के हाथ में बंदूक हो, उसे सब हथियारबंद समझते हैं, पर बंदूक भरी न हो, खाली हो, तो वह लकड़ी से भी ज्यादा बेकार होगी। अलीआस बिलकुल भी नहीं चाहता था कि मशीन की खबर गाँव के बाहर किसी को मालूम हो। पर खबर बाहर ही नहीं, राजधानी तक पहुंच चुकी थी। मंत्री का आगमन कोई छोटी-मोटी बात तो है नहीं। अब क्या किया जाये? अगर यह सब बेकार साबित होता है तो बड़ी शर्म की बात होगी, मौत से भी बुरी।

सामूहिक फ़ार्म के अध्यक्ष, दोनों मंत्री, उनके साथ आये अन्य लोग काफ़ी देर तक अलीआस के आविष्कार को देखकर समझने की कोशिश करते रहे कि उसमें क्या कमी है। क्यों मशीन पत्तियों को रस्सी में पिरोने के बजाय उन्हें रोककर मोड़ देती है। पर कई दिनों के प्रयास के बावजूद जब अलीआस कारण पता लगाने में असफल रहा था तो इन लोगों को कैसे एकाएक मालूम हो जाता।

"हां भाई यह टेढ़ी खीर है," त्बिलीसी से आये मंत्री ने अंत में कहा और अपने साथ आये लोगों में से एक को मशीन का विस्तृत डिजाइन बनाने का आदेश दिया। अलीआस को समझाया, "तुम यहाँ अपना काम जारी रखो और हम अपनी तरफ़ से त्बिलिसी में काम करेंगे। हम मिल-जुलकर काम करेंगे। शायद इस तरह सफलता जल्दी मिल जाये। तुम्हारी मशीन की हमें सख्त जरूरत है।"

मंत्रियों ने बाक़ी समय शाम तक सामूहिक फ़ार्म का काम-काज देखने में गुजारा, मक्के के खेत और चरागाहों को देखा। शाम को हरजामान ने सबको अपने घर में दावत दी। शुरू में मेहमान निमंत्रण

अस्वीकार करते रहे पर फिर अबखाजियाई रीति-रिवाजों का खयाल करके उन्होंने आना स्वीकार कर लिया।

मेहमान से किसी चीज को छुपाने से कभी कोई फ़ायदा नहीं होता। इसलिए हरजामान ने बहुत शानदार दावत दी। इस मौक़े पर उसने बकरी काटी, खून जैसे लाल रंग के अंगूर "इज्ज़ाबेला" से बनी शराब का ढोल खोला और गांववालों को भी खाने पर बुलाया। मंत्रियों का अतिथि-सत्कार करते हुए किसान लोगों ने, रात देर गये तक दावत उड़ायी। फिर अपने रिवाज के अनुसार उन लोगों के बिस्तर भी इसी घर में लगाये गये।

अमरा हमेशा की तरह स्कूल जा चुकी थी। अपने कमरे का दरवाजा वह कभी बंद नहीं करती थी, बस उसे थोड़ा-सा भिड़काकर छोड़ जाती थी। वहां से गुजरते वक़्त हर बार मैं कनखियों से सुंदरी अमरा के कमरे में झांक लेता था, जो मेरे लिए पावन था पर जिसमें मेरे लिए जाना निषिद्ध था। मैंने एक बार भी इस कमरे की देहरी नहीं लांघी पर हर बार न चाहते हुए भी कनखियों से देख लेता हूं। अगर उसके पास से गुजर रहा हूं, दरवाजा थोड़ा-सा खुला हो और उसके अंदर कोई न हो तो देखे बिना रहा भी कैसे जा सकता है।

आज सुबह दरवाजा पूरा खुला था। अमरा घर में नहीं थी, पर हर चीज से अमरा की खुशबू आ रही थी। कमरा कितना साफ़-सुथरा है, हर चीज, हर किताब क़रीने से रखी है – इन सब से अमरा के काम करने का खास ढंग महसूस होता है। मैं लोभ को संवरण नहीं कर सका और चोरों की तरह देहरी लांघ गया।

वहां कोने में आलमारी रखी है। उसमें अमरा के कपड़े टंगे हैं जिन्हें पहनकर वह बहुत आकर्षक लगती है और जो उसके बदन से चिपके-लिपटे रहते हैं। कमरे के बीच में एक छोटी गोल मेज रखी है। उसके पास बैठकर लिखा जा सकता है, किताब पढ़ी जा सकती है और जरूरत पड़ने पर उस पर ज्यादा नहीं तो कम-से-कम दो लोगों का खाना लगाया जा सकता है। दीवार के पास चारपाई के नजदीक रखी जानेवाली छोटी-सी आलमारी है, जिस पर शीशा

रखा है। छोटी आलमारी के नजदीक शीशे के सामने एक गद्दीदार छोटी आरामकुर्सी रखी है। चारपाई के सिरहाने एक कुर्सी रखी है। उस पर अमरा रोज़ शाम को अपनी सोने की घड़ी उतारकर रखती है। मैं बिस्तर पर निगाह न डालने की कोशिश कर रहा था, पर फिर भी न चाहते हुए देख लिया कि वह कितना सादा, कितने सलीके से लगाया गया है। कमरे में कोई भी चीज फ़ालतू नहीं। हर चीज़ अपनी जगह पर रखी है जिससे पता चलता है कि स्वामिनी इस मामले में कितनी सख्ती बरतती है, सलीके से रहना, उसे कितना पसंद है। शायद शीशे के फ़्रेम के दोनों कोनों में लगायी फ़ोटो ही ग़ैरज़रूरी हैं। यह देखने के लिए मैं उनके और क़रीब आ गया कि अमरा किसे हमेशा अपनी आंखों के सामने रखती है, बत्ती बुझाते समय किससे विदा लेती है, सुबह शीशे के सामने बाल बनाते समय किससे नमस्ते करती है। यहाँ, जैसा दिख रहा था, उसके साथ पढ़नेवाली सहेलियों और दोस्तों की कई फ़ोटो थे। पर मैं यह क्या देख रहा हूँ! सबसे ऊपर एक ओर अमरा की तसवीर है, दूसरी ओर मेरी। एक ही ऊंचाई से हम एक-दूसरे की ओर देख रहे हैं और हमारे बीच में, एक झील की तरह हमें अलग किये हुए चौड़ा और साफ़ शीशा है। अमरा की इच्छानुसार हम अलग-अलग किनारों पर खड़े थे, पर एक-दूसरे की ओर देख रहे थे। सुबह से रात तक, हर दिन, हर रात मैं उसे देखता रहता हूँ, वह मुझे।

हालांकि इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि अमरा के पास मेरा फ़ोटो है। मैं जब इन लोगों के घर आया था, मैंने अपनी छोटी तसवीर इन्हें भेंट की थी। मैंने इसे परिवार के किसी सदस्य विशेष को नहीं बल्कि सारे परिवार को भेंट किया था। हरज़ामान और अलीआस ने इसे उलट-पलटकर देखने के बाद रखने के लिये अमरा को दे दिया था। अमरा ने उसे ले जाकर शीशे के फ़्रेम में लगा दिया। पर क्या संयोगवश ही हम एक-दूसरे के आमने-सामने हो गये हैं, क्या अमरा के पास कोई एलबम नहीं, जिसमें वह दूसरी तसवीरें लगाती हो। यह रहा, वह एलबम जो यहीं छोटी आलमारी पर रखा हुआ है।

मैंने चुपके से उसे उठाकर खोला। उसमें बहुत से फ़ोटो थे। फिर वही उसके साथ पढ़े दोस्त, रिश्तेदार और वह खुद भिन्न-भिन्न मुद्राओं में भिन्न-भिन्न आयु में। एक तसवीर मुझे बहुत अच्छी लगी। मैं एलबम बन्द कर नहीं रख सका और न ही उस पर से नजर हटा पाया। बिना यह सोचे कि मैं क्या कर रहा हूँ मैंने एलबम में से फ़ोटो निकाल लिया। एलबम बन्द कर उसी जगह पर रख दिया। अमरा, सुन्दर तरुणी अमरा तसवीर में से मुझे देख रही थी। लगता था, वह अब या तब मुस्करा पड़ेगी, कुछ प्यार भरे शब्द बोल उठेगी। एक अनजानी खुशी ने मुझे पागल कर दिया। अब मैं जितना जी चाहे, जितनी बार जी चाहे, जब चाहे अमरा को देख सकूंगा। अब वह न तो मुंह मोड़ सकेगी न ही त्यौरी चढ़ा सकेगी। उसका साफ़-सुथरा माथा, उसकी भौंहें, उसकी आँखें, उसके होंठ सब अब केवल मेरे लिए है। मैंने महसूस किया कि तसवीर एलबम में वापस रखने की ताक़त मुझ में नहीं। आखिर ऐसा क्यों? कभी किसी ने मुझ पर चोरी का इलज़ाम नहीं लगाया। अगर मेरा हाथ कोई परायी चीज उठाये, चाहे एक बटन भी, तो मैं उसे काट देता, नहीं तो चबा डालता। फिर यह क्या? मैं ऐसा काम क्यों कर रहा हूँ, जिससे मुझे लोग आज से चोर कहने लगें? लेता हूँ, तो इसका मतलब है–चुरा रहा हूँ। नहीं लिया, तो इसका मतलब है, वह मेरे पास नहीं रहेगी, मैं उसे देख नहीं पाऊंगा... मैं निश्चयपूर्वक तसवीर अपनी जेब में रख लेता हूँ और जल्दी से कमरे से बाहर निकल जाता हूँ। दरवाज़ा मैं खुला छोड़ देता हूँ और इस तरह मैं सब चीज़ें उसी हालत में छोड़कर, जैसी वे थीं, इस तरह चोरोंवाली चाल यहाँ भी काम में ले रहा हूँ। बालकनी से विशाल और अनन्त दुनिया दिखाई दे रही है। लोगो, मुझे पकड़ो, मुझे रोको, मैंने चोरी की है। मैं थोड़ी देर पहले पराये कमरे में घुसा था और परायी चीज़ों को उलट-पुलट रहा था। मुझे पकड़ो, मैंने चोरी की है। पर मैं सोचता हूँ, आप लोग मेरी मजबूरी समझकर मुझे माफ़ कर देंगे क्योंकि मैंने अपनी प्रियतमा की तसवीर चुराई है। मैं उसे चुराये बग़ैर नहीं रह सकता था,

क्योंकि ज़ाहिर है, मैं उसके बग़ैर ज़िंदा नहीं रह सकता। मैं कुछ देर बालकनी में, फिर सीढ़ियों में किंकर्तव्यविमूढ़ खड़ा रहा और वास्तव में चोरों की तरह आँगन से होकर भाग निकला।

मेरे मन में लड्डू फूटते रहे। मैं मन ही मन अमरा को लाखों बार समझा चुका, प्यार का इज़हार कर चुका लेकिन उसे पता ही नहीं चला।

अगर मैं अमरा के पास बैठकर उसे सब कुछ बता दूँ, अपना दिल खोलकर दिखा दूं, तो क्या वह मुझे समझ नहीं पायेगी? वह नासमझ तो है नहीं, उसे समझना चाहिए। शायद वह ख़ुद अर्से से प्रतीक्षा में हो कि मैं ही उससे कुछ कहूं। शायद वह मेरी अनिश्चितता पर नाराज़ हो रही है। आख़िर मुझे तब तक तो इंतज़ार करना नहीं चाहिए जब तक कि अमरा स्वयं पहले अपनी ओर से विवाह का प्रस्ताव करे।

काश, मैं जान पाता उसके दिल में क्या है और मेरी बात उसे कैसी लगेगी। मान लिया जाये कि मैं उसे सब कुछ बता दूँ, दिल खोलकर रख दूँ, वह बहाना करेगी कि उसने मेरी बात सुनी ही नहीं, मुझे इन्कार कर देगी। तब मैं कैसे जिऊंगा, उसके इन्कार करने का ग़म कैसे सहूंगा। नहीं ऐसे अंधेरे और दुविधा में घुलने से सारी सचाई जान लेना कहीं ज़्यादा अच्छा है। पर मुझे क्यों हरजामान के घर में ठहराया गया है?

एक बार जब अल्दीज़ देस से उसके स्वास्थ्य के बारे में पूछ रहा था, अमरा कमरे में आयी। देस एकदम जल्दबाज़ी करने लगी। रसोई में जाने से पहले उसने बेटी से कहा,

"बेटी, मेहमान के पास बैठ, बुरा लगता है, अगर वह हमारे घर में ऊबने लगे।"

अल्दीज़ देस की चाल फ़ौरन समझ गया। इसका मतलब है, मां उसके अमरा के नज़दीक आने के ख़िलाफ़ नहीं है बल्कि वह उन्हें नज़दीक भी ला रही है, उसका रास्ता साफ़ कर रही है। नहीं, हालांकि अन्तिम निर्णय तो अमरा के हाथों में है, पर फिर भी

बहुत कुछ अल्दीज़ की होशियारी पर भी निर्भर करता है। अमरा जैसी लड़की का दिल बिना कुछ सोचे-समझे जीत नहीं लिया जा सकता। पर वे आखिर पहली बार तो मिल नहीं रहे हैं। देस की बीमारी के दौरान अल्दीज़ इस घर का आदमी बन चुका है। देस ने जवान लोगों को अकेले में छोड़कर बिलकुल ठीक किया। अगर अल्दीज़ अमरा से पहले बात कर लेता, तो जल्दबाज़ी होती। अगर वह झिझकेगा, तो देर हो जायेगी। अल्दीज़ यह समझता था और अमरा मां के कहने पर मेहमान से बात करने की जल्दी में नहीं थी बल्कि वह भी इस महत्वपूर्ण बातचीत की प्रतीक्षा में थी।

अल्दीज़ सबसे कठिन प्रथम शब्द की तलाश में था। वह शब्द संगीत में लय के समान विश्वसनीय होना चाहिए, तभी सारा संगीत ठीक लगेगा। पहले शब्द पर ही निर्भर करता है कि लड़की का दिल बात करने को मचलता है या उत्साहहीन रह-ता है। पहला शब्द दिल की गहराइयों में से पंख लगाये उड़ता हुआ निकलना चाहिए तभी उसके पीछे-पीछे अन्य शब्द भी उड़ने लगेंगे। पर वह पहला शब्द ही तो इस संज्ञाशून्य ज़बान से निकल नहीं पा रहा है, उसे सूखे गले में से किसी तरह बाहर लाना संभव नहीं हो रहा।

अल्दीज़ ज़मीन पर आ गिरी मछली की तरह हांफ रहा था। वह चुप बैठा तड़पता रहा। ज्यों-ज्यों तड़पन बढ़ती जाती उसके लिए बात शुरू करना उतना ही ज़्यादा कठिन होता जा रहा था। इस बीच अमरा उसकी इस चुप्पी से और भी ज़्यादा चौकन्नी हो ऊहापोह में पड़ गयी थी।

लेकिन अल्दीज़ दृढ़निश्चयी पुरुष निकला। उसके मुंह से पहला शब्द निकला और उसका स्वर आचान्दूर * के उस तार सा था जिसे किसी बेहुनर ने ज़रूरत से ज़्यादा खींच और तान दिया हो। पहला शब्द जो उसके मुंह से निकला, वह था – अमरा।

"अमरा," आवश्यक शब्द मिल जाने से मिली राहत के साथ

* आचान्दूर – एक तरह का अबख़ाज़ियाई वाद्ययंत्र।

अल्दीज़ ने कहा : थोड़ी देर चुप रहने के बाद उसने एक बार फिर दोहराया, "अमरा!"

जवाब में अमरा की आश्चर्यभरी आंखों के ऊपर काली भौंहें पूछने के अन्दाज में फैल गयीं।

"मैं सुन रही हूँ।"

"मालूम नहीं, बात कैसे शुरू करूँ। मुझे शुरू करते ही डर लग रहा है कि आज तक मैं ऐसा बोझ दिल में लिये घूम रहा हूँ, जो मेरे लिए अनजाना है। मैं अपनी भावना संजोये रखे था, किसी को उसके बारे में नहीं बताया, मैं उसे खोना नहीं चाहता। मेरे हाथ-पैर क्यों काम करते हैं, मेरा दिल क्यों धड़कता है, मेरी आंखें प्रकाश क्यों देख रही हैं? सिर्फ इसीलिए कि, अमरा, तुम इस धरती पर रहती हो। सब तुम्हारी बदौलत है... सिर्फ़ तुम्हारे ऊपर सब निर्भर है... मैं बेशक तुम्हारे योग्य नहीं पर अगर मैं तुम्हें बेढंगा और बदसूरत नहीं लगता, लोगों के सामने मेरे साथ निकलने में तुम्हें शर्म न आये, अगर मेरी सूरत-शक्ल से तुम्हारा अपमान न हो, तो चलो हम जीवनसाथी बन जायें। मैं तुम्हारा दोस्त बनना चाहता हूँ।"

अल्दीज़ मौन बैठा जो कुछ सोच रहा था, वे शब्द एक के बाद एक लगातार उसके मुंह से निकलते जा रहे थे। तो भी उसने खुद पर काफ़ी नियंत्रण रखा था, जो भी शब्द उसके मुंह से निकल रहे थे, वे संयोगवश नहीं बल्कि परस्पर पूरक बनकर वे एक-दूसरे को प्रभावशाली बना रहे थे। लगता था, अमरा ने अल्दीज़ को कई बार टोकने की कोशिश की पर वह असफल रही। वह वाक-पटु "कलाकार" को टोकने के लिए मुंह खोलती, पर फिर अपने होंठ भींचकर सुनने लग जाती।

बाहर से तो अमरा शांत दिखाई दे रही थी लेकिन जिस कठिनतम परिस्थिति में अल्दीज़ के शब्द उसे धकेले जा रहे थे, उससे बच निकलने का रास्ता खोजने के लिए उसके दिल में तूफ़ान मचा हुआ था। शायद नाराज होने का बहाना ठीक रहेगा कि अल्दीज को अपनी तुलना उससे करने की हिम्मत कैसे हुई?

पर किसलिए? वह वास्तव में निर्लज्ज नहीं, बदसूरत नहीं, गांव का सबसे सुंदर लड़का है। बस वह उस के लिए सुंदर नहीं लेकिन दूसरी लड़कियों के लिए तो है। उसमें कोई दोष, ढूंढे नहीं मिल रहा था। वह कोई बुरी या अनुचित बात नहीं कह रहा। उससे कैसे कहे कि वह कभी उसकी मित्र नहीं बन सकेगी, उसके साथ अपनी जीवनडोर नहीं बांध सकेगी? उसने कैसे यह अनावश्यक और बेतुकी बात शुरू कर दी? वह उससे दोस्ती करने के लिए तैयार है। वह उसकी मुंहबोली बहन बनने के लिए तैयार है। वह अपनी दोस्ती को जीवन भर बेदाग रख सकती है पर उसकी पत्नी नहीं बन सकती।

ऐसा क्यों? अमरा स्वयं भी इस सवाल का जवाब नहीं दे पाती। कोई ऐसा कारण नहीं, जिससे वह इतने नेक आदमी से विवाह करने को तैयार न हो। फिर भी अमरा जानती और महसूस करती है, वह न तो उसे कोई आशा दिलाना चाहती है, न दे सकती है। यह सब वह किस तरह कहे कि अल्दीज को बुरा न लगे। उसकी कोई ग़लती नहीं और उसे नाराज़ करना उचित नहीं होगा। अमरा नहीं चाहती, अल्दीज बुरा मानकर बुरा व्यवहार करने लगे। किसलिए?

आखिर अमरा ने उचित अवसर पाकर बोलने का मौक़ा ढूंढ ही लिया। वह शांत स्वर में बोल रही थी मानो कक्षा में ग़लती करनेवाले किसी छात्र से बात कर रही हो, जैसे कई बार उसके सामने विवाह का प्रस्ताव रखा गया हो और वह उन सब का एक ही तरह का जवाब देना सीख गयी हो।

"बस, अल्दीज, बस। मैं समझ गयी, तुम्हारी बात का मतलब क्या है। मैं कभी सोच भी नहीं सकती थी कि तुम मुझे अपने बराबर समझोगे। क्या मैं ऐसा सोच सकती हूँ? तुम्हें मुझ में ऐसा कौन-सा गुण दिखाई दिया? मैं एक उच्छृंखल, चंचल लड़की हूँ, तुम एक बुद्धिमान आदमी हो, डॉक्टर हो, सुयोग्य वर हो। क्या मैं तुम्हारे योग्य हूँ? और फिर मैं विवाह के बारे में अभी कुछ सोचना भी नहीं चाहती। अभी बहुत जल्दी है और मुझे

फ़ुरसत भी नहीं, मुझे अपने स्कूल की फ़िक है। मैं नहीं चाहती कि मेरे शब्द तुम्हें बुरा लगें..."

"ठीक है अभी न सही। पर क्या मैं भविष्य में कुछ आशा रख सकता हूँ? तुम जितनी देर चाहो, मैं इंतज़ार करूंगा। चलो, हम अपनी इस बात को दो साल बाद छेड़ेंगे। मैं इंतज़ार करने के लिए तैयार हूँ। मैं हर बात के लिए तैयार हूँ, पर कम-से-कम कोई उम्मीद तो होनी चाहिए।"

"नहीं, अल्दीज़... आखिर किसलिए... बेकार होगा। मैं तुम्हें कोई उम्मीद नहीं दिला सकती। इसकी ज़रूरत नहीं। हम लड़ेंगे नहीं।"

"इसका मतलब है, तुम मुझे साफ़ इन्कार कर रही हो," अल्दीज़ गुस्से में आते हुए बोला। "तुमने पूरी तरह सोच लिया? यानी यह तुम्हारा आखिरी फ़ैसला है? क्या ये तुम्हारे अन्तिम शब्द हैं?"

"यही समझो।"

अल्दीज़ ऐसे उचका जैसे कुर्सी से धक्का दे दिया गया हो। उबाल खाते गुस्से पर नियंत्रण कर वह नम्र और विनीत स्वर में बोला,

"अमरा, मुझे माफ़ करना, मैं खुद नहीं जानता, मुझे क्या हुआ है? यह मेरी बदक़िस्मती है। पर मैं इसे सह नहीं सकता, तुम्हारे बिना जी नहीं सकता। मैं जो कुछ कह रहा हूँ, वे खोखले शब्द नहीं। वास्तव में मैं यह सह नहीं सकूंगा, तुम खुद देख लेना!"

"यह तुम क्या कह रहे हो, अल्दीज़। तुम बच्चे नहीं हो। तुम सह कैसे नहीं पाओगे? हमें अब इस उलझन में और ज़्यादा नहीं उलझना चाहिए। हमें यही जताना है कि ऐसी कोई बात हुई ही नहीं थी। हमें इसे भुला देना चाहिए और हम अच्छे दोस्त बने रहेंगे।"

"पर क्यों!"

"यह ज़्यादा अच्छा होगा, अल्दीज़, मैं जानती हूँ।"

"पर क्यों, अमरा, क्यों? तुम कुछ नहीं जानतीं!"

"नहीं, नहीं, हम यही जतायेंगे कि कोई ऐसी बात हुई ही

नहीं। तुम्हें मंज़ूर है? यह तय रहा?"

"पर क्यों?" अल्दीज़ अपने "क्यों" की रट लगाये हुए था जैसे बाक़ी शब्द भूल गया हो।

"शर्म आनी चाहिए, अल्दीज़, चिल्लाओ मत, तुम बच्चे नहीं हो। कोई सुन लेगा। मैं तुम्हें अपना भाई मानती हूँ और तुम मुझसे शादी का प्रस्ताव कर रहे हो।"

ओह, हमारे ये अबखाज़ियाई रीति-रिवाज! अगर इस समय कोई उड़ती गोली अल्दीज़ को लग जाती, तो भी शायद वह इतने भयावह दर्द से नहीं कराहता। पुराने रीति-रिवाजों का यह एक पवित्र शब्द आदमी के हाथ-पैर बांध देने के लिए काफ़ी है। अमरा अल्दीज़ की मुंहबोली बहन बन गयी। यानी अल्दीज़ ने कभी उससे प्यार की बात कहने की भी सोची तो वह उतनी ही अपमानजनक होगी जैसे कि वह यह बात वास्तव में अपनी बहन, अपनी सगी बहन से कर रहा हो। अब अगर अल्दीज़ सम्मानित आदमी बना रहना चाहता है, जिसकी आत्मा निष्कलंक हो तो उसे अमरा से सिर्फ़ प्यार की बात करनी ही नहीं बल्कि उसके बारे में सोचना भी नहीं चाहिए। उसे अपने दिल से प्यार का खयाल ही निकाल देना चाहिए। अबखाज़ियाई लोगों के अनुसार उनके रीति-रिवाजों का पालन करना ही आदमी और जानवर में फ़र्क़ है।

"मुझे माफ़ कर दो," अल्दीज़ इस तरह उछला, मानो किसी ने उसे कोड़ा मारा हो। "माफ़ करो, मैंने कुछ नहीं कहा और तुमने कुछ नहीं सुना।"

"चलो सारा दोष मैं अपना मानती हूँ। तुम्हें अपने को कोई दोष नहीं देना चाहिए। तुम एक इज़्ज़तदार मर्द की तरह पेश आये।"

"शुक्रिया।"

अल्दीज़ तेज़ी से सीढ़ियां उतर गया। अमरा उसे छोड़ आयी। बील्गा घर के अंदर से खुशी से दुम हिलाती भागी आयी, कभी एक की ओर उछलने लगी, कभी दूसरे की ओर।

"तुम्हें जल्दी क्यों हो रही है, अल्दीज़?" अमरा बड़ी मुश्किल

से उसके नजदीक पहुँच कर बोली। "तुम्हें माँ से मिलकर जाना चाहिये, उन्हें तो मालूम ही नहीं कि तुम जा रहे हो।"

"तुम कहां जा रहे हो, अल्दीज़?" देस रसोई से चिल्लाई।

"नमस्ते, मैं जा रहा हूँ।"

"सब मंगल हो, नमस्ते!"

जब अमरा फाटक के पास से वापस आयी तो मां ने उससे पूछा, "तूने उसे जाने क्यों दिया, बेटी, मैं तो खाना तैयार कर रही थी। थोड़ी देर और इंतज़ार कर लेते तो खाना तैयार हो गया होता। कुछ अजीब-सी बात हो गयी। कहीं यह न सोचे कि मैं जान बूझकर चली गयी थी। शायद वह बुरा मान गया हो।"

"नहीं मां वह तुम से नाराज़ नहीं।"

अमरा गर्दन ताने आत्माभिमान और गर्व के साथ विजयिनी-सी सीढ़ियों से ऊपर आ पहुँची। कमरे में पहुंचकर उसने शीशे में अपने को देखा।

"लो, अमरा अब तो शादी के प्रस्ताव भी किये जाने लगे।"

नौ

शायद ही किसी बच्चे के दिमाग में यूं ही जंगल में अकेले घूमने का विचार आयेगा। केवल तात्येई ही बिना किसी उद्देश्य के घंटे, दो घंटे जंगल की पगडंडियों पर घूम सकता है। वह बड़े ध्यान से कुछ सुन रहा है, कुछ बुदबुदा रहा है। जिस आदमी को ठीक से सुनना नहीं आता उसे या तो जंगल शांत लगता है या फिर

सारे जंगल में उसे बेतरतीब आवाजें गूंजती मालूम होती हैं: कहीं चिड़िया चहकती है, कहीं पत्ते सरसराते हैं, कहीं भौंरा गुंजन करता है। लेकिन खास ढंग के श्रवणशक्तिवाले आदमी को सिर्फ़ जंगल के ही नहीं बल्कि प्रकृति की सारी आवाजें लयबद्ध संगीत-सा लगती हैं।

तात्येई जंगल में अकेला घूमता, वह सब सुन रहा है जो वहां से गुज़रनेवाले अन्य लोग नहीं सुन पाते। काश, प्रकृति के संगीत को मनुष्य की भाषा में या सबकी समझ में आ सकनेवाले गीतों में परिवर्तित करके लोगों तक पहुंचा पाना संभव होता। प्रकृति गहन रहस्यों से परिपूर्ण है। उसके सभी रहस्य एक-दूसरे में लीन होकर और अधिक गहन बन जाते हैं। उसकी आवाज दिल से सुन और समझकर पकड़ पाना, उसे अपने मन में संजो पाना ही कवि और संगीतज्ञ की विशेषता है। पर सुनने में समर्थ होना ही काफ़ी नहीं, इसे दूसरों तक पहुंचाने में माहिर होना भी ज़रूरी है। कला का ज्ञान और कौशल का होना आवश्यक है। इसके लिए सिर्फ़ जंगल में घूमना ही काफ़ी नहीं, अध्ययन और परिश्रम की भी जरूरत है।

महान प्रकृति मनमोहक ध्वनियों से परिपूर्ण है। अगर हर कोई उसे सुनना जानता तो इसमें संदेह नहीं कि सब लोग अपने रोज़ाना के कामकाज छोड़कर तात्येई की तरह संगीत का आनंद लेते हुए जंगलों में घूमते रहते।

हर चिड़िया अपने ही ढंग से गाती है। वह सुबह एक तरह का गीत गाती है तो शाम को दूसरी तरह का, वसंत में तीसरी और शरद में चौथी। हवा का झोंका लगने से हर पेड़ अपने ही ढंग से सरसराता है। हल्के झोंके का अपना संगीत है, तेज झोंके का अपना। अगर आंधी आ जाये तो सारे पेड़ बिलकुल ही अलग ढंग से गा उठेंगे। हर पेड़ का अपना गीत होता है, सब गीत भिन्न होते हैं, चाहे हवा के हल्के झोंके के कारण हो, चाहे प्रचंड हवा के कारण, सब एक-दूसरे में लीन होकर एक कर्णप्रिय रागिनी का रूप धारण कर लेते हैं।

पेड़ों के शोर में कभी स्पष्ट निश्चिंतता सुनाई देती है, कभी

भय, कभी खिन्न व असंतुष्ट बड़बड़ाहट, कभी दिल चीर देनेवाली कराह; लेकिन सब इसे समझ नहीं पाते। वहां किसी कवि या संगीतज्ञ को होना चाहिए। वह सब कुछ सुन-संजो कर, उन्हें भाषाबद्ध कर आदमियों तक पहुँचा देगा।

शरदऋतु में तात्येई पढ़ने के लिए बड़े शहर मुखूमी चला जायेगा। कौन जाने, वहां शायद उसे गायन-कला भी सिखा दी जाये। आखिर इसके लिए जो आवश्यक योग्यता होनी चाहिए, वह उसमें है: वह सुनता है और जो सुनता है, उसमें आनंद लेता है।

जंगल की पगडंडी हरज़ामान के घर तक जाती है। हरज़ामान और मैं, दोनों इस समय पुराने बलूत के तले बैठे थे। हम पहाड़ी चरागाह जाने की तैयारी कर रहे थे। हमारी फ़सल काटी जा चुकी थी। सो, हम बलूत के तले बैठे आराम से बातचीत कर रहे थे। तात्येई फाटक से सीधा घर के अंदर चला गया। शायद अमरा के कमरे में।

जिस समय हम पहाड़ी चरागाह जाने को तैयार बैठे आराम से बात कर रहे थे, हमने दो आदमियों को फाटक के पास पहुँचते देखा। ये युवा लोग हमारे लिए अपरिचित थे। हरज़ामान और मुझे उन लोगों के फाटक के पास आ पहुंचने पर आश्चर्य हुआ। बिना किसी काम के फाटक के पास नहीं आना चाहिए और इन अजनबियों को हमसे कोई काम हो भी नहीं सकता था। बील्या के बाल पशुओं की तरह खड़े हो गये, वह दांत निकाले घर के भीतर से फाटक की तरफ़ दौड़ी। अगर वे दोनों आंगन में घुस आये होते तो इसमें कोई शक नहीं कि उनमें से एक को बील्या जिंदा खा गयी होती। हरज़ामान बीस साल के नौजवान जैसी फुर्ती से लपका और मेरी समझ में न आनेवाली आवाज देकर उसने कुतिया को फ़ौरन रोक दिया। बील्या इतनी तेजी से रुकी कि घास पर एक क़दम आगे तक घिसटती चली गयी।

हां, ये आदमी हमारी जान-पहचान के नहीं थे। शायद वे इस गांव में पहली बार आये थे। फिर भी मेहमान, मेहमान ही होता है। हरज़ामान अजनबियों से मिला और उसने उनके लिये फाटक

खोल दिया। कुतिया के भौंकने की आवाज सुनकर अमरा और तात्येई भी घर से बाहर निकल आये। हम सब फिर उसी बलूत और उसकी सुहाती भली छाया तले बैठ गये। पहले हरज़ामान ने बात शुरू की। भला, उसे भी तो मालूम होना चाहिए, कैसे लोग आये हैं और उन्हें क्या चाहिए।

"मुझ बुड्ढे को माफ़ करना, भाई लोगो। मेरी याददाश्त या आंखें अब वैसी नहीं रहीं, जैसी पहले थी, पर मैंने आपको पहचाना नहीं।"

"और बाबा, आप हमें पहचान भी नहीं सकते थे," उन में से एक बोला जो अगर पद में नहीं तो उम्र में ज़रूर बड़ा था। "हम आपके इलाक़े में पहली बार आये हैं। आपके दूर-दराज गाँव में काम के कारण आना पड़ा। मैं इंजीनियर हूँ। मेरा नाम मीता और कुलनाम लारबा है। मैं सड़कें बनाता हूँ। मेरे साथी का नाम अलगेरी लाशबा है। वह भी इंजीनियर है पर सड़कों का नहीं, बिजलीघरों का।"

"बहुत खूब, इंजीनियर हैं, यह तो बड़ी अच्छी बात है," हरज़ामान ने इस तरह कहा मानो सोच रहा हो, क्या कहे। "पर आपका यहां किस काम से आना हुआ?"

"हम यहाँ से सड़क निकालेंगे। अलीपस्ता नदी पर बांध और बिजलीघर बनाये जायेंगे। उनके निर्माण के लिए सड़क का होना ज़रूरी है। हम देख रहे हैं, सड़क कहाँ से निकाली जाये।"

हरज़ामान की भौंहें तन गयीं। उसके चेहरे पर चिंता छा गयी। एक चिंतातुर दृष्टि उसने अपनी छोटी-सी जायदाद, अपने घर-आंगन, पहाड़ी के तले नदी और पहाड़ी के बीचोंबीच समतल जमीन पर बने अपने घरबार पर डाली।

"बिजलीघर, यह तो बहुत ही अच्छी बात है, भाइयो। बहुत ही अच्छी बात है। पर आप यहाँ सड़क कहाँ से निकालेंगे? दायीं ओर पहाड़ी है, बायीं ओर नदी। बीच में हम क़िस्मत के मारे रहते हैं। न तो हमारे दायीं ओर से निकाली जा सकती है, न बायीं ओर से।

अचानक हरज़ामान उठ खड़ा हुआ। उसका चेहरा पकी मिर्च की तरह लाल हो उठा। धीरज और सहनशक्ति उसे धोखा दे गयी। वह इस तरह उठ खड़ा हुआ मानो अपनी उस सारी जायदाद, घर, बाग़, खानदानी क़ब्रिस्तान, पुराने बलूत, पड़दादा द्वारा निकाले गये चश्मे और सारी पगडंडियों की रक्षा कर रहा हो जिन पर अहवा वंश के क़दम पड़े थे। और यह बात सबकी समझ में आ गयी कि अगर सड़क यहाँ से निकाली गयी तो वह हरज़ामान, उसके चौड़े सीने, उसके बूढ़े पर अभी भी तेजी से धड़कते दिल के ऊपर से ही निकलेगी।

"आखिर, भाई लोगो, आप सड़क यहां कहां से निकालना चाहते हैं?"

"यहीं से निकाली जायेगी, जहाँ हम अभी बैठे हुए हैं। कहीं दूसरी जगह से संभव नहीं, आप शायद खुद भी देख रहे हैं। दायीं ओर पहाड़ी है, बायीं ओर नदी।"

इंजीनियर इस बारे में इतनी शांति से बोल रहा था मानो बात इस धरती से हरज़ामान अहवा के वंशवृक्ष का नाम मिटाने की नहीं बल्कि किसी छोटे-से पत्थर को एक जगह से उठाकर दूसरी जगह रखने की हो रही हो।

दूसरे इंजीनियर अलगेरी ने शायद वातावरण के तनाव को महसूस कर उसे कम करने का फ़ैसला किया,

"ऊफ़! कितनी गर्मी है! प्यास से मरा जा रहा हूँ। आपके यहाँ कुछ पीने को मिलेगा, बाबा?"

हरज़ामान अब तक खुद पर क़ाबू पा चुका था। लेकिन जब उसने अमरा को आवाज़ दी तो साफ़ ज़ाहिर हो गया, जो गुस्सा वह मेहमानों पर नहीं उतार पाया था, वह सारा उसने आवाज़ में उतार दिया था,

"अमरा, ओ अमरा!"

"क्या है, बाबा, बोलिये।"

"मेहमान को प्यास लगी है, पानी ले आ।"

अमरा ने ज़मीन में गड़े घड़े से पुरानी काली शराब निकालकर गिलास में भरी। एक तश्तरी में उसने ताज़ा पनीर के टुकड़े और थोड़ा अज़ीका* रखा। खाने की तश्तरी और गिलास लेकर वह अलगेरी के पास आयी।

"मैं तो बस थोड़ा-सा पानी पीना चाहता था।"

"शराब भी प्यास बुझाती है। पियो, भाई," हरज़ामान ने, न तो आग्रह किया, न ज़ोर ही दिया।

इस बीच अमरा को जैसे कुछ हो गया। उसकी आंखें जो अलगेरी के चेहरे पर टिकीं तो टिकी ही रह गयीं। सम्मोहित-सी तश्तरी की ओर देखे बिना उसने आगे बढ़ा दी। उसका तश्तरीवाला हाथ कांप रहा था। गिलास में से थोड़ी शराब छलक गयी। अलगेरी ने भी लड़की की ओर इस तरह देखा मानो वह कुछ याद कर रहा हो। अमरा से तो शायद यह उसकी पहली मुलाक़ात थी। शायद कोई पुरानी भूली याद ताज़ा हो आयी थी, शायद उस लड़की की जिसके साथ वह पढ़ा था, कभी प्यार किया था।

तश्तरी अमरा के हाथों में कांप रही थी। अलगेरी ने गिलास पकड़ने के लिए हाथ बढ़ाया, तो जैसे अमरा के हाथ की सारी ताक़त ही जवाब दे गयी और हाथ की सारी चीजें पत्थर पर गिरकर टूट बिखर गयीं।

"अरे! तुझे क्या नींद आ गयी या तेरे हाथ में गठिया का दौरा पड़ गया?!" हरज़ामान गुस्से में चीखकर अपनी जगह से उठ खड़ा हुआ।

"सूख जाय मेरा हाथ। सारी ग़लती मेरी ही है," अलगेरी ने लड़की का पक्ष लिया, "टूटी चीज़ फिर से तो जोड़ी नहीं जा सकती।"

---

* अज़ीका – लाल मिर्च और अन्य मसालों से बनी एक प्रकार की चटनी।

अमरा ने टुकड़े इकट्ठे करने की भी कोशिश नहीं की और वहां से भाग गयी। स्थिति बड़ी कष्टकर हो गयी। न मेज़बान, न मेहमान कुछ सोच पाये कि क्या किया जाये, क्या बोला जाये। तात्येई को सबसे पहले होश आया। उसने एक गिलास ठंडा पानी लाकर अलगेरी को पिलाया। उसे धन्यवाद देकर इंजीनियर चले गये। मैं भी उन्हें छोड़ने जाने का बहाना बनाकर आंगन से बाहर निकल गया।

अमरा भागकर अपने कमरे में पहुंची और मुंह के बल बिस्तर पर गिरकर, तकिये में अपना मुंह छिपा लिया। उसने अपनी पलकें ज़ोर से मीच लीं, मानो उन्हें खोलने से डर रही हो। पर इसका मतलब यह नहीं था कि उसकी आंखों के आगे अंधेरा छाया हुआ था, उसे कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। नहीं, उसकी आंखों के आगे जीता-जागता अलगेरी खड़ा था।

प्यार हर लड़की के दिल में सही घड़ी, सही पल का इंतज़ार करता सोया रहता है। हर लड़की के लिए दुनिया में लड़का जन्म लेता है, जो उसकी इस भावना को जागृत करता है। हर लड़की के लिए वह दिन आता है, जब वह लड़का आता है और यह भावना जाग उठती है। हर लड़की इस दिन की प्रतीक्षा करती रहती है।

और यह संयोग हो ही गया। किसी जादू से हमारी शांत दुनिया में यह इंजीनियर अलगेरी आ पहुंचा। अब इस बात का कोई महत्व नहीं रहा कि अलगेरी ने लड़की की ओर ध्यान नहीं दिया या याद नहीं रखा। लड़के के लिए यह एक मामूली घटना है पर लड़की के लिए जीवन की अत्यंत महत्वपूर्ण घटना।

कुछ समय बाद हम हरज़ामान के साथ पहाड़ की ओर चल पड़े। हम जानवरों को हांक रहे थे। उन दिनों जब हम तैयारी ही कर रहे थे, हरज़ामान आंगन में काले बादल से भी ज़्यादा उदास घूमता रहता था। हर बार हम एक-दूसरे की नज़र बचाकर निकल जाते थे। हरज़ामान अपने-आप से डर रहा लगता था कि कहीं वह फट न पड़े, गुस्सा न रोक पाये और मुसीबत न खड़ी कर दे। अमरा जानबूझकर देर तक स्कूल में रुक जाती, देर से लौटती और घर पहुंचने के बाद अपने कमरे से नहीं के बराबर बाहर

निकलती। मैं बेघर-सा, लावारिस कुत्ते की तरह हरज़ामान की चहारदीवारी से दूर-दूर भटक रहा था।

पर अब सब कुछ बदल चुका था। हम जानवरों को पहाड़ की ओर हांक रहे थे। हरज़ामान झुंड के आगे धीरे-धीरे चल रहा था और मैं इस जुलूस के पीछे-पीछे। हमें जल्दी नहीं थी और पहाड़ी चरागाह तक का रास्ता हमने जानवरों को थकाये बग़ैर ही पूरा कर लिया। हमारी पहाड़ी ज़िंदगी शुरू हो गयी।

जब हम पहाड़ पर रहे थे, उस समय नोवालूनिये में कुछ अपने ढंग की ही घटनाएं हो रही थीं। बिजलीघर के लिए जगह का निर्णय हो चुका था। सड़क बननी शुरू हो गयी थी। वह सांप की तरह रेंगती हरज़ामान की जायदाद के नज़दीक पहुंचती जा रही थी। पर इससे पहले ही अलगेरी के लिए हरज़ामान के घर का रास्ता खुल चुका था। अमरा ने पुराने अबखाज़ियाई रीति-रिवाजों का फ़ायदा उठाकर अल्दीज़ को पंगु बना दिया था। अब वह उंगली तो क्या उठा पाता, एक शब्द भी नहीं कह सकता था। मैं और हरज़ामान पहाड़ियों में, बहुत दूर थे। अलीआस अपनी मशीन के साथ खटर-पटर करता रहता था। अलगेरी को अमरा के रास्ते से हटानेवाला कोई न था। और इस का फ़ायदा उठाकर वह इस रास्ते पर बेधड़क आने जाने लगा था।

वे अमरा के घर से थोड़ी दूर, एकान्त जगह में मिलते थे। उस दिन अमरा घर में अकेली थी, उसे रोकने-टोकनेवाला कोई नहीं था, इसलिए वह निडर होकर चुपचाप आंगन से बाहर निकली। फिर भी परिवार और घर के प्रति वफ़ादार बील्या उसके पीछे-पीछे चलने लगी। कुतिया को देखते ही अमरा ने उसे ज़ोर से फटकारा। कुतिया रूठकर पिछले पैरों पर बैठ कूं-कूं करने लगी। ज़ाहिर था, बील्या घर वापस नहीं जाना चाहती। कुतिया जवान जोड़े के मोड़ पर मुड़कर हरियाली में ओझल हो जाने तक इंतज़ार करने के बाद आगे चल पड़ी।

सड़क से एक तरफ़ घने पेड़ के तले अमरा और अलगेरी रुक गये। यहां उन्हें कोई रास्ता चलता आदमी नहीं देख सकता था – इस

पेड़ के चारों ओर बहुत सारे पेड़ थे। वे पेड़ के तले खड़े-खड़े धीरे-धीरे बातें कर रहे थे।

इसमें कोई संदेह नहीं कि बात अलगेरी ही कर रहा था। पर वे बातचीत न अपने बारे में, न इस तरह छुपकर मिलने के बारे में बल्कि कुछ इधर-उधर की चीज़ों के बारे में ही कर रहे थे। अलगेरी नोवालूनिये की रमणीयता के बारे में बोल रहा था। उसने धरती पर पहली बार ऐसा स्थान देखा था, वह हमेशा के लिए यहीं रह जाना चाहता था, हमेशा इन पेड़ों, इन चट्टानों को देखता रहना चाहता था, वह अभी तक नहीं समझ पाया था, धरती की सुन्दरता क्या होती है, प्यार क्या होता है... अलगेरी नोवालूनिये और प्रकृति के बारे में बोल रहा था पर उसके हर शब्द में अमरा ही छुपी थी। अमरा भी यह सब समझती दिल थामे सुन रही थी। वास्तव में नोवालूनिये से उसकी यह पहली मुलाक़ात नहीं बल्कि अमरा के साथ पहली थी, वह अमरा के साथ ही हमेशा के लिए रहना चाहता था, अमरा को ही देखते रहना चाहता था और अमरा से मिलने से पहले वह वास्तविक सौन्दर्य के बारे में कुछ भी नहीं जानता था।

अगर मनुष्य को ज़बान दी गयी है तो लानत-मलामत करने, अपशब्द कहने, सभाओं में ऊबा देनेवाले भाषण देने, रोज़मर्रा की बकवास, बाज़ारू अफ़वाहों आदि के लिए नहीं बल्कि उन शब्दों के लिए जो अलगेरी इस समय बोल रहा है – सुंदर, हार्दिक, निष्कपट।

अमरा मन्त्रमुग्ध सुन रही थी। वह इधर-उधर की चीज़ों के बारे में बात कर रहा था, पर धीरे-धीरे खुलता भी जा रहा था। अमरा जानने लगी थी, उसे क्या पसंद है, वह कितनी गहराई में सोचता है संक्षेप में, वह कितना भला, कितने उच्च विचारों का आदमी है। वह नोवालूनीये, उसके प्राकृतिक सौंदर्य और उसके जीवन के बारे में ऐसे बोल रहा था मानो वह किसी अलौकिक जीवन के बारे में बोल रहा हो जो नोवालूनिये में तो क्या कहानियों में भी शायद ही मिले।

अमरा को लग रहा था, अलगेरी जैसा आदमी उसे, अमरा, को भी नोवालूनिये की ज़िंदगी की तरह अपनी बातों में पहाड़ों से

भी ऊपर उठाकर आसमान तक ले जायेगा। उसे तो लग रहा था कि सारी दुनिया घूम लेने के बाद भी अलगेरी जैसा सुंदर चुस्त और बहादुर नौजवान, जिसकी धुंधली आकृति वह अपने सपनों में देखती आयी थी, फिर कभी नहीं मिलेगा। हां इतना वह जानती थी कि जिस नौजवान पुरुष की तसवीर मन में बनाती रही थी, वह कभी न कभी उसके पास जरूर आयेगा। और ऐसा ही हुआ। अमरा सोच रही थी, अगर वह अभी उसे आवाज़ देकर कहे: घर और घरवालों को छोड़ मेरे साथ चलो तो वह घर, घरवालों और दुनिया में सब कुछ भूलकर उसके साथ चल देगी।

उसी क्षण, न जाने कहाँ से, बील्गा लड़के और लड़की के बीच में आ टपकी। वह दोषी की तरह अपनी दुम हिला रही थी और क्षमा मांगती हुई सी ज़मीन से चिपट रही थी। अमरा चौंक उठी, उसका चेहरा शर्म से लाल हो गया मानो बील्गा के ज़रिये उसके सारे परिवार ने उसे जंगल में एकान्त स्थात में गैरमर्द के साथ देख लिया हो। अमरा को घबराया देख, अलगेरी भी सकुचाकर चुप हो गया। उसकी बोलती बंद हो गयी, जलती आग बुझ गयी, उसकी बातों से बना वातावरण पलभर में लुप्त हो गया। अब आसमान की बुलंदी ख़त्म हो चुकी थी, बच रहे थे सिर्फ पेड़, छुपकर यहाँ आनेवाले लड़का-लड़की और उनका पीछा करनेवाली कुतिया।

बील्गा ने उछलकर अपने पंजे अमरा के कंधों पर रख दिये और उसका गाल चाट लिया, मानो अपनी मंशा पूरी कर ली हो। शुरू में अमरा को कुतिया पर गुस्सा आया और वह उसपर चीख पड़नेवाली थी लेकिन फिर अचानक ही उसने अपना गाल कुतिया के कड़े बालों से सटाकर उसे गले लगा लिया। रंग में भंग हो गया था। अमरा जंगल से निकल पगडंडी के सहारे घर चल दी। थोड़ी देर बाद अलगेरी भी सड़क पर निकल आया। वह अमरा के घर की ओर न जाकर ऊपर की ओर जा रहा था। उसी समय, न जाने कहाँ से, अगरा सड़क पर दिखाई दी। उसने दूर से ही जोरदार आवाज़ में कहा,

"शाबाश, अमरा, लगता है, तू हमें ऊबने नहीं देगी। सच कहती हूँ, तू ऊबने नहीं देगी।"

"तू किस बारे में कह रही है?"

"वह देख, कौन आ रहा है रास्ते पर?"

"कहाँ, कौन?"

"तू अच्छी तरह जानती है, कौन, बन क्यों रही है?"

"यहां क्या आने-जानेवालों की कमी है?"

"सबके बारे में क्यों बात करें, तू अच्छी तरह जानती है, बात किसकी हो रही है।"

"तू क्या कह रही है, अगरा, इन सब बातों का मतलब क्या है?"

"अच्छी तरह, सोच, समझ जायेगी।"

"मैं कुछ नहीं जानती। कृपा करके मुझे अपनी गढ़ी हुई बातों में मत लपेट।"

अमरा घर की ओर इस तरह जा रही थी मानो एक-एक
दूब तक उसका राज़ जान गयी हो। वह अगल-बगल देखने
से सकुचा रही थी, उसकी नज़रें पैरों पर टिकी थीं।
बील्या उसके पीछे-पीछे भागी चली आ रही थी।
वह कान खड़े करके, मुँह खोले ऐसे भाग रही
थी मानो फ़र्ज़ तो पूरा हो गया था, खतरा
अभी भी टला नहीं था, उसे
हर क्षण चौकन्ना
रहना था...

दस

पहाड़ पर जाना मेरे लिए बहुत महत्व रखता था। मैं समझ गया था, मुझे अपना घर बदल लेना चाहिए। हरजामान के परिवार का मेरे प्रति अतिसद्व्यवहार मुझ पर बहुत बड़ा बोझ बन गया था उनके यहाँ रहना मुझे स्वार्थपूर्ण लगने लगा था। मैंने निश्चय

किया, उनसे अलग होकर, अपनी देखभाल की चिंता का बोझ उनके सिर से उठाकर मैं उनकी ज़िंदगी आसान कर दूंगा और खुद भी पारस्परिक ज़िम्मेदारियों से मुक्त हो जाऊंगा।

अपना नियमित व अबाध जीवन क्रम, मैं यहां, बहुत दूर पहाड़ों में चट्टानों पर तोड़कर ही बदल सकता। मेरे लिए कोई दूसरा चारा न था। संक्षेप में बताऊं तो मैं पहाड़ों में हरजामान से अलग होकर जफ़ास के यहां रहने लगा... जैसे ही हमने झोंपड़ियां बनायीं, मैं सींगवाले बड़े जानवरों के चरवाहों के साथ रहने लगा।

दूसरों के ख्याल से भी इसमें कुछ भी निंदनीय न था। बेशक, जहां मुझे ज्यादा अच्छा लगेगा, जहाँ मैं ठीक समझूँगा, मैं वहीं ठहरूँगा। पर यहां पहाड़ों में हरज़ामान मेरे साथ था। सभी जानते थे, मैं उस के घर में रहता हूँ और पहाड़ों तक हम साथ ही साथ एक ही घर से आये थे। यूँ कहें कि हम एक ही आवे के बर्तन से थे लेकिन अब मैं अपना सामान उठाकर दूसरी झोंपड़ी में रहने चला गया था।

यह सब देखकर लोगों के लिए तरह-तरह की बातें बनाया जाना जरूरी हो गया था। सबसे पहले खुद हरज़ामान ने ही बात छेड़ी,

"प्यारे अल्तोऊ, तुम्हें हमारी कौन सी बात बुरी लग गयी?"

मैंने उसकी बात न समझने का बहाना बनाने की ठानी।

"मुझे कौन सी बात बुरी लग सकती है, हरज़ामान बाबा?"

"मुझे कैसे मालूम हो सकता है, बेटा! मुझसे ही कोई ग़लती तो नहीं हो गयी? कोई तो कारण होना चाहिए। बिना कारण के कुछ नहीं होता... दोष मेरा है। कहीं मैं बुड्ढा तो किसी बात के लिए तुम्हारे सामने दोषी नहीं? काश! मैं जान पाता, मेरा क्या दोष है..."

"बात क्या है, हरज़ामान? शायद मेरी किसी बात से आपको चोट पहुंची हो?" मैंने वृद्ध को तसल्ली दिलाने की कोशिश की। "क्या हुआ हरज़ामान?"

"आह, बेटा, काश, मुझे मालूम होता, क्या हुआ... अगर मुझे मालूम होता तो मैं पूछता ही नहीं।"

अपनी मुखमुद्रा से मैंने घबराहट और निर्दोषिता दिखाने की कोशिश की जैसे मैं बात ही नहीं समझ पा रहा।

पर हरज़ामान को धोखा देना आसान नहीं।

"आह! बेटा, क्या तुम सोचते हो, बुड्ढा अंधा है? अगर तुम नाराज़ न होते तो जफ़ास के यहाँ रहने नहीं जाते... अगर तुम्हें मेरी किसी बात का बुरा नहीं लगता तो क्या तुम मेरी झोंपड़ी छोड़कर जा सकते थे... मुझसे जरूर कोई ग़लती हुई है बुढ़ापे में..."

"आप भी क्या कह रहे हैं, हरज़ामान, ऐसी कोई बात नहीं हुई जिसका मैं बुरा मानूं। आप ऐसा क्या इस वजह से सोचते हैं कि मैं रात दूसरे फ़ार्म में काटता हूँ? अगर मैं उन लोगों से ग़ैरों जैसा व्यवहार करता तो वे लोग क्या कहते? या फिर, क्या वह फ़ार्म हमारा नहीं?"

हालांकि मुझे हरज़ामान पर दया आ रही थी पर मेरे पास कोई दूसरा चारा भी तो नहीं था। मैं अपनी बात पर अड़ा था।

"ऐसी-वैसी कोई बात नहीं, हरज़ामान। चिंता मत कीजिये। आपसे कोई ग़लती नहीं हुई। भगवान करे, हमारे बीच ऐसा बुरा कुछ भी न हो।"

"कौन जाने बेटा, शायद तुम्हारी बात ही ठीक हो... पर, बेटा, भला इससे बुरा और क्या हो सकता है?"

उसने खोजपूर्ण निगाह से मेरी ओर देखा। मैंने वृद्ध के दिल से उसके दोषी होने का विचार जड़ से निकाल देने के लिए बातचीत का सबसे आडम्बरपूर्ण तरीक़ा चुना।

"आकाश और धरती इस बात के साक्षी हैं कि मैं आपसे किसी बात के लिए नाराज़ न तो हूँ और न ही था! कोई पहले दर्जे का नीच आदमी ही कह सकता है कि आप मुझे सिर-आँखों पर नहीं रखते थे!"

"यह तो ठीक है, प्यारे अलोऊ लेकिन मैंने यह बात इसलिए नहीं कही कि तुम मेरा शुक्रिया अदा करो या मेरी तारीफ़ करो। तुम कुछ भी कहो, पर मुझे धोखा देने की कोशिश न करो। बेहतर

होगा, अगर तुम मुझे बता दो कि किस बात से नाराज हो — मैंने कभी किसी का बुरा नहीं किया है..."

मैंने फिर अपनी मुखमुद्रा निर्दोष बना ली। "ऐसी कोई भी बात नहीं हरज़ामान, कुछ भी नहीं हुआ।"

"चलो ठीक है, जैसा तुम कहते हो, वैसा ही होगा, अलोऊ," हरज़ामान ने एक ठंडी सांस लेकर कहा।

हरज़ामान ने फिर कभी दूसरे फ़ार्म में सोने के बारे में मुझसे कुछ नहीं कहा, पर रोज़ सुबह मैं उसकी आंखों में दर्द देखता था। अपना अधिकांश समय मैं उसके साथ गुज़ारता था। हम दोनों अपने संबंधों में पहले जैसी गर्मजोशी के अभाव को कोई भी महत्व न देने की कोशिश करते। सारे काम साथ करते रहते। शायद, इससे उसकी उदासी दूर होने में सहायता मिली हो।

हरज़ामान सबके बाद सोने जाता था। जब सब सो जाते वह जंगल में खुली जगह जा बैठता और स्वच्छ पर्वतीय आकाश की ओर देखना शुरू कर देता। अंधेरी रात की स्पष्ट नीरवता में वह चश्मों की निरंतर कलकल ध्वनि सुनता रहता। वह आकाश की ओर देखता और उसके मस्तिष्क में तरह-तरह के विचार उत्पन्न होने लगते।

आकाश में जगमगाते तारे शांत तैर रहे थे। उनके बीच हरज़ामान अपने तारे को ढूंढ रहा था। जैसे ही उस सुदूरवर्ती तारे की चमकती किरणें उसकी आंखों में पड़ती, उनकी पीड़ा दूर होने लगती, उसका मस्तिष्क स्वच्छ हो जाता, और हरज़ामान शांत-चित्त हो सो जाता।

हरज़ामान काफ़ी अच्छा शिकारी था। पहाड़ों की पिछली यात्राओं में हम कई बार साथ शिकार पर निकले थे और मैं उसके अचूक निशाने व शानदार शिकारी होने का क़ायल हो गया था। वह

बचपन से ही चट्टानों का आदी था, जंगली जानवरों की तरह उन पर चिपककर आसानी से ऊपर चढ़ जाता था।

इस बार भी शिकार की बात उसने ही पहले छेड़ी।

"जफ़ास, क्या इस साल हम एक बार भी तूर* का गोश्त चखे बग़ैर पहाड़ से वापस लौट जायेंगे?"

"हाँ, एक बार कोशिश कर देखने में तो कोई बुराई नहीं," जफ़ास ने उसकी हां में हां मिलाई।

भोर होते-होते हम पहाड़ पर चढ़ रहे थे।

हरज़ामान ने शिकार के देवता अभ्भ्व्येपशा का गीत गाना शुरू किया। जैसा हमसे हो सकता था, हम उसका साथ दे रहे थे। न जाने कब हम सबसे ऊंची पहाड़ी की तलहटी में पहुंच गये। उसका किनारा काटता, कलाबाज़ियां खाता, बड़े-बड़े पत्थर लुढ़काता पहाड़ी नाला बह रहा था। कभी वह फुहारें बिखेरने लगता, मानो हंस रहा हो, कभी गरजती तेज़ आवाज़ करता शिलाखंडों को फांद जाता मानो ठहाका मारकर हंस रहा हो। जिस चट्टान को हम देख रहे थे, वह ऊंची थी। उसकी चोटी तक हमारी नज़र नहीं पहुंच पा रही थी।

"इस चट्टान पर तूर हैं," हरज़ामान ने चुप्पी तोड़ी। "तूर ज़रूर ही होने चाहिएं," उसने कहा पर उसकी आवाज़ में शंका झलक रही थी। "बेशक, तूर हैं। वहाँ हैं। पर... हाय! कहाँ गयी मेरी जवानी? पहाड़ियाँ धोखेबाज़ हैं, कठिन हैं, और अगर वहाँ तूर नहीं हुए तो? काश! मैं जवान होता..." उसने मेरे पैरों से सिर तक नज़र दौड़ाई।

"मैं तैयार हूँ," मैंने उत्साहभरी आवाज़ में कहा और हाथों में बंदूक पकड़ ली।

"नहीं, हरज़ामान, अगर इसे कुछ हो गया तो," जफ़ास ने कहा, "तुम और मैं तो अनुभवी शिकारी हैं..."

* तूर – जंगली बकरा।

हम चट्टान की ओर देख रहे थे और मन-ही-मन उसकी चोटी तक चढ़ रहे थे।

"मैं तैयार हूँ," मैंने फिर कहा।

"शाबाश, शिकार डरपोक का काम नहीं," हरज़ामान ने मुझे जवाब दिया। उसने दायीं ओर हाथ बढ़ाया और मुझसे बोला, "अल्योऊ तुम इस रास्ते से जाओगे। और जफ़ास, तुम इधर बायीं ओर से और मैं सीधा जाऊंगा। हम सफल हों। अभ्भ्व्येपशा हमारी सहायता करेगा। हम इस पहाड़ी पर अलग हो जायेंगे पर गोली हमारे सिगनल का काम देगी। चाहे सफल रहें या असफल, गोली चलते ही हम सब इकट्ठे हो जायेंगे। अभ्भ्व्येपशा हमारी रक्षा करेगा," हरज़ामान ने जैसे हम लोगों को आशीर्वाद दिया।

कभी सारे शरीर को सिकोड़कर, कभी खींच कर हरज़ामान बाहर की ओर उभरी चट्टान के एक कगर को पकड़, दूसरे की ओर हाथ बढ़ाता, पैर जमाता, आगे बढ़ रहा था।

वह काठी-से दिखनेवाले कगर के पास पहुंच रहा था। उसे पकड़कर वह उस पर सवार हो गया और ऐसा प्रतीत हुआ मानो उसने सारी पर्वतमाला को क़ाबू में कर लिया हो... उसे पहाड़ी की चोटी साफ़ दिखाई दे रही थी। शिकारी के सहज-ज्ञान से वह जान गया था कि चोटी पर किसी भी क्षण तूर दिखाई दे सकता है। उसने यहीं घात लगाने का फ़ैसला किया। हरज़ामान ने नीचे झांककर देखा – अथाह गह्वर। पैर फिसला और क़िस्मत का फ़ैसला हुआ। हड्डियां भी न मिलें... हरज़ामान वहां इंतज़ार करते, पहाड़ी की चोटी की ओर देखते हुए यही सब सोच रहा था। इस चोटी को प्रकृति ने शायद ख़ास तौर से इसीलिए बनाया था जिससे पहाड़ी जानवर यहां से अपने चारों ओर की दुनिया को देख सकें। सूरज अभी निकला नहीं था पर पहाड़ी के पीछे से झांकती उसकी किरणें शानदार चमकीले पंखे की तरह लग रही थीं।

हालांकि हरज़ामान उस क्षण की प्रतीक्षा कर रहा था, चट्टान पर दिखाई देनेवाले जानवर के भाग्य का हल कर चुका था लेकिन बावजूद इसके तूर का दिखाई देना उसे अचानक-सा लगा। गोली

चलने की आवाज़ आयी और तूर नीचे लुढ़कने लगा। हरज़ामान की निगाहें उसका पीछा कर रही थीं। मुश्किल था पर हरज़ामान उसे उठा लाने का निश्चय कर चल पड़ा।

गोली हरज़ामान ने चलाई है, यह समझकर मैं उसकी ओर भागा। जब मैंने उसे देखा तो वह हाथों के बल एक छोटी-सी उभरी चट्टान से लटका था। वह जैसे ही पैरों को चट्टान पर टिकाने की कोशिश करता, वे फिसलने और छूटने लगते। वह घाटी के ऊपर लटका हुआ था।

"पकड़े रहो, मैं यहां हूँ!" मैं चिल्लाया और उसकी ओर रेंगने लगा। मुझे ख़ुद भी मालूम नहीं, मैं यह सब कैसे कर पाया पर मैं बहुत जल्दी उसके पास पहुंच गया और चट्टान से पूरी तरह चिपककर मैंने अपना कंधा उसके पैरों के नीचे टिका दिया। हरज़ामान धीरे-धीरे ऊपर चढ़ता जा रहा था और मैं उसे अपने कंधे का सहारा दे रहा था। अंत में वह उस उभरी चट्टान पर चढ़ गया जिसे उसने जीवन के आख़िरी सहारे की तरह पकड़ रखा था।

"नीचे उतर जाओ, बेटा, नीचे उतर जाओ!" हरज़ामान ने मुझे आवाज़ दी। "अब मुझे कुछ नहीं होगा। मैं थोड़ी देर सांस ले लूं फिर उतरूंगा। शायद अब यह शिकार नहीं मिलेगा।"

"वह कहां गिरा है?" मैंने मारे हुए जानवर को ढूंढ़ने का दृढ़ निश्चय करके हरज़ामान से पूछा।

"अब वह नहीं मिलेगा," हरज़ामान ने तटस्थ भाव से कहा और ढलान की तरफ इशारा किया जहां केवल दूसरे रास्ते से ही पहुंचा जा सकता था।

हरज़ामान के शिकार को लादे मैं पहाड़ी नाले के पास बैठे आराम कर रहे अपने साथियों के पास उतर आया।

"तुम तो असली पहाड़ी मालूम पड़ते हो और लगता है, मैं तो बिलकुल बुड्ढा हो गया हूँ," जब मैं हरज़ामान के पास पहुंचा तो उसने कहा। "आह, कहां गयी मेरी जवानी... तुम्हें देखते ही मुझे अपनी जवानी याद आती है। मेरे पैर कमज़ोर हो गये,

शरीर कमज़ोर हो गया... सिर्फ़ दिल हमेशा पहाड़ों की तरफ़ खिंचा जाता है। दिल की आवाज़ सुनकर, उसके पीछे चल देता हूँ पर पैर मेरी नहीं सुनते। अगर अलोऊ न होता तो आज मैं ख़त्म हो गया होता। उस तूर की तरह ख़त्म हो गया होता जिसे मैंने अपनी गोली का निशाना बनाया था: अलोऊ ठीक समय पर मेरे पास पहुंच गया," हरज़ामान कहता रहा।

मेरी प्रशंसा करके वृद्ध मुझे परेशान कर रहा था, मैं समझ नहीं पा रहा था, क्या कहूं। बस यही कह पा रहा था,

"आप क्या कहे जा रहे हैं, मैं इसके योग्य नहीं..."

"शाबाश, अलोऊ, शाबाश," जफ़ास भी कह उठा।

मैं चुप खड़ा क़रीब ही तेज़ी से बहते पानी की ओर देखता रहा। हरज़ामान गीत गा रहा था। पहाड़ी नाले का कलकल करके बहता पानी संगीत दे रहा था।

तरोताज़ा होने के इरादे से हम लोग नाले के पास उतर आये।

मैंने झुककर हाथ पानी की ओर बढ़ाये। तभी मेरी जेब से अमरा का फ़ोटो गिर पड़ा। वह मेरी हथेलियों से फिसलकर, चक्कर खाता पानी में बह चला। लहरों ने उसे चट्टानों पर उछाल दिया फिर अपने साथ आगे बहा ले चलीं। मैं कपड़े पहने ही उसके पीछे-पीछे पानी में कूद पड़ा।

"अरे, अरे, इसे पकड़ो, इसे पकड़ो!" जैसे ही फ़ोटो उसे दिखाई दिया, हरज़ामान चिल्ला उठा।

या तो वह फ़ोटो में अपनी पोती को पहचान गया था या उसने अन्दाज़ लगा लिया था कि उसके अलावा और किसी के लिए मैं इतनी जल्दी पानी में नहीं कूद सकता था। शायद उसकी पैनी निगाह ने अमरा को पहचान लिया था, इसी की संभावना अधिक थी। अगर ऐसा न होता तो उसने मुझसे कुछ न कुछ ज़रूर पूछा होता। हरज़ामान और जफ़ास दोनों ने ऐसा बहाना बनाया जैसे कुछ हुआ ही न हो। पर उन्होंने देख तो लिया ही था कि मैं अमरा के पीछे कैसे पानी में कूद पड़ा...

मैं चट्टान के पीछे अपने साथियों से दूर बैठा, कपड़े सुखा रहा था। धूप में कपड़े जल्दी सूख रहे थे। मैं कपड़े उतारकर पत्थरों पर बैठा था जब फ़ोटोवाली घटना याद हो आयी तो मुझे गर्मी लगने लगी, चेहरा शर्म से लाल हो उठा।

अमरा का फ़ोटो पत्थर पर रखा था, सूरज की किरणें उसके चेहरे पर अठखेलियां कर रही थीं। उसका चेहरा और भी ज़्यादा साफ़ दिखाई देने लगा था। केवल उसकी आंखें नम और धुंधली थीं मानो उनमें आंसू भरे हों जो बूंद-बूंद कोनों से गिर रहे हों।

मैं बैठा अमरा की नम आंखों को देख रहा था...

पूरी तरह सूख जाने के बाद जब मैं दोस्तों के पास पहुंचा तो भी उन्होंने मुझसे कुछ नहीं पूछा और इस बात से मैं और भी ज़्यादा उदास हो गया...

थोड़ी देर बाद हम आगे चल दिये। मैं हरज़ामान के मारे हुए तूर को लादे अपने साथियों के पीछे-पीछे चल रहा था। हम सब चुप थे। मुझे ऐसा लगा कि मेरे विचार अब सबको मालूम हो गये हैं। पर भला कोई जान सकता है कि हरज़ामान इस समय क्या सोच रहा है? वृद्ध के चेहरे से कुछ भी मालूम नहीं चल सकता। अभी-अभी जो कुछ हरज़ामान की आंखों के सामने हुआ, वह अपनी छाप छोड़े बग़ैर नहीं रह सकता। वह उदास, खिन्न और सोच में डूबा चल रहा था, पर उसके विचारों का पता लगा पाना असंभव था।

जिस समय हम पहाड़ पर थे, हमारे नोवालूनिये में ज़िन्दगी अपनी ही रफ़्तार से चल रही थी। अलीआस को त्बिलिसी में कृषि मंत्रालय में बुला लिया गया था। वह अपने साथ अपनी पत्ते चुननेवाली मशीन के डिज़ाइन लेकर वहाँ गया हुआ था। अलीआस तात्येई को भी अपने साथ राजधानी दिखाने ले गया था। जब अलीआस मंत्री के पास होता, तात्येई होटल की बालकनी से शहर देखा करता। शाम को अलीआस तात्येई का हाथ पकड़कर उसे थियेटर या फिर यूँ ही शहर घुमाने ले जाता।

बालकनी में खड़े होकर अलीआस को जाते देखना तात्येई को

अच्छा लगता था। अलीआस के सड़क पार करने के साथ ही कारों की लम्बी क़तार रुक गयी और रास्ता खुल गया। जैसे ही वह सड़क पार कर लेता, कारों की क़तारें दोनों दिशाओं में आने-जाने लगतीं। तात्येई ने जब इतनी सारी कारों को, इतनी तेज़ी से दौड़ते देखा तो उसकी आंखें झपक गयीं। उसे लगा, वे सब अभी आपस में टकराकर चकनाचूर हो जायेंगी। तात्येई ने जब आंखें खोलीं, तो देखा, कारें सीधी क़तारों में दोनों ओर आ-जा रही हैं और उनका नियंत्रण तेज़ ट्रैफ़िक-लाइटें कर रही हैं। तात्येई ने उन्हें उस समय देखा जब पक्की सड़क पर कारें एकाएक टायरों के घिसटने की आवाज़ के साथ रुकीं। उसने लाल रंग की ट्रैफ़िक-लाइट देखी और वह समझ गया कि जब तक ट्रैफ़िक-लाइटें नियंत्रण करती रहेंगी, सड़कों पर कुछ नहीं हो सकता।

फिर थोड़ा मुड़कर लगभग आधा रास्ता घेरे एक नीले रंग की ट्रॉलीबस निकल आयी। वह पेट के बल अपने सारे शरीर को पक्की सड़क पर घसीट रही थी। वह और ज़्यादा मुड़कर रुक गयी। उसकी मूंछों में बिजली चमकने लगी। तात्येई हैरत में पड़ गया: ऐसी बिजलियां तो नोवालूनिये में तभी चमकती हैं जब बरसात का मौसम होता है। और तात्येई की नज़र आसमान की ओर उठ गयी तो वह उसे नीला और स्वच्छ दिखाई दिया, सूरज भी आनबान से चमक रहा था। ट्रॉलीबस की मूंछों में चमकनेवाली बिजली तात्येई को डरावनी नहीं लगी। उसने ज़रा और ध्यान से देखा। बिजली बिलकुल ग़ायब हो गयी और ट्रॉलीबस ऐसे आगे चल पड़ी मानो कुछ हुआ ही न हो।

जिस समय तात्येई खड़ा होकर होटल के सामनेवाली सड़क को देख रहा था, अलीआस कृषिमंत्रालय के भवन में लिफ़्ट में ऊपर जा रहा था।

मंत्री का स्वागतकक्ष खाली था। मेज़ पर रखे रंग-बिरंगे टेलीफ़ोनों के पास एक सुंदर लड़की बैठी थी। उनकी घंटियों की आवाज़ें अलग-अलग तरह की थीं और लड़की कभी एक, कभी

चोंगा उठाकर रख भी न पाती थी कि दूसरे टेलीफ़ोन की घंटी बज उठती; वह कान से लगे टेलीफ़ोन में कुछ बोलती, फिर खाली हाथ से दूसरे टेलीफ़ोन का चोंगा उठाकर शांत स्वर में इस तरह बोलती मानो वह खास तौर से इसी टेलीफ़ोन की घंटी बजने का इन्तज़ार कर रही हो। काफ़ी देर तक यही होता रहा। अलीआस उस लड़की के सामने खड़ा उससे आंखें मिलाकर अभिवादन करने की कोशिश करता रहा, पर जैसे लड़की उसे देख ही नहीं रही थी। वह उसके आरपार खिड़की के बाहर उगे पेड़ को देख रही थी, अपने रंगबिरंगे चोंगों से बात कर रही थी। अलीआस अब तक कई बार खड़ा हो, मुंह भी खोल चुका था पर लड़की चोंगों को उठाकर उनमें मधुर आवाज़ में बोलती रही। अलीआस मुंह बंद किये प्रतीक्षा करता रहा।

अन्त में मौक़ा देखकर बिना अभिवादन कर पाये ही उसने लड़की से पूछा,

"मंत्री कमरे में है?"

"अभी वे कुछ नहीं कर सकते," अपनी पारदर्शक आँखों से उसने अलीआस के आरपार देखते हुए जवाब दिया।

"माफ़ कीजिये, मैं समझा नहीं। वे क्या नहीं कर सकते?"

लड़की की आंखें एकाएक अलीआस पर टिक गयीं मानो अंधेरे में वह उसे अभी ही देख पायी हो।

"मंत्री के पास समय नहीं है। वे व्यस्त हैं। तुमसे नहीं मिल पायेंगे।"

अलीआस कुर्सी पर बैठकर कुछ सोचने लगा।

"तुम अभी-अभी तो आये हो और फ़ौरन मंत्री से मिलना चाहते हो..."

"मैं खुद नहीं आया हूँ। उन्होंने मुझे बुलाया है," अलीआस ने धीरे से कहा।

"तुम कहाँ से आये हो?"

"अबखाज़िया से।"

"कुलनाम?"

"अहबा। अलीआस अहबा। मैं नोवालूनिये गांव में रहता हूँ।"

"तुम्हारा यह नोवालूनिये है कहां? क्या गागरा के पास है? मैंने पिछले साल गागरा में विश्राम किया था।"

"नहीं, हम गागरा से दूर रहते हैं, बिलकुल दूसरी तरफ़।"

"अलीआस अहबा... गांव नोवालूनिये... मैं नहीं जानती। कभी नहीं सुना। कल आना, शाम के समय, दफ़्तर का समय खत्म होने से पहले।"

"कल और दफ़्तर का समय खत्म होने से पहले क्यों? मैं जल्दी में हूँ। मेरे खेत में बहुत काम पड़ा है। मैं भी व्यस्त रहता हूँ।"

"आप लोग कई हैं और वे अकेले हैं, समझे?"

"मैं कह रहा हूँ, मेरे गांव नोवालूनिये में मुझे बहुत काम हैं।"

"तुम्हारे गांव के बारे में कभी सुना ही नहीं। तुम्हारा गांव नोवालूनिये कहां है, मुझे बताओ?"

"नोवालूनिये?" अलीआस अपने गांव को याद करके मुस्करा उठा। "लड़की, हमारे गांव को नहीं देखकर, वहाँ नहीं रहकर तुमने बहुत कुछ खो दिया। हमारे यहां बहुत अच्छा है। हमारा गाँव पहाड़ों में है, पहाड़ ही पहाड़ हैं चारों ओर। पहाड़ी नाले हमारे गाँव से गुज़रते हैं। हालांकि त्बिलिसी से बहुत दूर है पर हमारे यहाँ बहुत अच्छा तम्बाकू पैदा होता है!"

"तम्बाकू?" लड़की ने होंठ सिकोड़े। "मुझे तम्बाकू में रुचि नहीं। अगर वास्तव में आप अबखाज़ियाई लोगों के यहाँ कुछ अच्छा है तो वह है काला सागर। मैं सुखूमी और गागरा में भी विश्राम कर चुकी हूँ। काले सागर से अच्छा आपके यहाँ और कुछ भी नहीं..."

"हमारे नोवालूनिये में भी तो समुद्र है। मंत्री खुद हमारे गाँव में आ चुके है... हमारे गांव को वे अच्छी तरह जानते हैं..."

"और तुम्हें भी जानते हैं?"

"मुझे भी जानते हैं।"

लड़की फ़ौरन उठ खड़ी हुई।

"फिर तुम ने शुरू में ही क्यों नहीं बताया, कॉमरेड अहबा? अहबा क्या आप ही का कुलनाम है?"

"हां, मेरा।"

मंत्री के कमरे के दरवाज़े खुल गये और अलीआस अंदर चला गया।

अलीआस तीन दिनों तक डिज़ाइनरों के साथ पत्ते चुननेवाली मशीन में सुधार करने का काम करता रहा। हालांकि काम में सफलता मिली थी पर तकनीकी दृष्टि से पूर्णतया आदर्श मशीन बनने में अभी काफ़ी देर थी।

तात्येई ने भी अपना समय बेकार नहीं गंवाया। वह संगीत-विद्यालय में गया। अलीआस के साथ उसने ओपेरा "दाईसी" सुना।

तात्येई "दाईसी" को कभी भूल नहीं पायेगा। संगीत मंच के पीछे से आ रहा था और अभिनय रंगमंच पर हो रहा था। तात्येई को लग रहा था जैसे वह यह सब नोवालूनिये में देख और सुन रहा हो, जैसे वह अपने नोवालूनिये में रात में घूमता हुआ चश्मों का कलकल, हरज़ामान का लंबा गीत सुन रहा हो, जैसे तात्येई स्वयं अपखीआरत्मा के तारों पर उंगलियां दौड़ा रहा हो...

खबर सुनकर हरज़ामान की प्रतिक्रिया अपने ढंग की ही हुई, वह बड़बड़ाया,

"क्या कर डाला इस बेवक़ूफ़ ने! उसे त्बिलिसी जाने की सूझी! जैसे वैज्ञानिकों का काम उसके बिना चल ही नहीं रहा हो। पहले यहाँ अपने खेतों में मशीन को आज़माकर देखता, उसके बाद तम्बाकू की पत्तियां चुनने त्बिलिसी गया होता... छी, छी, छी! मेरे सफ़ेद बालों की इज्ज़त खराब करेगा, मेरी ही क्या... हमारे सारे गांव की बदनामी करवायेगा। भला त्बिलिसी में वैज्ञानिकों की कमी है? क्या उनका अपना दिमाग़ काफ़ी नहीं, जो मेरे अनपढ़ बेटे को बुला लिया... भला अलीआस उनकी बराबरी कर सकता है? अपनी बेइज्ज़ती करवायेगा... लोग हमारी हंसी उड़ायेंगे।"

"हरज़ामान, तुम बेकार ही ऐसा कह रहे हो। तुम मुझे एक भी ऐसा आदमी बताओ जो अलीआस की हंसी उड़ा सकता हो। मुझे बताओ... हमारे यहाँ ऐसे लोग नहीं हैं..." जफ़ास से न रहा गया।

"तुम कुछ भी कहो, जफ़ास, हर आदमी को तम्बाकू चुनना नहीं आता, फिर मशीन को चुनने के लिए कैसे मजबूर किया जा सकता है?" हरज़ामान ने अपनी दलील जारी रखी।

"हरज़ामान, लगता है, तुम्हारी याददाश्त कमज़ोर हो गयी है। तुम उस ट्रैक्टर को भूल गये? भूल गये, ट्रैक्टर ने तम्बाकू कैसे रोपा था? यही तो मशीन थी," जफ़ास अपनी बात पर अड़ा रहा। "अलीआस दिन-रात तम्बाकू के खेतों में काम करता है और उसके अनुभव की ही वैज्ञानिकों को ज़रूरत पड़ गयी थी।"

"तुम्हारे मुंह में घी शक्कर," हरज़ामान शान्त होकर बोला। "तुम सोचते हो, मुझे इस बात पर खुशी नहीं कि वह वैज्ञानिकों के पास गया? मुझे खुशी है। पर मैं उसके बारे में डरता हूँ...

मैं अपने दोस्तों की बातचीत सुनता रहा, पर कुछ बोला नहीं। मैं उसे ध्यान से नहीं सुन सका। अलीआस और हरज़ामान के बारे में मैं आश्वस्त था। पर अपने भाग्य के बारे में मैं आश्वस्त नहीं था। मुझे किसी बात से बेचैनी हो रही थी पर वह बात थी क्या, मैं खुद भी समझ नहीं पा रहा था।

शिकार से लौटने के बाद मेरे प्रति हरज़ामान का व्यवहार कुछ बदल गया। मैंने कई बार उसकी खोज भरी नज़रें महसूस की। वह कुछ ऐसी नज़र से मुझे देखने के बाद मुड़कर, कुछ सोचते हुए बैठ जाता। लगता था, वह कुछ जानना चाहता था पर पूछ नहीं पा रहा था और मेरी आंखों में ढूंढने की कोशिश करता था। वह इस तरह जांचते हुए मुझे देखता था जैसे शिकार पर जा रहा हो। वह मेरी आंखों में जवाब ढूंढता था, पर मैं क्या कहता?

मुझे महसूस होने लगा कि वह मेरा राज़ जान गया है। मैं अपनी प्रियतमा को अपनी पलकों में छुपाने की कितनी ही कोशिश करूं, वह हमेशा वहाँ मौजूद रहती थी और सब लोग, जिनमें हरज़ामान भी शामिल था, उसे मेरी आंखों में देख चुके थे।

हां, अबखाज़ियाई रीति-रिवाजों को निभा पाना आसान नहीं! जब तक मैं घर का मेहमान हूँ, जब तक घर में मेरा अतिथि-

सत्कार हो रहा हो, तब तक मैं उस घर की लड़की से अपने प्यार की बात करना तो दूर इसके बारे में सोचने की भी हिम्मत नहीं कर सकता था।

काश! न होते ये अबखाजियाई रीति-रिवाज! और फिर
मौत की धमकी दिये जाने पर भी हरज़ामान अपने रीति-
रिवाजों को नहीं तोड़ेगा, मुझसे नहीं पूछेगा, "बेटा,
क्या तुम अमरा को प्यार करते हो?"
अगर वह मुझसे पूछता ... तो मैं उससे
कह देता ... क्या किसी अबखा-
जियाई घर में ऐसा
हुआ है?

ग्यारह

हरज़ामान ने मुझसे एक बार यूं ही कहा,

"अलोऊ, बेटा, एक-दो दिन के लिए तुम नीचे नोवालूनिये हो आओ। थोड़ा आराम कर लोगे और तुम्हारा मन भी बहल जायेगा। हमारे लिए ताज़ा खबरें भी ले आओगे।"

हरज़ामान जैसे जान गया था कि मैं हर वक़्त किस के बारे में सोचता रहता हूं, उसने शायद मेरे सारे सपने देख लिये थे! मैं पांच मिनट में ही सफ़र के लिए तैयार हो गया। हरज़ामान के लिए खबर लाने मैं ऐसे चल पड़ा मानो मुझे कोई जिम्मेदारी का सरकारी काम सौंपा गया हो। समतल पगडंडियों पर भागते, एक पत्थर से दूसरे पर कूदते, झाड़ियों में रास्ता बनाते मैं उसी दिन सूरज छिपने से पहले नोवालूनिये के पास जा पहुँचा।

मैं चाहे जितना भी तेज चलूं, मेरे विचार मुझसे आगे भाग रहे थे, वे शुरू से ही नोवालूनिये पहुँच चुके थे और मुझे कोड़े से

भी कड़ी चोट मार कर भगाये लिये जा रहे थे। मेरे विचार हरज़ामान के घर में अमरा के पास थे, हालांकि मुझे मालूम भी नहीं था, वह इस समय घर में है या नहीं, वैसे शाम पड़े वह हो भी कहां सकती है?

कम-से-कम एक बार ही सही, इस घर की सीढ़ियों पर चढ़ कर अमरा को एक नज़र देख लूं, उसकी आवाज़ सुन लूं, उसकी आंखों में झांक लूं, उससे हाथ मिला लूं। मेरे लिए यह अगले शरद तक काफ़ी होता जब हम जानवरों को पहाड़ी चरागाहों से नोवालूनिये की हरी-भरी घाटी में हांकने लगेंगे। शायद मैं उसकी आंखों में झांकने, उसकी आवाज सुनने और उसका अभिवादन करने से ज्यादा कुछ नहीं चाहता था क्योंकि अगर हमारी मुलाक़ात अकेले में हो गयी तो मैं उससे क्या कह सकूंगा?

पहाड़ों से गांव तक का मेरा जल्दी-जल्दी का सफ़र भी अब खत्म हो चुका था। मैं अब फाटक खोलकर हरज़ामान के घर के आंगन में घुस रहा हूं। क्या अमरा वास्तव में मेरे आने पर खुश नहीं होगी, क्या वह ऐसा ज़ाहिर करेगी कि उसे कोई खुशी नहीं हुई? बस अब मेरे क़दमों की आहट सुनकर वह बॉलकनी में निकलनेवाली ही है। उस वक़्त मेरा क्या हाल होगा? कहीं मेरे पांव शराबियों की तरह लड़खड़ाने तो नहीं लगेंगे, कहीं मेरा सिर चकराने तो नहीं लगेगा?

घर के अन्दर से बील्या भागी आयी। घबराहट और खुशी के मारे भौंकने की तेज़ आवाज़ की जगह उसके मुंह से दबी-सी कूं-कूं की आवाज़ निकल रही थी। वह अपने अगले पंजे मेरे कंधों पर रखकर खड़ी हो गयी। वह कूं-कूं किये जा रही थी मानो मुझे बहुत महत्वपूर्ण बात बताना चाहती हो पर आदमी की भाषा न जानने के कारण असमर्थ हो। वह घबराहट और बेचैनी से कांप रही थी। उसकी आंखें नम थीं, कभी वह उछलकर पंजे मेरे कंधों पर रख देती, कभी मेरे चारों ओर दौड़ने लगती। अन्त में कुछ आश्वस्त हो वह मुझे घर में ले गयी। साथ ही साथ यह भी ज़ाहिर कर दिया कि इस समय घर में उसके अलावा कोई नहीं।

बील्गा जिस तरह मुझसे मिली, उससे मैं समझ गया, घर में कोई नहीं। ऐसा ही हुआ। दरवाज़े बन्द थे, कहीं किसी का नामो-निशान भी नहीं था। बील्गा इतने अर्थपूर्ण ढंग से मेरी आंखों में देख रही थी मानो मुझसे बिनती कर रही हो कि मैं यहां रुक जाऊं और उसे अकेला न छोड़ूं। मैं खोया-खोया-सा आंगन के बीच में खड़ा था क्योंकि मैं नहीं जानता था, मुझे अब कहां, किस दिशा में और किसलिए जाना है। इस दुनिया में सिर्फ़ एक ही जगह थी, जहां मैं जाना चाहता था, अमरा जहां इस वक़्त हो। पर मैं नहीं जानता था, वह कहां है। सो, मैं किंकर्त्तव्यविमूढ़-सा खड़ा रहा और बील्गा मुझे कहीं न जाने के लिए मनाती रही। उसके बावजूद मैं नहीं रुका। जिधर निगाह गयी, चल दिया। उम्मीद थी, कोई तो मिलेगा जिससे अमरा के बारे में मालूम कर सकूंगा। गांव से गुजरते समय भी मैं सोच रहा था: अमरा को देखने के लिए इस बेताबी से भागे जा रहे हो। पर अगर अचानक वह ज़मीन से निकल कर तुम्हारे सामने आ खड़ी हो तो तुम उससे क्या कहोगे, क्या तुम इस भेंट के लिए इस समय तैयार हो? घर की बात तो और है। वहां किसी तरह छुपा नहीं जा सकता। दुआ-सलाम करनी पड़ती है, हाल-चाल पूछना होता है – सब धीरे-धीरे होता है। और यहां रास्ते में शायद मेरी ज़बान ही तालू से चिपक जायेगी। रास्ते में न मिले, यही ठीक होगा।

गाँव मौत की सी नींद सो रहा था। न कोई दिखाई दे रहा था, न कोई आवाज़ आ रही थी। गाँव में कुछ अजीब उदासीन-सा अहसास हो रहा था, कोई गरमाहट न थी, मानो उसकी आत्मा निकल गयी हो, केवल बेकार, अनजाने, अस्नेही मकान ही बच रहे हों। मालूम नहीं कैसे मुझे पूर्वाभास हो गया कि अमरा न तो गांव में ही है, न कहीं आस-पास, वह कहीं दूर, बहुत दूर चली गयी है। अगर ऐसा न होता तो मुझे ज़मीन इतनी सुनसान और सर्द नहीं लगती।

काफ़ी दूर कोई आदमी दिखाई दिया। शुरू में तो मैं पहचान ही नहीं सका कि वह मर्द है या औरत। फिर मुझे युवती का आभास

हुआ और बाद में अमरा का। तो फिर अब उससे यहीं मिल लूं। मैं तो कुछ कहने से रहा, हां, कम-से-कम नज़र भर देख तो लूं! जैसे-जैसे हम एक-दूसरे के क़रीब पहुंचते गये, मुझे साफ़ दिखाई देने लगा कि न तो वह शकल-सूरत है, न ही वह चाल है। फिर अचानक ही मैं उस लड़की को पहचान गया, वह अगरा थी।

"अगरा!" मैंने ही पहले आवाज़ दी। "लगता है, तुमसे मिलना मेरे लिए शुभ होगा। चरागाह से गांव लौटने के बाद सबसे पहले तुम्हीं से मुलाक़ात हुई है। तुमसे हुई मुलाक़ात आगे की सारी मुलाक़ातें सफल बना दे। और तुम्हारी भी।"

"मुझसे हुई मुलाक़ात का इससे क्या वास्ता? और तुम कौन-सी मुलाक़ातों में सफल होने की बात कर रहे हो? मैं किसी भी हालत में उसकी जगह नहीं ले सकती जिसे तुम ढूंढ़ रहे हो। तुम्हें मालूम होना चाहिए, वह नोवालूनिये में नहीं, बाहर गयी हुई है।"

कुछ देर तक मैं कुछ भी जवाब नहीं दे पाया हालांकि मेरा मुंह पूरा खुल गया था।

"अगरा, तुम यह क्या कह रही हो!" मुझे जो कहना था उसकी जगह मुंह से एक दर्दभरी आह निकल गयी, "कौन कहाँ चला गया?"

"बनो मत, तुम जानते हो किसकी बात हो रही है। मैं साफ़-साफ़ बताये देती हूं: अमरा नहीं है, यहां कहीं नहीं है। वह यहां से उड़ चुकी है। वह अपने प्यार के पंखों के सहारे मंडरा रही है। वह बहुत ऊँचाई पर मंडरा रही है और अब उसका तुमसे कोई वास्ता नहीं रहा। अब तुम अपने मनहूस चरागाह में बैठे रहो।"

"कौन उड़ गया? कैसे पंख?" मैं बुरी तरह तुतलाने लगा।

"पंख नहीं, रेलगाड़ी ही सही। रेलगाड़ी में बैठकर चली गयी।"

"क्या उसने शादी कर ली?" अनचाहे मेरी जबान से निकल गया हालांकि मैं जानता था कि हरजामान की जानकारी के बिना यह असंभव था यानी मुझे भी जरूर मालूम होता।

"अभी तक तो शादी नहीं की पर आसार ऐसे ही दिखाई देते हैं।" जाहिर था मुझे परेशान होते देख अगरा को मजा आ रहा था। "पता नहीं तुम अब उस तक पहुंच भी सकोगे या नहीं।"

"पर आखिर वह कहां गयी, किसके साथ गयी?"

"अपने प्यारे अलगेरी के साथ सुखूमी गयी। बहाना तात्पेई का बनाया कि उसे संगीत विद्यालय में भरती कराना है।"

अब सारी बात समझ में आ गयी थी, न कुछ पूछने की जरूरत रही, न ही कहीं जाने की। पर अगरा क्यों मुझसे चिढ़ी-चिढ़ी-सी बात कर रही है। मुझे कड़वी लगनेवाली बात इतनी खुश होकर क्यों बता रही है। इसमें डाह और खुशी दोनों का समावेश था। हां, बिलकुल स्पष्ट डाह भरी खुशी के साथ उसने मुझे उनके जाने के बारे में बताया। यह क्यों मुझसे चिढ़ी हुई है, मैंने उसका क्या बुरा किया है? उसके सारे हावभाव बता रहे हैं कि मुझे इससे भी कड़ी सजा मिलनी चाहिए। दूसरे तड़प रहे हैं, जाओ अब तुम भी तड़पो... अच्छा, तो यह मामला है, क्या वास्तव में? मैंने अगरा से साफ़-साफ़ पूछा:

"सुनो, मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है जो तुम मुझसे इतनी नाराज़ हो, मैंने तुम्हें कोई नुक़सान तो नहीं पहुँचाया।"

"अच्छा होता, अगर तुमने नाराज़ किया होता," अनचाहे अगरा के मुंह से निकल गया। अपनी ग़लती समझकर वह होंठ चबाने लगी पर देर हो चुकी थी। तब अगरा भी साफ़-साफ़ कहने लगी, "तुम मेरा नहीं, पहले अपना अपमान कर रहे हो।"

"सो कैसे?"

"अमरा ने तुम्हारी आंखों पर पट्टी बांध दी है। अपनी अमरा के सिवा तुम्हें कोई दिखाई नहीं देता, न ही तुम किसी की ओर ध्यान देते हो। तुम उनकी ओर ध्यान नहीं देते जो तुम्हारा भला चाहते हैं और ग़ैर इंजीनियरों के साथ सुखूमी नहीं चले जाते हैं।"

मैंने देखा कि अगरा इस तरह कांप रही है जैसे उसे दौरा पड़ गया हो। बेचारी अगरा। मैं बेशक एकदम सब कुछ समझ गया। वह साफ़ दिल से मुझसे सब कुछ नहीं कह सकती थी, पर जो कुछ उसने कहा वह हमारे पहाड़ों में पली लड़की के लिए बहुत ज्यादा था। यह पहली बार हो रहा है कि कोई अबखाजियाई पर्वतीय बाला लड़के को यह समझने दे कि वह उसे प्यार करती, उसके बारे में सोचती है। बेचारी अगरा! सच मानिए, उस समय मुझे उस पर बहुत दया आयी। पर, अफ़सोस, उसके उद्वेग और साफ़दिली के जवाब में मुझे दया के अलावा कुछ नहीं सूझा। हमारे विचारों का मिलन न हो सका, वे एक–दूसरे में लीन न हो सके, हमारी आकांक्षाएं और सपने सम्मत न हो सके। बेचारी अगरा, बड़ा कठिन होगा तुझे तभी तूने वह किया जो हमारे पहाड़ों की कोई दूसरी लड़की नहीं कर सकती। मेरे लिए भी यह मुश्किल होगा, पर हम दोनों के दुख एक दूसरे के दुख को खत्म नहीं कर सकेंगे। तुम मेरे बारे में सोचती हो और मैं दूसरी के बारे में। अगरा अपनी बेबसी जानती थी। इस समय उसके मुंह पर उसकी हंसी उड़ाई जा सकती थी, उसे अपमानित और तिरस्कृत किया जा सकता था। वह मेरे बोलने की प्रतीक्षा में थी। अपने स्वर में यथासंभव नम्रता और प्यार घोलकर मैं बोला:

"मुझे माफ़ करना, अगरा... माफ़ करो, पर मैं..."

"मैं जानती हूँ, तुम दूसरी लड़की को प्यार करते हो। तब फिर भागो उसके पीछे, पकड़ लो, ढूंढ़ लो उसे, इंजीनियर से छीन लो, तुम्हारी यात्रा सफल हो!"

अगरा की बातें पूरी तरह सुने बिना ही मैं लगभग भागता हुआ गांव के दूसरे छोर तक जा पहुंचा। अगरा मेरे पीछे शायद कुछ बोली होगी, पर मैं सुन नहीं पाया।

मुझे लग रहा था जैसे ही मैं सुखूमी में रेल से उतरूंगा, मुझे अमरा और अलगेरी मिल जायेंगे। पर वास्तव में शहर में आने जानेवालों की इतनी भारी भीड़ थी कि मैं उसी समय उनमें खो

गया। सड़कों पर चलते-चलते मैं कभी एक मोड़ पर मुड़ जाता, कभी दूसरे पर। न मेरी कोई खास दिशा थी, न कोई स्पष्ट लक्ष्य था। लोग मुझसे आगे निकल रहे हैं क्योंकि जिसका कोई लक्ष्य होता है, वह उन लोगों से ज्यादा तेज़ चलता है जिन्हें अपना लक्ष्य मालूम नहीं होता। आने जानेवाले लोग बहुत थे पर एक भी जाना पहचाना नहीं था। अमरा, तात्येई और इस अलगेरी को छोड़कर सुखूमी में मेरी जान-पहचान का कोई भी न था। मेरे पैर मुझे संगीत विद्यालय ले आये। पहाड़ की तलहटी में बनी इस इमारत की खिड़की से बेतरतीब आवाज़ें आ रही थीं: कभी वायोलिन वादन का टुकड़ा सुनाई देता, कभी पियानो का, कभी गाने का, तो कभी उत्साहभरी आवाजें। लगता था, वहां परीक्षाएं हो रही थीं। मैं विद्यालय की इमारत के बाहर काफ़ी देर खड़ा रहने के बाद अन्दर चला गया। मेज़ के पास बैठी एक महिला ने अपने चश्मे से मेरी ओर देखा:

"आप किसी को ढूँढ़ रहे हैं?"

"हां। अपने गांववाले को ढूँढ़ रहा हूं। वह आपके यहाँ दाखिला लेने आया है। अहबा ... उसका नाम तात्येई अहबा है।"

इसी समय दरवाज़े के पीछे से जाना-पहचाना राग सुनाई दिया। मुझे लगा जैसे मैं एकाएक हरज़ामान के आंगन में पहुंच गया हूँ और तात्येई वहां बैठा हरज़ामान का पुराना अपखीआर्त्सा बजा रहा है। राग मेरे दिल में पैठकर पुराने घावों को हरा किये जा रही थी क्योंकि जब मैं हरज़ामान के घर में तात्येई का वादन सुन रहा था, अमरा मेरे पास ही बैठी थी, मेरी आंखें उसी पर टिकी थीं। तात्येई के हाथों में झंकृत हो रहा अपखीआर्त्सा को मैं हज़ारों में पहचान लेता, और उस समय भी मैंने उसे पहचान लिया था।

चश्मेवाली महिला एक लम्बी सूची पढ़ने लगी फिर रूखी आवाज़ में बोली:

"तात्येई अहबा इस समय परीक्षा दे रहा है। अगर आप इन्तज़ार करना चाहें तो इस कुर्सी पर बैठ जाइये। खामोशी से बैठे रहिये क्योंकि हमारे यहां परीक्षा चल रही है।"

"आप चिंता न कीजिये, मैं थोड़ी देर खड़ा रह लूँगा।"

"मैं नहीं चाहती कि आप मेरी आंखों के आगे मँडराते रहें। जहां बैठने के लिए आपसे कह रही हूं, वहीं बैठ जाइये।"

मैं दीवार के पास, कुर्सी पर बैठ गया। अपखीआर्त्सा का वादन अभी बन्द नहीं हुआ था लेकिन चश्मेवाली महिला की रूखी-सूखी बातों से उसका सम्मोहन कब का नष्ट हो चुका था। मैं बेचैनी से कुलबुलाता, कुछ देर कुर्सी पर बैठा रहा। मैं जहां बैठा था, वहां से दूसरी मंजिल को जानेवाली सीढ़ी दिखाई दे रही थी, जहां से तात्येई का संगीत सुनाई दे रहा था। संगीत बंद हो गया और थोड़ी देर बाद सीढ़ियों पर तात्येई दिखाई दिया। मैं उससे मिलने के लिए खड़ा हो गया और वह मुझे देखते ही सीढ़ियां फांदता मेरी ओर लपका।

"क्या हाल हैं?" मैंने तात्येई से पूछा हालांकि पूछने की कोई जरूरत नहीं थी। किशोर की खुशी से चमकती आँखें शब्दों से कहीं ज्यादा बता रही थीं।

"मैं परीक्षा दे रहा हूं और लगता है सब ठीक चल रहा है। पर तुम्हारा सुखूमी आना कैसे हुआ?"

"कुछ जरूरी काम थे। सोचा, चल के देखूं, तात्येई के क्या हाल हैं। और अमरा कहाँ है?"

"वह यहीं सुखूमी में है। वही मुझे यहां लायी थी जैसे मैं बच्चा हूं और अकेला रास्ता ही नहीं ढूँढ़ पाता। उसे यहीं कहीं होना चाहिए। जब मैं परीक्षा दे रहा होता हूं, वह अन्दर चौक में नहीं आती बल्कि सड़क पर ही इन्तज़ार करती रहती है।"

हम चौक से सड़क पर पहुँचे और वास्तव में हमें अमरा और अलगेरी उसी वक्त दिखाई दे गये। इसी समय मैंने अपनी आंखों से वह सब देखा जिसके बारे में मैंने अगरा से सुना था। यानी अगरा ने मुझे सब कुछ सच-सच बताया था, कुछ गढ़ा नहीं था। काश, उसने ये बातें गढ़ी ही होतीं तो अच्छा रहता। अच्छा होता अगर वह इससे हज़ारों गुना ज्यादा बातें गढ़ती, अपनी कल्पना में सारी विपत्तियों का सहारा लेती, चाहे रेलें पटरियों से उतर जातीं,

जहाज डूब जाते, जमीन भूकम्प से फट जाती, छतें आग से ढह जातीं, लोग मर जाते और उनके साथ अमरा भी। यह सब उससे कहीं कम होता जो मैंने अब देखा। मुझे जूड़ी ताप-सा हो आया, मेरे पैर लंगड़े घोड़े की तरह आपस में टकराने लगे। तात्येई खुशी से चिल्ला उठा,

"अमरा, अलगेरी, मैं यहां हूं। अलोऊ भी मेरे साथ है!"

अमरा तो जैसे मुझे देखकर खिल उठी लेकिन मैं अपने चेहरे से किसी तरह की खुशी जाहिर नहीं कर सका। मेरी जबान मेरे वश में न थी, होंठ हिल नहीं रहे थे। फिर मैं यह भी दिखाने की कोशिश कर रहा था कि उनसे मैं बिलकुल भी मिलना नहीं चाहता था और मुझे यह मुलाक़ात अच्छी नहीं लगी। अमरा मेरी हालत पर ध्यान दिये बिना एक के बाद एक सवाल करने लगी, चरागाह में क्या हाल हैं, नोवालूनिये में कैसा है, मैं सुखूमी कैसे आया, संगीत विद्यालय किस तरह पहुंचा। मैं जवाब देने की कोशिश कर रहा था पर मेरे शब्द रूखे, बिलकुल ठंडे, बिलकुल अस्पष्ट थे। सबसे पहले अलगेरी का ध्यान मेरी ओर गया। वह मेरी मनोदशा ठीक-ठीक समझ गया। उसके माथे पर बल पड़ गये, चेहरे पर उदासी छा गयी। धीरे-धीरे अमरा भी समझ गयी। वह हम दोनों के बीच में भेड़िये और चीते के बीच खड़े मेमने की तरह थी। फिर भी उसने सवाल पूछना जारी रखा जिससे हमें अटपटा नहीं महसूस हो।

"अच्छा तो तुम्हारा यहां कैसे आना हुआ?"

"जरूरी था। कुछ जरूरी काम थे।"

"और क्या यहां काफ़ी दिन रहने का इरादा है?"

"थोड़ी देर। या तो आज चला जाऊंगा या कल सुबह तक।"

"ऐसी क्या जल्दी है, रोज तो सुखूमी आना होता नहीं।"

"मेरे पास शहर घूमने के लिए समय कहां है। हम अभी पहाड़ से नीचे तो उतरे ही नहीं। हरजामान भी मेरी राह देख रहे होंगे।"

"तुम्हीं जानो। अच्छा, चलें, हम एक ही जगह खड़े क्यों हैं। हमें मिले बहुत दिन हो गये, सच?"

क्या सच, कौन-सा सच? मैं उनसे और ज्यादा बात न कर

सका और तेजी से मुड़कर दूर चला गया। वे तीनों वहीं खड़े रह गये। शायद वे शुरू में समझ नहीं पाये कि मैं बिलकुल जा रहा हूं और जब तक समझे, मैं मोड़ पर मुड़ चुका था।

"अबखाजिया" होटल में मैंने एक कमरा लिया और बिना भूख लगे खाना खाकर सोने की तैयारी करने लगा। पर नयी जगह में मुझसे लेटा नहीं जा रहा था। मेरी खिड़की और बॉलकनी समुद्र की तरफ़ खुलती थी। मैं उठकर बॉलकनी में आया। नीचे भीड़ से भरी सड़क बिजली के प्रकाश में चमक रही थी। हँसी, मज़ाक और बातों के कुछ हिस्से मुझे बालकनी में सुनाई दे रहे थे। समुद्र की ओर से ताजा हवा का झोंका बह रहा था। चांदनी समुद्र के एक छोर से दूसरे छोर तक फैली हुई थी। छोटी-छोटी लहरें चांदी की तरह चमचमाती चांदनी में झिलमिला रही थीं मानो वहां भड़कीले पंखोंवाली अनगनित तितलियां उड़ रही हों। मैं बॉलकनी में काफ़ी देर तक खड़ा कभी समुद्र से सड़क की ओर तो कभी भीड़भरी सड़क से समुद्र की ओर नजर दौड़ाता रहा। कभी-कभी समुद्र और सड़क मेरी आंखों से ओझल हो जाते, सब कुछ धुंधला जाता, केवल फुटपाथ पर खड़े अमरा और अलगेरी साथ-साथ दिखाई देने लगते। मैं ऐसे ही सो भी जाता और सोते हुए भी यही देखता, पर शायद मेरी मुसीबतें यहीं खत्म नहीं होनेवाली थीं। अचानक नीचे पैदल चल रहे लोगों के बीच मुझे दुबारा अमरा और वही पराया इंजीनियर दिखाई दे गया, जिससे मुझे नफ़रत थी। वे एक-दूसरे के हाथ में हाथ डाले, गुफ़्तगू करते धीरे-धीरे चल रहे थे। निस्सन्देह कटुता व निराशा भरे अकेलेपन में जमीन आसमान के बीच लटकता-सा मुझे उन्होंने नहीं देखा था।

बारह

पहाड़ से उतरते समय मैंने मन में सोची बात पल भर की देरी किये बिना पूरी कर डालने की ठान ली। हरजामान के घर गये बिना मैं सीधे जफ़ास के यहां रहने चला गया। गांव के अन्य लोगों की तरह जफ़ास के लिए भी यह अचम्भे की बात हुई। मैं नहीं जानता, जफ़ास यह चाहता था या नहीं पर मैं उसके साथ उसके घर गया और रहने के लिए वहीं रुक गया। जफ़ास ने इसे अपना कर्तव्य समझकर मुझे जगह दे दी।

न चाहते हुए भी मैंने हरजामान के परिवार को परेशानी में डाल दिया। वे एक-दूसरे की ओर देखते हुए मालूम करने की कोशिश कर रहे थे कि मेरा अपमान किसने किया है। हरजामान सोच रहा था, मुझे उस समय कोई बात बुरी लग गयी, जब मैं पहाड़ से नीचे आया था और वह खुद ऊपर ही था। घरवाले सोच रहे थे, पहाड़ पर मेरे और बाबा के बीच किसी तरह का मनमुटाव हो गया। ऐसा हुआ या नहीं पर इस मित्र परिवार में अविश्वास की छाया फैल गयी। हालांकि परिवार में कोई इसके बारे में बात नहीं करता था पर परिवार के सदस्यों के आपसी सम्बन्ध बदल गये, घर का हर आदमी एक-दूसरे से कतराने की कोशिश करने लगा।

इसका अन्त यहीं नहीं हुआ : हरज़ामान और जफ़ास के परिवार जिनमें काफ़ी दोस्ती थी, एक दूसरे को शक और उदासीन दृष्टि से देखने लगे। इसके अलावा, सारा गांव इसकी चर्चा करने लगा।

खुश थी तो सिर्फ़ अगरा। उसने मेरे हरज़ामान का घर छोड़ने का अर्थ अपने ढंग से ही लगाया। उसने सोचा, अमरा से मेरी लड़ाई हो गयी है, मैं अब आजाद हूं और उसे रोकनेवाला अब कोई नहीं रहा। वह अपने अन्दाज के सही साबित होने के इन्तज़ार में थी।

मेरे लिए भी यह सब आसान न था। जगह मिल जाने के बाद मुझे आजाद हो जाने की, किसी पर निर्भर न रहने की आशा थी। आज़ादी तो मुझे मिल गयी लेकिन गांव में मैं बिलकुल पराया और ग़ैरज़रूरी हो गया। मैं लोगों से कतराने लगा, हरज़ामान के

परिवार से छुपने लगा पर सबसे ज्यादा डर मुझे अमरा से मुलाक़ात होने का लगता था। जिस परिवार के साथ मैं पहले रहता रहा था, जो मेरा खयाल रखता था, उससे मैं एक बार भी मिलने नहीं गया। मैंने एक बार भी नहीं पूछा कि वे कैसे रह रहे हैं, उनकी तबीयत कैसी है।

शुरू में मैं सोचता था, आजाद होने के बाद जैसे जी चाहेगा, रहूंगा, जो जी में आये, करूंगा। पर हरजामान के परिवार के अपनेपन का आदी हो जाने के कारण मैं बिलकुल उदास और दुखी रहने लगा।

अचानक एक दिन अमरा आ पहुंची। उससे मुलाक़ात के लिए मैं बिलकुल तैयार न था। उसको अपने नये घर के आंगन में, जहां मैं उदास बैठा उसके बारे में सोचता रहता था, नज़दीक पाकर मैं एकदम हक्का-बक्का रह गया। किसी तरह उसका अभिवादन भर कर सका। अमरा के हाथों में एक पोटली थी। मैंने उसे घर के अन्दर आने को कहा। मेरे अलावा घर में कोई न था। लेकिन अन्दर भी बात न हो सकी। हम पहली बार मिले अपरिचितों की तरह बैठे रहे। उससे बात करना मुझे बश से बाहर मालूम पड़ रहा था। मैं उससे कुछ भी नहीं बोल पाया। आखिर वह खुद ही बोली,

"अलीऊ, मैं तुम्हारी चीजें लायी हूँ जिन्हें तुम हमारे यहां भूल आये थे। घर में लोग तुम्हारे आने की बात सोच रहे थे पर इसका कोई संकेत न पाकर उन्होंने मुझे भेजने का फ़ैसला किया। तुम्हें इन चीज़ों की ज़रूरत पड़ सकती है।"

"तुमने बेकार तकलीफ़ की, अमरा। अगर मुझे इन चीज़ों की ज़रूरत होती तो मैं खुद ही आ जाता।"

"ऐसा लग रहा है जैसे हम तुम्हारी चीजें तुम्हारे पीछे से भेज रहे हैं, जैसे हमें खुशी हुई हो और हम इस इन्तज़ार में हों कि कब तुम हमारे यहां से जाओ, पर तुम इस तरह अचानक हमें छोड़कर चले गये कि हम समझ नहीं पाये क्या सोचें, क्या अन्दाज लगायें कि तुम्हें क्या हो गया, या फिर शायद हमसे ही कोई ग़लती हो गयी..."

"ऐसा तो बेकार ही सोचती हो," मैंने कुछ-न-कुछ कहने के इरादे से, धीरे से कहा।

अमरा के गाल सुर्ख़ हो गये, आंखों में गुस्सा झलमला उठा और वह असंतुष्ट आवाज़ में बोली :

"तुम्हें हुआ क्या है, अलोऊ? तुम्हें बताना चाहिए। तुम हमारा घर छोड़ कर चले आये और तुम्हारे बग़ैर सब इस तरह उदास और परेशान हैं जैसे घर में लाश पड़ी हो। सब मुझसे नाराज़ हैं, मेरी तरफ़ देखते तक नहीं। मैं यह महसूस करती हूँ... वे सोचते हैं शायद तुम्हारा तिरस्कार मैंने ही किया है। लेकिन मैंने तुम्हारी क्या बुराई की है, तुम्हें मुझको बताना चाहिए जिससे मैं अपने घर के लोगों को समझा सकूं। शायद मैंने तुम्हारे साथ कोई अन्याय किया है?"

मैं उससे क्या कहूं? मेरी हर बात उल्टी पड़ रही थी। दूसरे शब्दों में नोवालूनिये आने के बाद से ही भाग्य ने मेरा साथ नहीं दिया था? मैं क्यों उनके घर में रहा? मुझे पूछताछ कर लेनी चाहिए थी कि जिस परिवार में मैं रहने जा रहा हूँ, उसमें कौन-कौन हैं। और उसी परिवार में मेरी मुलाक़ात अमरा से हो गयी। उसी के घर में, उसके निकटता में मेरे हाथ-पाँव बंध गये थे, ज़बान पर ताला पड़ गया था। जो सब दिल में छुपाये फिर रहा था, वह अमरा को न बता सका, मेरी हिम्मत ही नहीं हुई थी। और अब जब अमरा को बताने का मौक़ा मिला तो मैंने उनका घर ही छोड़ दिया था। यह और भी बुरा हुआ था। भला इसके बाद कोई कह सकेगा कि पर्वतीय लोगों के रीति-रिवाजों का आदी होना आसान काम है।

अभी तक अमरा के साथ मेरे सम्बन्ध अच्छे और मैत्रीपूर्ण थे। मैं उससे अपने दुख-दर्द के बारे में कुछ न कह सका था, अब स्वतन्त्र होने के बाद दिल खोलकर सब कुछ बता देने का मौक़ा मिला था तो हमारी बातचीत ही कुछ अलग ढंग से शुरु हुई थी। परिस्थितियों के इस तरह पलटा खा जाने के बाद उससे क्या कहा जाये?

"अमरा, तुम्हारी कोई ग़लती नहीं। तुमने... अमरा... तुमने... कभी कुछ भी नहीं... बिलकुल भी नहीं..." स्वयं पर विश्वास न करते हुए मैं बड़बड़ाया। मैंने देखा, अमरा को भी विश्वास नहीं आया। "तुम्हारा परिवार मेरा इतना ख़याल रखता था, इतना नम्र था कि मैं उसके बिलकुल भी क़ाबिल नहीं।"

"बाबा से भी तुम यही बोले थे। चलो तुम्हारी बात मान लेती हूँ। पर तुम अचानक चले गये जैसे घर छोड़ने की अनुमति न मिलने का डर तुम्हें हो। क्या हमारे यहां आकर, हमसे मिलकर, हमें अपने जाने के बारे में पहले से नहीं बता सकते थे? हमसे भला, ऐसी क्या ग़लती हो गयी जो तुम्हें ऐसा करना पड़ा?"

मैं क्या कहता उससे? उसकी बात बिलकुल ठीक थी। मैं अपनी हरकत सही साबित नहीं कर सकता था। पर क्या घर छोड़ने का असली कारण बता पाना मेरे लिए संभव था? मैंने उनका घर अमरा से खुलकर बात करने का मौक़ा पाने के लिए छोड़ा था पर अब तो यह पहले से भी ज़्यादा कठिन हो गया था।

क्या वह मेरी बात सुनने और मुझ पर विश्वास करने के लिए तैयार होगी?

"जानती हो, अमरा, मैं इस घटना को तुम लोगों जितना महत्व नहीं दे रहा। इसमें कौन-सी ऐसी-वैसी बात हो गयी, मेरी समझ में नहीं आ रहा," मैंने गिड़गिड़ाती, आत्म जुगुप्सा भरी आवाज़ में जवाब दिया।

"अलोऊ," आंखें तरेरते हुए अमरा बोली, "तुम यह कैसे कह सकते हो कि तुमने इस बात को कोई महत्व नहीं दिया? अगर तुमने इस समय हमारे परिवार को, बाबा को देखा होता तो तुम इस तरह हमारा तिरस्कार नहीं कर पाते।"

"देखिये अमरा जी, आप लोगों ने मेरा बहुत-बहुत ख़याल रखा... मैं आप लोगों पर अर्से तक बोझ नहीं बना रहना चाहता था... मुझे शिष्टाचार का भी तो ध्यान रखना चाहिए था न..."

"ठीक है, अलोऊ, अगर तुम चाहते हो तो मैं इस पर विश्वास किये लेती हूँ, पर क्या इस समस्या को दूसरी तरह से हल नहीं किया जा सकता था?"

"मेरे पास कोई और रास्ता नहीं था।"

"अलोऊ, अगर मुझसे कोई कहता कि हमारे बीच में ऐसी बात होगी, तो मैंने विश्वास नहीं किया होता। मैं ऐसे आदमी को छोड़ कर चली जाती। पर मैं क्या सुन रही हूँ? तुम कहते हो, हमने तुम्हारे लिए बहुत कुछ किया है। फिर तुम हमें छोड़ भी आये। इस तरह तो तुम न केवल हम लोगों बल्कि सारे गांव के सामने यह पहेली रख रहे हो कि तुमने ऐसा क्यों किया?"

मैंने सिर झुका लिया क्योंकि अपनी बात का औचित्य सिद्ध करने के लिए मेरे पास शब्द नहीं थे और न विरोध करने के लिए कोई तर्क ही था।

"तो, महाशय, सारा मामला ही उलझाकर रख दिया, अब इससे बच निकलने का कोई रास्ता नहीं," अमरा की ओर देखते हुए मैं मन में सोच रहा था। उम्मीद थी, बंधन खोल लूँगा, पर मैंने उसमें एक गांठ और कस कर लगा दी थी। मैं अमरा को उसके घर में कुछ भी साफ़-साफ़ नहीं कह सका था, सब कुछ दिल में छुपाये रहा था, इसी आशा से कि अब उसके आगे अपना दिल खोल सकूंगा। पर क्या वह मेरी बात सुनने के लिए तैयार होगी? क्या मेरे दिल का धड़कना बन्द होने तक सब ऐसे ही रहेगा?"

"मेरा इरादा तनिक भी बुरा नहीं था," अमरा से बस मैं इतना ही कह पाया।

अमरा चली गयी। मैं उसे फाटक तक छोड़ने गया।

हरजामान दिन-रात सोचता रहता कि मैंने उसका तिरस्कार किया था और जितना ज़्यादा वह उसके बारे में सोचता, उतना ही ज़्यादा उसका संदेह पक्का होता जाता। उसे इसमें कोई संदेह

नहीं था कि मैंने अमरा के कारण ही उसका घर छोड़ा है। वह जानता था, मैं अमरा की तसवीर अपने सीने से लगाये रहता हूँ। शिकार के दौरान तसवीर के अचानक गिर जाने से वह अमरा को पहचान गया था। पर अमरा की क्या ग़लती थी, वह ख़ुद पता लगाना चाहता था। इसलिए एक बार जब घर में अमरा के अलावा कोई न था, उसने उससे सीधे पूछ लिया:

"बेटी अमरा, तुम्हारी कभी अलोऊ से लड़ाई तो नहीं हुई?"

"आप भी क्या कह रहे हैं, बाबा, कभी नहीं।"

अमरा ने निश्छल आंखों से बाबा की ओर देखा और उसने उस पर विश्वास कर लिया। फिर भी, मेरे चले जाने के कारण के बारे में जानने को वह परेशान होता रहा। "आख़िर हमारी सारी ग़लतफ़हमियों की जड़ क्या है? अमरा की ग़लती नहीं, यह उसकी आंखों से साफ़ पता चलता है। उस पर संदेह बेकार है। लगता है, कटु शब्दों का इस्तेमाल किया गया होगा," सच्चाई की तह तक न पहुंच पाने पर हरजामान ने सोचा।

हरजामान का सारा परिवार अपनी चिंताओं में जिये जा रहा था, परिवार का हर सदस्य अपने-अपने लक्ष्य को प्राप्त करने की कोशिश में लगा था।

अलीआस अपनी मशीन में व्यस्त था। वह लोगों के काम का बोझ हल्का करने के उद्देश्य से तम्बाकू के पत्ते चुननेवाली मशीन में जल्दी से जल्दी सुधार करना चाहता था।

हरजामान अकसर अपने घर के चारों ओर चक्कर लगाता, आंगन बुहारता, बग़ीचे में अंगूर की बेलें बांधता और सोचा करता कि जब वह यह संसार छोड़ देगा, उसके घर में उसके वंश को कोई आगे बढ़ायेगा या नहीं और वह कौन होगा।

देस अपनी बेटी को सुखी होते देखने की प्रतीक्षा कर रही थी। वह चाहती थी, उसकी बेटी को इतना सुख मिले, जितना किसी को नहीं मिला हो।

पर अमरा ख़ुद क्या कर रही थी? वह अपने घर, घरवालों, माता, पिता, बाबा को प्यार करती थी, वह सारे गांव को,

अपने सारे साथियों को प्यार करती थी। वह सबको प्यार करती थी।

लेकिन अब उसके जीवन में बिलकुल दूसरा ही प्यार आ गया था। इस प्यार ने उसे, उसके सारे विचारों, सारे सपनों को जकड़ लिया था। अमरा व्याकुल-सी घूमती फिरती, हर पल अपने प्रियतम के बारे में ही सोचती रहती। उसके बिना वह अपने भावी जीवन की कल्पना भी नहीं कर सकती थी। उसे अपने इर्द-गिर्द हर चीज़ प्यार से पूरित, जीवित महसूस होती। अमरा को अब अपने आगे एक बिलकुल नयी और अज्ञात दुनिया दिखाई देती। उसे उसमें झांक कर देखने की उत्कट इच्छा होती पर डरती थी। उसे उसमें अलगेरी के साथ अपना सुखी जीवन नज़र आ रहा था। क्या उसका सुखी जीवन हमेशा वैसा ही रहेगा, जिस तरह वह इस समय कल्पना कर रही है? अपने भावी सुखी जीवन को कैसे देख और पहचान सकती है? अमरा केवल अलगेरी के साथ ही जीवन भर रहने की कल्पना कर सकती थी।

और माँ, बाबा? तो जीवन के प्रति उनका अपना ही दृष्टिकोण है, उससे एकदम भिन्न। माँ की सबसे बड़ी इच्छा है, बेटी की शादी गांव की सीमा से बाहर न हो। बाबा के लिए दुनिया और भी छोटी है। अगर वे सोचने लगें कि उनकी लाड़ली पोती अपने पुराने आंगन से प्रियतम के साथ चिड़िया की तरह उड़ जायेगी, तो उन्हें बुखार ही चढ़ आयेगा। उसके साथ ही घर के दरवाज़े हमेशा-हमेशा के लिए बन्द हो जायेंगे। उनका पुराना अहवा वंश समाप्त हो जायेगा। नहीं! वृद्ध को इस विचार मात्र से ही डर लगता है। अमरा घर में ही रह जाये तो अच्छा रहे जिससे उसको प्यार करनेवाला पुरुष उसके वंशवृक्ष का युवा स्वामी बनकर आ जाये।

मैं हरजामान की बात समझ रहा था, मुझे लग रहा था कि उसने कुछ योजनाएं मुझे ध्यान में रख कर बनायी हैं, पर यह सब कल्पना थी क्योंकि बहुत कुछ खुद अमरा पर निर्भर करता था।

अमरा अपने घर को प्यार करने लगे, इसलिए वह उसे खुश रख रहा था, घर और आंगन सजा रहा था, साफ़ कर रहा था,

धो रहा था, स्नेह और प्यार से अमरा को घर के कामकाज की ओर आकृष्ट कर रहा था।

एक बार हमारे पहाड़ पर जाने से पहले वह हिरण का एक छौना आंगन में ले आया जो मुश्किल से अपनी पतली कमज़ोर टांगों पर खड़ा हो पा रहा था। उसने छौना अमरा को सौंप दिया। बाबा का उसका इतना खयाल रखना अमरा के दिल को छू गया, वह उसे प्यार करने लगी पर इसके साथ ही उसे उस निरीह जानवर पर दया भी आयी। बाबा के नाराज़ हो जाने की बात अगर वह नहीं जानती तो उसे छोड़ भी देती। अमरा स्कूल से जल्दी आकर खुद इस जानवर को खिलाती-पिलाती, बड़े प्यार से उससे बातें करती।

धीरे-धीरे छौना बड़ा और मज़बूत होने लगा, उसे अपनी परतन्त्रता महसूस होने लगी।

वह दर्द भरी आवाज़ में कराहता रहता, दुखी होकर बाड़े के साथ-साथ दौड़ता-भागता। अमरा पशु के पास खड़ी होकर काफ़ी देर तक उसके कानों में सान्त्वनापूर्ण शब्द बुदबुदाती रहती। पर छौने के लिए क़ैद असह्य हो उठी थी। वह उछलकर अमरा से दूर जा खड़ा होता और अपना स्वाभिमानी सिर ऊपर उठाकर पहाड़ों व उससे परे स्थित स्वतन्त्र भूमि की ओर देखने लगता। अमरा आज़ादी के लिए तड़पते जानवर की हालत समझती थी। उसे लगता, वह खुद मानो इस मज़बूत बाड़े में घुट रही थी। हिरण के बच्चे के पास से अमरा उदास और शोकाकुल होकर घर लौटती थी।

छौना बड़ा होता गया। क़ैद की जिन्दगी उसके लिए असह्य हो उठी, वह पागल-सा बाड़े में चक्कर लगाते रहता। वह बाड़े के डण्डों पर कूद पड़ता मानो आज़ादी न मिलने पर वह जान दे देगा।

अमरा के लिए पशु को देखना बड़ा दुखदायी होता। उसने उसके पास जाना छोड़ दिया। वह बालकनी में उदास खड़ी उसकी ओर देखती रहती। छौना छटपटाकर बाड़े के ऊपर उछलता पर उसके पैर टिक नहीं पाते और वह घुटनों के बल गिर पड़ता।

वह उठकर फिर अपनी पतली, सुडौल टांगों पर उछलने लगता।

नहीं! अमरा इसे और ज़्यादा देर नहीं सह पायेगी। वह फ़ौरन क़ैदी को छोड़कर उसे स्वतन्त्र जीवन दे देगी। वह अभी सीढ़ियों पर से भागकर उतरेगी और हिरण के बच्चे को पहाड़ों में जाने के लिए छोड़ देगी। हिरण का बच्चा अमरा के लिए पकड़ा गया है, अमरा ही उसे आज़ाद करेगी। वह अब और ज़्यादा देर तक इस पशु की बदक़िस्मती का कारण ख़ुद को नहीं बनाये रहना चाहती... पर नहीं, अगर उसने अपने प्रति बाबा के ध्यान की उपेक्षा की वह बाबा को ज़िन्दगी भर के लिए दुखी कर देगी तो। नहीं, नहीं, बाबा को दुखी नहीं किया जा सकता, उनको वैसे ही काफ़ी चिन्ताएं हैं।

पर बेचारे पशु को किस तरह शान्त किया जाये? उसे यहां लोगों के बीच अच्छा क्यों नहीं लग रहा? आख़िर उसे खाने-पीने की कोई कमी नहीं। कम-से-कम हिरण का बच्चा शान्त ही हो जाये, अमरा को और ज़्यादा दुखी न करे!

एक मिनट के लिए हिरण का बच्चा शान्त हो गया। लगा जैसे उसने अपने एकान्त जीवन से समझौता कर लिया। अमरा ने ख़ुश होकर उसकी ओर देखा। हिरण के बच्चे ने अपना सुडौल बदन सीधा कर, नोकदार कान खड़े कर लिये और बाड़े के सहारे-सहारे नज़र दौड़ायी। केवल उसके नथुने शोर करते फूल गये। क्या शान्त हो उसने यहां रहने का फ़ैसला कर लिया? अमरा ने यह सोचकर चैन की सांस ली। पर एकाएक हिरण का बच्चा अपनी पतली लचकीली टांगों पर बाड़े से भी ऊंचा उछल पड़ा।

जानवर को फ़ौरन आज़ाद कर देने अमरा आंखों में आंसू भरे सीढ़ियों से नीचे भागी। नतीजा चाहे जो भी हो, अमरा भुगत लेगी।

अमरा बाड़े की ओर भाग रही थी, उसकी आंखों से आंसू टपक रहे थे। जब वह बाड़े के फाटक के पास पहुंची, उसे हृदय-

विदारक दृश्य दिखाई दिया – छौना बाड़े के नुकीले, संगीन जैसे डण्डों से बिंधा लटक रहा था। उसके बदन से ख़ून की धार फूट पड़ी थी। उसका सिर धीरे-धीरे नीचे लटक गया लेकिन उसकी आंखों ने अंतिम बार उस सुदूर स्वतन्त्र भूमि के दर्शन कर लिये जहां वह अब नहीं पहुंच सकता था।

अमरा पहाड़ की ओर भागकर ठंडे पत्थरों पर लोट-पोट हो, फूट-फूटकर रोने लगी।

तेरह

समय उसी तरह पीछे भागा जा रहा था जैसे तेज़ उड़नेवाली चील के पंखों के तले ज़मीन पीछे भागती है। पर शायद यह कहना ज़्यादा ठीक होगा कि हमारा गांव तो स्थिर है लेकिन समय उसके ऊपर से पहाड़ों की ओर से बहनेवाली हवा की तरह उड़ा जा रहा है। और बिलकुल वैसे ही जैसे हवा अपनी छाप छोड़े बिना नहीं बहती – कहीं पत्ते तोड़ देती है, तो कहीं डाल, कहीं फाटक खोल देती है, समय भी हमारे गांव के ऊपर से गुज़रते हुए, दिखाई न पड़नेवाले परिवर्तन कर रहा था। ये छोटे-छोटे सूक्ष्म परिवर्तन इकट्ठे होते रहे और तब दिखाई दिये जब गांव का नक़्शा धीरे-धीरे बदल गया और अब वह पूरी तरह वैसा नहीं रहा, जैसा साल भर पहले था।

इंजीनियरों से बातचीत करने के बाद जब हरज़ामान घर वापस लौटता, सोच-विचार और चिंताओं में डूब जाता। वह सोच

भी नहीं सकता था कि उसके घर-आंगन से मानो उसके जीवित शरीर के ऊपर से, निर्दय और अनजानी सड़क निकाली जायेगी। दिल ज्यादा न दुखे, इसलिए हरज़ामान अकसर फ़ार्म पर ही रहने लगा। घर आंखों के सामने न होता तो वह उसके बारे में कम सोचता था। हमेशा कामों में लगे रहने के कारण उसका ध्यान विषादपूर्ण विचारों से हट जाता था। इसके बावजूद, दुख की लहरें कभी-कभी उसे सराबोर कर ही देतीं। उत्तेजित हालत में वह मन ही मन अपने बेटे, बहू और पोती से कहने लगता था, "अच्छा, तुम लोग सोचते हो, मुझे तुम लोगों से ज्यादा चाहिए, तुम लोग सोचते हो मैं अपनी जमीन, मकान और सारा घरबार अपने साथ क़ब्र में ले जाऊंगा? तुम्हारा जो जी चाहे, करो। लगता है, तुम बुड्ढे हरज़ामान से भी ज्यादा समझदार हो। तुमने मुझसे ज्यादा देखा है और ज्यादा जानते हो। चाहो तो अपने वंशवृक्ष को बचाओ, चाहो तो उसे हवा में उड़ा दो। चाहो तो मिट्टी का तेल डालकर जला दो। और उसके बाद बेघर होकर अलग-अलग रास्तों पर आवारों की तरह भटकना!"

इतने कटु सोच-विचार के बाद दिल का दर्द कुछ देर के लिए हरज़ामान का पीछा छोड़ देता था। पर कब तक! क्या हरज़ामान की नसों में बहनेवाला ख़ून पूरी तरह शान्त हो सकता था। नहीं, यह तो शान्त होने का बहाना भर होता। भारी सोच-विचार से कुछ वैसी ही लहरें उत्पन्न होने लगीं, जैसी झंझावात के समय होती हैं। वे हिलोरें ले रही थीं, शक्ति संचित कर रही थीं। वे दिल पर चोट करतीं, उससे टकराकर दर्द पैदा करके बिखर जातीं। अन्त में एक ऐसी लहर आयी जिसने हरज़ामान को एक हल्के और सूखे शहतीर की तरह अपने शिखर पर उठाकर उछाल दिया और बहा ले चली।

हमेशा अपने साथ रहनेवाला डण्डा लिये, अपने आगे के रास्ते को न देखते हुए हरज़ामान तेज़ी से चरागाह से घर की ओर चला जा रहा था। लगता था, किसी बात के पूर्वाभास से मजबूर हो वह इसी समय घर चल पड़ा था। वह नज़दीक आता जा रहा है,

अब रुक गया, और... पर यह क्या है? यह क्या हो गया? उसकी आंखें क्या देख रही हैं?

अगर हरज़ामान के सिर पर भारी हथौड़े से भी चोट की जाती तो शायद वह इतनी बुरी तरह हक्का-बक्का नहीं हुआ होता। शरीर का सारा ख़ून सिर में दौड़ने लगा, आंखों के आगे अंधेरा छा गया, कानों में रुई की तरह की कोई मुलायम चीज घुस गयी और कान सुन्न हो गये।

पता नहीं, बील्या कहां से उसके पास आ पहुंची और वृद्ध के चारों ओर उछलने-कूदने लगी। अपने अगले पंजे उसके कंधों पर रखने लगी, मानो उन्हें सहला रही हो। सबसे पहले वह अपने स्वामी की आंखों में झांककर देखना चाहती थी। हम आदमियों के लिए किसी आदमी का अभिवादन करना, उससे हाथ मिलाकर कुछ शब्द कहना भी काफ़ी है। पर कुत्ते के लिए यह काफ़ी नहीं। उसके लिए मुलाक़ात तभी पूरी होती है जब वह आंखों में झांक ले, सिर्फ़ आंखों में ही नहीं बल्कि ऐसी आंखों में जो उसकी ओर देख रही हों, उसे विनम्रता से जवाब दे रही हों। लेकिन इस समय बील्या उन्मन-सी कूद रही थी, हर तरफ़ से चक्कर लगाये जा रही थी, बेकार। चकित और स्तब्ध हरज़ामान एक ही जगह खड़ा, सूनी-सूनी, अर्थहीन दृष्टि से दुनिया से परे कहीं दूर देख रहा था।

आख़िर यह क्या है? आख़िर यह क्या हुआ? हरज़ामान को अपने घर में फाटक की ओर से आना पसन्द नहीं था बल्कि अपने घर की दूसरी ओर से, जहां कृष्ण बदरी की झाड़ियों के बीच में से रास्ता बना हुआ था। इससे रास्ता पार करते ही उसे अपना सारा घरबार एक नज़र में ही दिखाई दे जाता था, जैसे सब कुछ उसकी हथेली पर रखा हो। घर, आंगन, घरवालों की क़ब्रें,

बलूत, चश्मा, आंगन को इधर-उधर से काटनेवाली सारी पगडंडियां – सब। कहीं हरज़ामान रास्ता तो नहीं भूल गया? किसी और के बगीचे में तो नहीं घुस आया? ऐसा होता तो वृद्ध के लिए बड़ी खुशी की बात होती। यह जादू-टोने, बुरे स्वप्न, भूत-प्रेतों की तरह गुज़र गया होता, वह फ़ौरन पलटकर पगडंडी के सहारे अपने अविकृत घर की ओर चल पड़ता।

हरज़ामान ने जो कुछ देखा उसपर विश्वास करना असंभव था। और अगर विश्वास कर भी ले तो उसे सहे कैसे? और अगर सह ले तो आगे कैसे जिये? उसके फाटक को छूने और उसे उठाकर दूसरी जगह लगाने की हिम्मत किसकी हुई? उसकी ज़मीन को दो टुकड़ों में बांट देनेवाली खपच्चियों की नयी बाड़ किसने लगायी? किसने हरज़ामान के जीते-जागते दिल में नुकीला खूंटा ठोककर उसके दो टुकड़े कर डाले? क़ब्रें दिखाई नहीं दे रही थीं। अब वे नयी बाड़ की दूसरी ओर हो गयी हैं। वह बलूत जिसके तले हरज़ामान को आराम करना अच्छा लगता था, वह चश्मा जिसके पानी से वह रोज़ स्नान करता था, वह चश्मा जिसे उसके पूर्वजों ने प्रवाहित किया था... ज़िन्दा आदमी की तो बात ही और है। क्या दुनिया से प्रेम और उससे घनिष्ठ सम्बन्ध रखनेवाला इनसान वह नहीं? क्या मनुष्य के सांसारिक संबंधों की हत्या करके उन्हें फूक डालने का मतलब खुद अपनी हत्या नहीं। इतना क्रूर काम करने की हिम्मत किसने की, आखिर किसने बिना पूछे ऐसा किया?

इसी समय नयी बाड़ में मेखें ठोकनेवाला आदमी हरज़ामान की ओर मुड़ा। हरज़ामान ने चिल्लाना चाहा पर उसे अपने गले में अजीब सा सूखापन महसूस हुआ, ज़बान पर क़ाबू नहीं रहा, सिर में चक्कर आ गया। ज़मीन पैरों तले खिसकने लगी। अलीआस फ़ौरन भागकर उसके पास पहुंचा और उसे थाम लिया। यूँ हरज़ामान खुद भी नहीं गिरा होता। क्योंकि इस बलूत की पुरानी और गांठदार लकड़ी की तरह मजबूत आदमी को गिरा पाना आखिर इतना आसान नहीं। सिर चकरा जाने या आंखों के आगे अंधेरा छाने से क्या हुआ?

दिल के पास जहां दर्द हुआ था, अब गायब हो चुका था। वृद्ध ने हाथों से बेटे को अलग किया। अलीआस ने अपने पिता को कभी ऐसी हालत में नहीं देखा था। वह घबराकर कुछ बोल नहीं पा रहा था।

"यानी तुम आ गये, पिता जी?"

"अच्छा तुम हो, मेरे बेटे?" हरज़ामान बड़ी कठिनाई से बुदबुदाया। "आखिर तुमने मुझसे अलग होने का फ़ैसला कर ही लिया? शाबाश! शाबाश!"

"अलग क्यों होऊंगा?"

"मैं क्यों जानूं। लेकिन इस बाड़ का क्या मतलब है?"

"पर तुम्हें तो इसके बारे में पहले से ही पता था। याद है, वे इंजीनियर आये थे? तुम्हें तो मालूम ही था, यहां से सड़क निकाली जायेगी?"

"क्या दुनिया में जगह की कमी है? देखो, दुनिया कितनी बड़ी है। मेरा घर तो इस दुनिया में समुद्र में एक कंकर और पहाड़ पर घास की एक पत्ती के बराबर है। क्या इतनी बड़ी दुनिया में मुझे ठेस पहुंचाये बगैर सड़क कहीं आस-पास से नहीं निकाली जा सकती थी?"

"पर यहां से निकालने में उन्हें सुविधा थी। शायद कहीं और से निकालने का रास्ता ही नहीं था।"

"उनके लिए तो सुभीता हो गया। लेकिन मेरे लिए? या मेरी परवाह की ज़रूरत ही नहीं? सड़क के मुक़ाबले में ज़िन्दा आदमी क्या होता है? उन्हें तो सुभीता हो गया और मुझ पर थूका जा सकता है।"

"पर आखिर इससे हमें भी तो सहूलियत होगी।"

"तुम्हें अपनी क़ानूनी और पुश्तैनी जगह से भगाया जा रहा है और तुम सोचते हो कि यह तुम्हारी सहूलियत के लिए है।"

"यह कोई अहम बात नहीं है, हम इस आंगन में बहुत दिन रह लिये। फिर अब गाड़ियां सीधे हमारे घर के दरवाज़े के सामने से निकला करेंगी।"

"मैंने कभी नहीं सोचा था कि मुझे जिन्दगी में यह दिन देखने के लिए ज़िन्दा रहना होगा। मैं सोचता था, वे भी समझदार आदमी हैं, उन्हें अपनी सड़क के अलावा भी तो किसी और चीज़ के बारे में सोचना चाहिए था या नहीं? तुम्हें तो मैं जानता हूँ। कहीं तुमने ही तो उन्हें यहां से सड़क निकालने की सलाह नहीं दी है? अगर सड़क ठीक घर के बीच से, चूल्हे के पत्थरों को दोनों ओर हटाकर निकाली जाती तो भी तुम्हें कोई एतराज़ नहीं होता।"

"आप ऐसा क्यों सोचते हैं, पिताजी? हमारा घर अभी सही-सलामत है, आंगन भी... और ज़मीन भी काफ़ी है। पैर रखने की जगह तो है।"

शुरू में हरज़ामान को अपना अंगभंग, विकृत आंगन देखकर यह सब असह्य लगा। मौत आ जाती तो अच्छा रहता। खड़ा-खड़ा अलीआस के साथ बातें करते हुए वह दुर्घटना के निशानों की ओर देखता जा रहा था। सच पूछिए तो वह मरा-मरा-सा बोल रहा था, जैसे उसमें जान ही न बची हो, जैसे उसकी जगह कोई दूसरा बोल रहा हो, जैसे कोई अप्रीतिकर चीज पी डाली हो। जली राख से सिर्फ़ यदाकदा सुनहरी चिनगारियां निकल रही थीं।

"फिर क्या है, विवाहोत्सव-सा ताली पीट-पीट नाचो! अब गाड़ियां दिन-रात खिड़कियों, दरवाज़ों के पास से गुज़रा करेंगी। हमारा सारा घर, सारा आंगन सफ़ेद धूल से ढँक जायेगा। अच्छा हो, जल्दी से जल्दी यह धूल मेरे नाक, मुंह और छाती में भी भर जाये, तब मैं शान्त हो जाऊंगा, अपनी बरबादी होते देख तड़पूंगा नहीं।"

"बाबा, बाबा, आ गये," अमरा खुशी से चिल्लाती सीढ़ियों से भागती हरज़ामान की ओर दौड़ी।

हरज़ामान ने पोती का माथा चूमकर उसके सिर पर हाथ फेरा।

"तुम कैसी हो, बेटी?"

"ठीक हूँ। हमारे यहाँ सड़क बनायी जा रही है। देखिये, वह क़रीब-क़रीब हमारे घर के पास आ चुकी है। अब उसे अपने आंगन के बीच में से निकालेंगे।"

"यह भी खुश हो रही है," हरज़ामान दुखी होता सोच रहा था। "मुझे छोड़कर सब खुश हो रहे हैं। या तो जिन्दगी ने इन सबको बिलकुल अंधा बना दिया या फिर मैं ही कुछ समझ नहीं पा रहा। क्या वास्तव में ये सब इतने निष्ठुर हैं? क्या ये सब ऐसे मांस के बने हैं जिसे दर्द महसूस नहीं होता। सब लोग देख एक ही चीज़ रहे हैं पर इन्हें महसूस कुछ और हो रहा है। अगर अभी चारों ओर की पहाड़ियों से सारा जंगल ग़ायब हो जाये, चश्मा सूख जाये, जिस जगह हम खड़े हैं, वहां से बुलडोज़र निकल जायें तो भी शायद इनके दिल पर कोई असर नहीं होगा। मुझे कोई नहीं समझ पा रहा। मैं अकेला उस पेड़ जैसा बचा हुआ हूँ जो सिर्फ़ ज़मीन पर खड़ा है लेकिन जिसकी जड़ें गल चुकी हैं, उसे उखाड़ फेंकने के लिए केवल हवा के एक तेज झोंके की ही कमी है। पर मैं, सिर्फ़ मैं ही तो नहीं हूँ बल्कि वह सब है जो मुझे प्यारा है, जिसे मैं प्यार करता हूँ। क्या यह सब मेरे साथ ही ग़ायब हो जायेगा? कैसा ज़माना आ गया है! लोगों ने यह सब बड़े प्यार से बनाया है, एक-एक करके पत्थर जमाये, एक-एक करके पच्चड़ जोड़े, इस काम को दिल लगाकर किया। और जो बना-बनाया है, उसे ग़लत जगह पर उगी कंटीली झाड़ी की तरह जड़ से उखाड़ रहे हैं। लगता है, जब से दुनिया बनी है, तब से ऐसा ही होता आया है। एक चीज़ बनाई जाये, दूसरी तोड़ी जाये। कुछ आदमी बनाते हैं, दूसरे तोड़ देते हैं। इसी चक्कर में जिन्दगी गुज़रती जाती है।

अब मुझ तक, मेरे दिल तक आ पहुंचे हैं। पर मेरा क्या है? शीघ्र ही एक भी अछूता तारा नहीं बचेगा जिस तक आदमी का हाथ नहीं पहुंचेगा, जिस पर आदमी के क़दमों के निशान नहीं पड़ेंगे। अपनी प्यारी पथरीली ज़मीन में जड़ जमाये मैं पहाड़ी के तले शान्ति से रहता आया हूँ। मैंने किसी को परेशान नहीं किया। मेरी प्यास चश्मे के पानी से बुझती रही। पहाड़ी हवा मेरे सीने में भरती रही। तारे मेरी आंखों को दुलारते रहे। पर नये जीवन की लहर मेरी ओर बहती चली आ रही है। वह मेरे गले तक

पहुंचकर मुझे अपने साथ बहा ले जायेगी। मुझे जड़ से उखाड़ देगी, तब मैं किस काम का रह जाऊँगा, किसे मेरी ज़रूरत होगी? अच्छा होगा अगर वह मुझे पूरा डुबो दे, पत्थरों से टकराकर चकनाचूर कर दे।"

प्रत्यक्षत: उदासीन-सा पर अंतरतम में अपने विचारों में खोया हरज़ामान खड़ा रहा।

अलीआस जाकर फिर मेखें ठोकने के काम में लग गया। अमरा ने बार-बार पूछताछ करके बाबा को परेशान नहीं करना चाहा। बाबा की तबीयत थोड़ी ठीक नहीं, यह महसूस कर वह घर के अन्दर चली गयी।

शाम को हरज़ामान और अलीआस काफ़ी देर तक बालकनी में बैठे रहे। हरज़ामान एक दिन में ही दुबला और कमज़ोर हो गया था, उसके कंधे झुक गये थे, चेहरे पर चिंता की बदलियां छा गयी थीं। चोट काफ़ी गहरी थी। उसकी जीभ जड़ और सुस्त हो गयी थी। शब्द गले में अटक जाते थे। हरज़ामान के विचार ऊपर पहुंचकर शक्तिहीन हो इस तरह गिर रहे थे जैसे चट्टान पर रेंगते हुए बिलकुल उसकी चोटी तक पहुंच जानेवाले आदमी के हाथ सुन्न हो जाते हैं, पैर फिसल जाते हैं और वह नीचे तलहटी की ओर गिरने लगता है, जहां से उसने चढ़ना शुरू किया था।

"फ़िक्र न कीजिए, पिता जी," अलीआस ने कहा। "ऐसी कोई भयावह बात तो हुई नहीं है। शान्ति से काम लीजिए। अगर किसी ने आपकी बात सुन ली तो शर्मिन्दा होना पड़ेगा।"

"अच्छा, मुझे शर्म भी करनी चाहिए! कहीं तुम्हें तो अपने पिता पर शर्म नहीं आ रही?"

"शर्म की बात नहीं, पर अच्छा नहीं लगता। लोग बिजलीघर बना रहे हैं, सड़क निकालना चाहते हैं और आप हैं कि इस सड़क पर आड़े लेट गये हैं। इससे तो यही साबित होता है कि आप निर्माण के विरुद्ध हैं, जीवन के विरुद्ध हैं, प्रगति के विरुद्ध हैं।"

"क्या मैं आगे बढ़ने के खिलाफ़ हूँ? नहीं। लेकिन आगे बढ़ने के लिए क्या जिन्दा आदमी के ऊपर से पहिया निकालना

ज़रूरी है? पुराने ज़माने में लोग कहते थे—जो तुम्हें कलंकित करना चाहेगा, वह सबके सामने तुम्हारी कोई प्यारी चीज मांगेगा। तुम नहीं दोगे। यानी तुम्हारा दिल नहीं चाहता। और तुम कंजूस, क्रूर और बुरे बन जाओगे। ऐसा ही यहां हो रहा है। मेरी सबसे प्यारी चीज छीनी जा रही है और मुझ को शर्म ही आनी चाहिए! क्या आसपास जगह की कमी है। क्या जीते-जागते आदमियों को नुकसान पहुंचाये बिना नहीं निकला जा सकता था?"

"पर यहां उन्हें ज्यादा सुभीता है, समझ रहे हैं न? हमारे आंगन से सड़क निकालना सबसे ज्यादा सुविधाजनक है।"

"हां, हां, लेकिन मेरी परेशानी की उन्हें कोई परवाह नहीं। यानी वे मुझ पर थूक भी सकते हैं, क्यों? मुझे परेशानी होती है। मैं तंग हो जाऊंगा। इसका क्या हल है?"

"किस बात से परेशानी होगी? सड़क से, गाड़ियों से? पर यह तो नया जीवन है। आप खुद देख लेंगे, इससे और खुशी ही होगी।"

"मैं कह रहा हूँ आम, तुम समझ रहे हो इमली! गाड़ियों का होना अच्छा है। पर जब वे ठीक खिड़कियों के नीचे से... जानलेवा शोर के साथ दिन-रात गुज़रा करेंगी तब। हम धूल और बदबू से भर उठेंगे। ट्रक में बैठे ऐरे-गैरे मुझे जीभ दिखायेंगे। नहीं, अलीआस, मेरा चैन छीन जायेगा। थोड़ी देर और इन्तज़ार कर लेते। जब मैं अपने परिवार के क़ब्रिस्तान में चैन से लेट जाता, तब चाहे जो करते, पर अब..." वृद्ध हाथ हिलाता सीढ़ियों से नीचे उतर गया।

अलीआस काफ़ी देर तक बालकनी में बैठा अपने पिता का इन्तज़ार करता रहा, पर हरज़ामान वापस ही नहीं आया। तब अलीआस भी सोने चला गया।

इस बीच हरज़ामान नयी बाड़ पर कोहनी टिकाये खड़ा अपनी ज़मीन को देख रहा था, जो अब इतनी पराई हो गयी थी, मानो बाड़ विदेश हो और उसकी दूसरी ओर पहुंच के बाहर पराई ज़मीन हो। बुलडोज़रों ने बेढंगी लकीरें खींचकर इस अधिकारहरण को

ज़्यादा गहरा, ज़्यादा मज़बूत बना दिया था। जब यह सड़क बन जायेगी, तो ज़मीन के दोनों टुकड़े एक-दूसरे के आमने-सामने बसे दो देशों की तरह हो जायेंगे। क्या हरज़ामान आज़ादी और सहज ढंग से सड़क के उस पार आ-जा सकेगा? फाटक से निकलकर सड़क खाली होने का इन्तज़ार करना होगा... और उस उपेक्षित टुकड़े में जंगल उग आयेंगे, धूल जमा हो जायेगी, कांटे उग आयेंगे। अब वह एक ऐसा टुकड़ा बन गया था जिसे जोड़ा नहीं जा सकता...

हरज़ामान अलीआस के लगाये नये फाटक को खोलकर अपनी पहलीवाली ज़मीन पर आया। उसे लगा जैसे उस ज़मीन से उसके जूतों के तलों को भेदती मुर्दे जैसी बर्फ़ीली ठंड आ रही है। यह ठंड ऊपर बढ़ती-बढ़ती उसके पैरों की हड्डियों, नसों में होती दिल और दिमाग़ तक पहुंच रही है। हरज़ामान बर्फ़-सा जमा बिखरे हुए पत्थरों के बीच सूखे पेड़ की तरह काफ़ी देर तक खड़ा रहा। इसके बाद सावधानी से इस तरह आगे बढ़ा मानो किसी और के घर में क़ालीन पर चल रहा हो।

वह सबसे पहले अपनी प्यारी क़ब्रों के पास पहुंचा। ख़ामोशी पहले से ज़्यादा गहरी होकर यहां इस चट्टान के तले छा गयी थी। वे जानते हैं या नहीं कि ऊपर क्या हो रहा है, और अगर जानते हैं, सुन रहे हैं, तो क्या वे अपनी क़ब्रों में करवटें नहीं बदल रहे होंगे? आखिर जो कुछ हो रहा है, वह केवल मुझसे ही नहीं बल्कि उनसे, उनकी यादों से, उनकी पवित्र शान्ति से भी सम्बन्ध रखते हैं जिसके वे पात्र हैं। जीवितों का अपमान बहुत बुरा है। पर मरे हुए लोगों का तिरस्कार और अपमान करना पाप है।

हरज़मान जब कभी वहां आकर बैठता, हमेशा अपने पूर्वजों से बात करता। बात कर लेने के बाद वह उन्हें शान्तिपूर्ण नींद की कामना करके घर चला जाता। अब वह क़ब्रों के पास खोया-खोया-सा खड़ा है, उसे न शब्द सूझ रहे हैं, न उसके मन में कोई विचार ही आ रहे हैं। उसे लगा, क़ब्रों में लेटे लोग आज दुबारा मर गये हैं।

हरज़ामान क़ब्रों के पास मरा-सा बर्फ़-सा जमा खड़ा रहा। इसी बीच इस बर्फ़ीली खामोशी को चीरती कोई काफ़ी जानी-

पहचानी, प्यारभरी आवाज उसकी चेतना में सुनाई देने लगी। कोई उसे धीरे से बुला रहा था। यह आवाज़ उसके दिल तक पहुंचकर उसमें गरमाहट भरने लगी, प्राण फूंकने लगी। यह आवाज सदा स्वच्छ और नाड़ी के समान कंपित होकर बहनेवाले चश्मे की थी। हरज़ामान क़ब्रों की ओर से मुड़कर उसकी ओर बढ़ा। चश्मे की आवाज़ धीरे-धीरे स्पष्ट और तेज होती गयी, मानो वह कहना चाह रहा हो कि जीवन का अन्त नहीं हुआ है, वह शाश्वत है। "और हरज़ामान, तुम भी कभी पूरी तरह लुप्त नहीं होगे, जैसे मैं भी नहीं होता।" हरज़ामान उसके इतने नजदीक पहुंच गया कि ठंडक और पानी का झोंका उसे महसूस होने लगा, कुछ फुहारें उसके चेहरे पर भी गिरीं। न जाने कब हरज़ामान चश्मे के सामने घुटनों के बल बैठ गया।

"हां, कभी-कभी ऐसा भी होता है कि छोटी-छोटी बातों, दिन भर की दौड़धूप और जिन्दगी के शोरगुल के कारण इस चश्मे का गीत सुनाई नहीं दे पाता। कभी हम उसके बारे में भूल भी जाते हैं। पर चश्मा अपना कर्तव्य जानता है। पल भर को भी वह अपना प्रवाह और गीत बन्द नहीं करता। चाहे आप भूल जायें, थक जायें, अधमरे हो जायें पर उसकी याद आने पर आप उसके पास आ पहुंचेंगे। और वह हमेशा आपके स्वागत के लिए तैयार रहता है। वह कभी झपकी नहीं लेता, भूलता नहीं, कभी अपनी जगह और अपने जीवन के शाश्वत कर्तव्य को नहीं भूलता।

और अब तुझे मुझसे अलग और दूर कर दिया गया है। अब तेरी आवाज़ हवा में खो जाया करेगी, मेरे कानों तक नहीं पहुंचा करेगी। धमाकों और गड़गड़ाहट का शोर उसे निर्दयता से दबा देगा। भला तेरी प्यारी आवाज़ धमाकों और गाड़ियों के शोर में सुनी जा सकेगी? तेरी और मेरी आवाज़ें एक दूसरे के पास पहुंचने से पहले ही ठंडे और निष्ठुर लोहे से टकराकर जम जायेंगी। तुम यहां बेकार ही कलकल कर रहे हो। अच्छा हो, अगर थोड़ी देर के लिए चुप हो जाओ। वे तेरी बूंद-बूंद पर छाप

लगा देंगे। वे तुझे वजनी केटरपिलर के नीचे कुचल देंगे। तेरे मुंह में कंक्रीट ठूंस देंगे।

यह शायद ऐसा न भी करें। वे तुझे मारने और जमीन में क्यों दबाने लगे? मालूम है वे तेरे साथ क्या करेंगे? वे तुझे लोहे के संकरे नल में धकेल देंगे। वहां घुटन होगी, अंधेरा होगा। तू चश्मा नहीं रहेगा बल्कि नल का साधारण पानी हो जायेगा। अब तू जिधर बह रहा है, उधर नहीं बह सकेगा बल्कि जिधर वे चाहेंगे, उधर बहेगा। तब तू एक पत्थर से दूसरे पर कूद नहीं सकेगा, हवा में झिलमिला नहीं सकेगा, फुहार बनकर उड़ नहीं सकेगा, जमीन को सींच नहीं सकेगा। तू अब न तारों को कभी देख सकेगा, न सूरज, आसमान, चिड़ियों और फूलों को। कोई तेरी आवाज सुनकर प्रसन्न नहीं होगा, कोई तेरी निश्छल आंखों में नहीं झांकेगा और तुझे अब किसी आदमी की प्यार भरी नजरें अपने पास आती नहीं दिखाई देंगी। तेरा पार्थिव जीवन यहीं समाप्त हो जायेगा। अलविदा!" हरजामान ने अपने खुरदरे हाथों से झरने की शीतल धार को सहलाया और उसे लगा जैसे धार भी आदमी से विदा लेते हुए अपने खास ढंग से उसकी हथेली से चिपक जाती है।

"अगर तेरा काम खत्म हो जायेगा," हरजामान अपने मन में सोच-विचार कर रहा था, "तो गर्वीली और हठीली अलीप्सता का भी अंत आ जायेगा। वे उसे भी अपने क़ाबू में कर लेंगे। उसे कंक्रीट से ढंक देंगे, भारी बोझ के नीचे दबा देंगे, पहिया घुमाने के लिए मजबूर कर देंगे, गुलाम बना लेंगे। हां, अलीप्सता, अब तू बेकार घाटी के अंधेरे में मत गरज। अच्छा हो, अपने भविष्य के बारे में सोच और उसके लिए तैयार हो जा..."

हरजामान झरने के पास से अपने आंगन में लौट आया। आंगन उसे और भी छोटा, उजड़ा, दयनीय दिखाई दिया। क्या यही उसका आंगन है? कहां है आजादी, फैलाव, आंखों की स्वतन्त्रता और खुशी?

हरजामान ने आंखें उठाकर आसमान की ओर देखा। और उसमें भी कुछ अजीब-सा लगा। अब उसे आसमान भी पहले से

छोटा लगा। जैसे तारे भी कुछ कम हो गये हों, धूमिल हो गये हों और पहले जितनी ज्यादा प्रसन्नता व तेजी से नहीं चमक रहे हों। पर उसका तारा कहां है? उसका उज्ज्वल प्रकाश कहां गया? कहीं उसके भी तो दो टुकड़े नहीं कर दिये गये? कहीं उसका एक टुकड़ा आंगन के उस हिस्से के ऊपर और दूसरा यहां तो नहीं चमक रहा? अब हरजामान जमीन के किस टुकड़े पर खड़ा हो जिससे वह अपने तारे को ढूंढ कर उससे बातें कर सके? कहीं वह धूमिल या लुप्त तो नहीं हो गया? हरजामान किसी भी तरह अपने तारे को ढूंढ नहीं पा रहा। दूसरे तारों पर भी नजर पड़ती तो वे तुरन्त वैसे ही धुंधले और मद्धिम पड़ जाते हैं जैसे अलाव के अंगारों पर राख जम जाने से वे बुझ जाते हैं। ताजा हवा भी नहीं है जो उन पर से मौत की छाया-सी यह धूसर राख उड़ाकर उन्हें फिर से प्रज्वलित कर दे।

हरजामान की नजर तारों भरे आकाश में देर तक भटकती रही पर वह किसी भी तरह अपने तारे को नहीं ढूंढ पायी। एक तारा उसे दूसरों से अलग नजर आया, पर क्या यह वही है, उसपर विश्वास होने की कोई संभावना नहीं थी। उस पर से नजर हटाकर उसने दूसरे तारों को भी देखा पर वे भी उसे एक से और अनजान लगे। उनमें से कोई भी उसके दिल को नहीं छू पाया। उसने फिर उस अलग से दिखाई देनेवाले तारे पर नजर डाली, पर अब उसकी आंखों में वह शक्ति नहीं रही थी, जो पहले एक तारे को दूसरों से ज्यादा चमकने के लिए विवश कर देती थी। शायद उसकी नजर भी धुंधली और कमजोर हो गयी है, इसीलिए आसमान में तारे मद्धिम पड़कर बुझ रहे हैं। फिर भी हरजामान उसी तारे को टकटकी बांधकर देखने लगा जिसे उसने अपना समझ लिया था हालांकि उसे इसमें संदेह था। उसकी नजर पड़ने पर वह कभी चमकता, कभी बुझता, जैसे हवा का झोंका लगने से मोमबत्ती की लौ फड़फड़ाती है। कुछ भी नहीं मिलने पर हरजामान पहले से भी ज्यादा उदास हो घर की ओर चल पड़ा।

वह बिस्तर में लेट गया। पर नींद कहां? उसके विचार

कभी धुंधले पड़ जाते, कभी फिर उभरकर सामने आ जाते। कभी उसका पलंग ऊबड़-खाबड़ पथरीली ज़मीन पर चलनेवाले ट्रक में बदल जाता। कभी उसे गाड़ियों का शोरगुल बिलकुल उसी तरह सुनाई देने लगता, जैसे चक्की के पाट बिना अनाज के आपस में रगड़ खाते घूम रहे हों।

लोग कहते हैं, बिल्ली घर से निकाल दिये जाने के बाद दुछत्ती में रहने लगती है। दूसरे दिन तड़के ही हरज़ामान पहाड़ी पगडंडी पर तेज़ी से चला जा रहा था। उसे डर लग रहा था कि कहीं वे लोग उसका पीछा करके उसे पकड़ न लें, जिन्हें वह बिलकुल भी नहीं देखना चाहता था। वह पथरीली पहाड़ी की ढाल पर चलते-चलते विशाल और अनन्त ग्रह पर अपने छोटे-से किन्तु एकमात्र ज़मीन के टुकड़े से दूर-दूर होता जा रहा था।

चौदह

सड़क भी हरज़ामान का पीछा कर रही थी मानो उसने उससे एक क़दम भी पीछे नहीं रहने का निश्चय कर लिया हो। हरज़ामान फ़ार्म पर रहने चला गया। और सड़क हरज़ामान के आंगन के दो टुकड़े करते हुए, फ़ार्म से आगे निकलकर, पहाड़ों में काफ़ी ऊंचाई तक पहुंच गयी। जैसा हरज़ामान का अन्दाज था, भारी सामान से लदी हुई गाड़ियां दिन-रात खूब शोर करती, उसके घर की खिड़कियों के नीचे से गुज़रने लगीं।

इस तरह अल्तोगेी ने नोवालूनिये में अपने लक्ष्य तक पहुंचने का रास्ता बना लिया था। अब वह दिन-दहाड़े, सबके सामने बेधड़क उस पर से आता-जाता था। और मैं अकेला अपने ग़मगीन ख़यालों को लिये अपने अभीप्सित स्थान के पास आने से डरता हुआ, पिछवाड़े की गलियों और चक्करदार पगडंडियों में भटकता रहा।

अगरा ने अपना मौक़ा आ गया समझ लिया। पहले वह चुपचाप, चोरी-छिपे आती थी, अब खुले आम।

"नमस्ते, अल्तोऊ! कैसे हो?" मुझे मुंह भी नहीं खोलने देती।

"नमस्ते, अगरा! सब अपने-अपने कामों में लगे हैं, मैं भी चरागाह से आ रहा हूं।"

"चलो थोड़ी देर पत्थर पर बैठकर सुस्ता लें।"

हम सड़क पार करके नाले के पास बैठ गये।

अगरा जैसे सचमुच यहां आराम करने ही आयी हो। पत्थर पर बैठते ही वह चुप हो गयी, जैसे मुझसे कहने के लिए उसके पास कुछ नहीं था। मैं बैठा तेज़ी से बहते नाले की आवाज सुनता रहा।

मैंने अगरा की ओर देखा। उसके चेहरे पर कुछ अस्पष्ट-से विचार झलक रहे थे, जैसे वह भूल गयी हो कि उसने मुझे यहां अपने साथ बैठने के लिए बुलाया था। चुप्पी मेरे लिए भारी हो गयी थी और मैं जाने ही वाला था कि अगरा अचानक बोल उठी:

"तुम भी और वह भी, दोनों ही ऊंची पढ़ाई कर चुके हो। ज़रा सोचो तो, तुम्हें किस बात का घमंड है और किस चीज़ के पीछे भाग रहे हो। सिर्फ़ काग़ज़ों के पीछे भाग रहे हो। आख़िर डिप्लोमा भी तो एक काग़ज़ ही है! तुम दोनों केवल काग़ज़ के पुतले हो। तुम एक-दूसरे से काग़ज़ के दो पन्नों की तरह चिमटे हुए हो। पर तुम्हें मालूम होना चाहिए कि तुम्हारे प्यार की ज़िन्दगी भी उतनी ही है जितनी कि काग़ज़ की। इससे ज्यादा नहीं!"

मैं बिलकुल चुप रहा। मुझे उससे कहने को कुछ नहीं था। आख़िर डिप्लोमा का इससे क्या लेना-देना? क्या मेरा प्यार काग़ज़ी है? मैं तो जानता हूं, मेरा प्यार कैसा है और उसकी क़ीमत क्या

है। आखिर ऐसी क्या जरूरत है कि मैं उसकी बातें सुनूं?

मुझे कुछ सोचने का मौक़ा दिये बिना वह बोलती गयी:

"तुम बेकार अपनी हत्या कर रहे हो। तुम सोचते हो, मैं नहीं जानती, तुम किस तलाश में हो, मैं सब देख रही हूं। पर मुसीबत तो यही है कि वह तुम्हें याद तक नहीं करती!"

"तुम किसकी बात कर रही हो? वह कौन है, जिसकी बात तुम कर रही हो?" मैंने बहाना बनाया जैसे मुझे मालूम ही न हो कि किसकी बात हो रही है।

"कौन? तुम झूठ क्यों बोल रहे हो? मैं तुम्हारी आंखों में देख रही हूं कि वह तुम्हारे दिमाग से निकल ही नहीं रही! कल भी थी, आज भी है, अभी भी है और बाद में भी रहेगी! या तुम भी उसे इतनी जल्दी भूल गये जितनी जल्दी उसने तुम्हें भुला दिया, हा, हा, हा! तुम पूछते हो – कौन? अमरा! तुम्हारी सुन्दर अमरा! तुम्हारी तो उसने नकेल पकड़ रखी है और खुद दूसरों के हाथों में हाथ डाले घूम रही है... तुम्हें धोखा दिया जा रहा है, मेरे दोस्त, धोखा दिया जा रहा है!"

उसकी बातें मुझे उत्तेजित करने लगीं, मैंने पूछा:

"अगरा, तुम्हें इससे क्यों परेशानी हो रही है?"

"बस, मुझे तुम पर तरस आता है। तुम एक खूबसूरत लड़के हो, पर अपना सिर किसी ऐसी लड़की के सामने झुका रहे हो जो अपना दिल किसी और को दे चुकी है... मैं मान भी लेती, अगर वह इस लायक़ होती... सिर्फ़ पढ़ा-लिखा होना ही तो क़ाबलियत नहीं। क्या सिर्फ़ इसलिए कि वह मुझसे ज्यादा पढ़ी-लिखी है?"

"तुम मुझपर तरस क्यों खा रही हो? धोखा दे या न दे... तुम्हें इससे क्या?"

"तरस इसलिए आता है कि अमरा तुम्हें प्यार नहीं करती। वह तुम्हें बिलकुल प्यार नहीं करती, चाहे उसके पीछे भागो, चाहे डूब मरो, वह तुम्हें प्यार नहीं करेगी।"

"इसके लिए तुम्हें दुखी होने की जरूरत नहीं। तुमसे किसने कहा कि वह मुझे प्यार नहीं करती?"

"खुद उसने। मैंने उसी के मुंह से सुना।"

"खुद उसने कहा, कब?"

"कई बार!"

"झूठ है! तुम झूठ बोल रही हो!"

"अगर झूठ बोलूं तो इसी नदी में डूब जाऊं!"

"तुम मेरे ही पीछे पड़ गयी हो क्या! चुप भी करो!" मैं चीख-सा पड़ा।

मैं अपना भेद खुद खोल चुका था। पर अगरा की बातें अब और ज्यादा देर नहीं सुन सकता था।

अगरा आंखें झुकाकर धीरे से बोली:

"जिन्दगी में सब ऐसे ही होता है। तुम उसके लिए मरे जा रहे हो, पर उसे तुम्हारी बिलकुल भी परवाह नहीं। मैं भी ऐसे ही... जिसे तुम चाहते हो वह तुम्हें नहीं चाहती। जिन्दगी है ही ऐसी! आदमी वह फल नहीं चाहता, जो पेड़ से टूटकर उसके सामने गिरा हो, बल्कि उस फल को तोड़ना चाहता है, जहां तक उसका हाथ पहुंचना मुश्किल है। अमरा तुम्हें प्यार नहीं करती और उसने कभी तुम्हें प्यार नहीं किया!"

नहीं, यह झूठ है, झूठ! मैं अभी उसे यहां से चलता कर दूंगा और कभी अपनी सूरत न दिखाने को कह दूंगा। मैं उस पर बरस पड़ूंगा, उसे भगा दूंगा, जिससे वह फिर कभी मेरे मामलों में दखलन्दाजी न करे। वह अपने बारे में सोचे, मैं अपने बारे में... मैं अभी उससे कह दूंगा... मैं उससे कह दूंगा...

पर मुझे वे शब्द नहीं सूझे जो मुझे अगरा से कहने चाहिए थे। पर अगर सूझ जाते तो?

तो क्या मेरे शब्द सब कुछ बदल सकते थे? उसने मुझे बिलकुल सच्ची बात कही थी, मेरी आंखें खोली थीं। उसने कोई गढ़ी-

गढ़ायी बात नहीं कही थी। उसने मुझे केवल वही बताया था जो मैं खुद भी जानता था, पर जिसे मैं विश्वास नहीं करना चाहता था...

कितनी नफ़रत हो आयी है मुझे अगरा से! वह ऐसा क्यों कहती है? उसका यह सच मेरे दिल को बेध गया था।

लेकिन शायद, ऐसा न हो? शायद, मैं अमरा को फिर देख सकूं और फिर... मुझे उम्मीद है, वह मुझे फिर मिलेगी। मैं अमरा को बता दूंगा...

नहीं। यह सब बेकार की बातें हैं। मैं यह जानता हूँ और मुझे अगरा से कुछ नहीं कहना।

मैं स्तम्भित-सा अगरा के सामने खड़ा रहा मानो मैं उसकी नज़रों में दोषी हूँ... इसके बाद मैं एकाएक चीख पड़ा,

"यह मेरा अपना मामला है!"

"मैं भी तुम्हारे बारे में ही कह रही हूँ। मुझे इससे कोई वास्ता नहीं..."

उसकी शान्त आवाज़ ने मुझे बिलकुल पागल बना दिया,

"इससे तुम्हें कोई मतलब नहीं!"

"अगर मुझे कोई मतलब नहीं, तो तुम्हें भी कोई मतलब नहीं। तुम बेकार ही दूसरे के मामले में उलझ रहे हो! मैं सिर्फ़ यही चाहती हूँ कि तुम्हें यह मालूम हो जाये, इसके अलावा मुझे और कुछ नहीं चाहिए! मेरे लिए इन सब बातों की कोई क़ीमत नहीं!"

वह मुझसे दूर चली गयी और मुड़कर फिर गुस्से से बोली:

"तुम यह मत समझना कि मैं अपने को तुम लोगों से तुच्छ समझती हूँ। अगर मैं तुमसे कम पढ़ी-लिखी हूँ तो मुझमें इनसानियत कम नहीं है। देखती हूँ, इनमें से कौन-सी चीज़ ज्यादा जरूरी है। अगर मैं अपने हाथों से काम करती हूँ तो तुम्हें लगता है कि मैं तुमसे नीची हूँ, क्यों? पर मैं तुम से घट कर नहीं हूँ। और जहां तक पढ़ाई का सवाल है तो दो साल बाद तुम और अमरा मुझसे मुक़ाबला करके देख लेना।"

मैं एक शब्द भी नहीं कह पाया। वह चली गयी। एक बार भी मुड़कर नहीं देखा। मैं खड़ा रहा, मुझमें हिलने-डुलने की ताक़त नहीं रही थी।

"तुम इसलिए मुझे नहीं, अमरा को प्यार करते हो क्योंकि वह मुझसे ज्यादा सुन्दर है, उसके शरीर का गठन मुझसे ज्यादा अच्छा है।" अगरा यह जानती थी, पर उसे मानना नहीं चाहती थी। और कोई लड़की यह मान भी नहीं सकती। और इसका दोष उसने हमारी पढ़ाई पर मढ़ा। मुझे अगरा की बातें बहुत बुरी लगी थीं। पर मैं समझ गया, उसने मुझसे ऐसा क्यों कहा। मेरे पास अगरा को दोषी ठहराने का कोई कारण नहीं। अमरा की भी इसमें कोई गलती नहीं है। वह भी, और मैं भी, हम दोनों ही कठिन परिस्थिति में पड़े हुए हैं... अमरा मुझे प्यार नहीं करती। क्या यह सच है? हां, बेशक, यह सच है। मैं काफ़ी पहले से जानता था कि अमरा मुझे प्यार नहीं करती; शायद मैं कभी-कभी ऐसा सोचता था, मेरे दिमाग़ में ऐसा विचार अकसर आया करता था... पर अमरा हमेशा मेरी आंखों में बसी रहती है और अगर उसकी छवि दूर होती तो मैं उसके पीछे दौड़ता था। अमरा का नाम मैं अपने दिल में लिये घूमता हूँ और उसे निकालना नहीं चाहता। ओह, ऐसा बिलकुल नहीं हो सकता कि अमरा मुझे बिलकुल प्यार न करे। मैं इस पर विश्वास नहीं कर सकता और न ही करना चाहता हूँ।

.   .

मैं नाले के किनारे अकेला खड़ा था। वह अपना पानी मेरे सामने से बहा ले जा रहा था और सिर्फ़ मैं ही ऐसा था जिसे कहीं जाने या चलने-फिरने के लिए कोई जगह नहीं रह गयी थी।

मैं नाले के पीछे-पीछे चला जा रहा था। पानी अपनी निर्मल चमक मुझ पर डालता, अपने साथ मेरे आंसू की उस धुंधली बूंद को बहा ले गया जो मुझे उसका प्रकाश देखने से रोक रही थी।

मेरे पैर अमरा के घर तक ले आये। मैं रुक गया और दरवाज़े की दूसरी ओर देखने लगा। घर में किसी के भी न होने के सारे आसार थे। खिड़कियां और दरवाज़े बन्द थे। मैंने फाटक के पास पहुंचकर बग़ीचे में झांका। चुप्पी छायी हुई थी, वैसी ही चुप्पी जो घर में किसी प्राणी के न होने से होती है। पर बील्गा?

"बील्गा, बील्गा!" मैंने फाटक के पास से आवाज़ दी। मेरी आवाज़ सूने आंगन की चुप्पी में खो गयी।

कुतिया भी बाहर नहीं निकली। मैं और आवाज़ देना चाहता था पर मेरी सांस फूल गयी। मैं जहां का तहां खड़ा रहा। मैं बाड़े पर कोहनी टिकाये खड़ा अपने उस घर की ओर देखता रहा, जो मुझे कभी प्यारा था। आज मैं वहां एक ग़ैर, बेकार आदमी की तरह खड़ा था। पर बील्गा को क्या हो गया? वह घर में क्यों नहीं?

"बील्गा! बील्गा!"

पहले वह खुशी से दौड़ी आती थी, मेरे चारों ओर कूदने लगती थी। ऐसा भी होता था कि चिड़िया बाद में उड़ती थी बील्गा पहले भागकर आ पहुंचती थी। और अगर कोई अनजान आदमी मेरी तरह खड़ा होता, तो वह उसके टुकड़े-टुकड़े कर देती।

जब मैंने घर के अन्दर से झांकती कुतिया का सिर देखा तो बस किसी तरह मेरे आंसू ही निकलते-निकलते रहे। उसने धीरे से बाहर निकलकर अंगड़ाई ली, बेमन से मेरी ओर देखा, फिर सिर लटकाये, कान झुकाये धीरे-धीरे आंगन में चली गयी।

मैंने फिर आवाज़ दी।

बील्गा मुझ पर ध्यान दिये बग़ैर आंगन में घूमती रही। इसे क्या हो गया है? क्या वह बहरी या अंधी हो गयी है? क्या उसे मेरी बू नहीं आयी, मेरी आवाज़ नहीं सुनाई दी या मुझे भूल गयी?

बील्गा मेरे पास आकर रुक गयी, उसने मेरी ओर सूनी-

सूनी-सी नजर डाली, कुछ देर खड़ी रही और उसके बाद चुपचाप मुड़कर पहले ही की तरह उदासीन-सी घर के पीछे चली गयी। तभी मैंने देखा कि वह बड़ी मुश्किल से चलते हुए अपने पिछले हिस्से को घसीट रही है। बेचारी! शायद उसके ऊपर से कोई गाड़ी निकल गयी थी। वे यहां, घर के सामने से धूल उड़ातीं, अपने शोर से कान बहरे करती लगातार निकलती रहती थीं। शायद इन गाड़ियों ने बील्गा की कमर ही नहीं तोड़ी बल्कि उसका स्वभाव भी बिगाड़ दिया था। शुरू में वह हर गाड़ी के पीछे भागती थी, भौंक-भौंककर पागल-सी हो जाती थी। पर गाड़ियां बिना उसकी ओर ध्यान दिये, अपने रास्ते चली जाती थीं। बील्गा भी धीरे-धीरे थकने लगी। वह गाड़ियों की क़तारों और अनजाने आदमियों को नहीं रोक सकी और चुप हो गयी... और हो भी क्या सकता था?

हालांकि मैं उसे काफ़ी प्यार से बुलाता रहा पर बील्गा फिर दुबारा नहीं निकली। मेरे पैरों तले जमीन डोल उठी और मैं लड़खड़ाता घर से दूर चला गया।

मैंने स्कूल जाकर अमरा को ढूंढने का निश्चय किया। अगर मैं अमरा से मिलने स्कूल जाऊं तो इसमें ऐसी क्या बात है। मैंने सोच लिया, उसके पास स्कूल में पहुंच जाऊंगा। भला वहां कम लोग आते-जाते हैं। मैं किसी की ओर ध्यान नहीं दूंगा और वहां पहुंचते ही कहूंगा: नमस्ते, अमरा! काश, वह मुझे स्कूल में मिल जाये। मैं सीधा स्कूल में घुस जाऊंगा, चाहे सब देखते रहें, मैं कोई बेकार का आदमी तो हूं नहीं... बस भाग्य मेरा साथ दे और अमरा मुझे वहां मिल जाये। मैं साफ़-साफ़ कह दूंगा कि मैं उससे मिलना चाहता हूं...

मैं पगडंडी के सहारे-सहारे स्कूल की दिशा में जा रहा था और मेरे पैर मेरी गति कम किये जा रहे थे। मेरे सामने से दो औरतें आ रही थीं। मुझे अपनी आंखों पर विश्वास नहीं हुआ। यह अमरा और उसकी मां देस थीं। मैं क्या करूं? वापस मुड़ जाऊं या छिप जाऊं? वे मुझे पहचान गयीं। नहीं, मैं उनके पास से बिना रुके

निकल जाऊंगा। मैं लम्बे-लम्बे डग भरने लगा, पर मेरे पैरों में शक्ति ही नहीं रही।

जब अमरा ने मुझे देखा, वह जैसे खुश हुई और चिल्लाकर बोल उठी:

"अलोऊ, तुम्हें कहां जाने की जल्दी हो रही है? तुम इतने दिनों से दिखाई नहीं दिये। हमसे क्या ग़लती हो गयी, प्यारे अलोऊ? तुम कहां रहते हो और हमसे मिलने घर क्यों नहीं आते?"

मेरा जवाब भी उतना ही अस्पष्ट था जितनी कि मेरी उलझन में पड़ी हालत।

हम लोग एक-दूसरे से कोई काम की बात किये बिना विदा हो गये। और मैं अपनी मुसीबतों के साथ फिर अकेला रह गया।

सारे रास्ते देस ने अपनी बेटी से कुछ नहीं पूछा, चुप रही। पर घर पर वह चुप नहीं रह सकी:

"अमरा, तू चुप रहने लगी है, मुझे कुछ नहीं बताती।"

"मैं क्या बताऊं, मां?"

"क्या मुझे बताने के लिए तेरे पास कुछ भी नहीं है?"

"हां, मां, बताने लायक़ कुछ भी नहीं..."

"नहीं, बेटी, ऐसा नहीं हो सकता, पहले तू ज़्यादा खुली थी..."

"तुम क्या जानना चाहती हो, मां?"

"मैं तुम्हारे व्यक्तिगत मामलों के बारे में पूछ रही हूं..."

"कौन से व्यक्तिगत मामले? मेरे व्यक्तिगत मामले औरों के जैसे हैं..."

"फिर भी मुझे बता, अमरा।"

"तुम्हें क्या बताऊं, मां?"

जब देस समझ गयी कि अमरा उसे चक्कर दे रही है, जवाब देने से बच रही है तो उसे गुस्सा आ गया:

"मैं सारी सच्चाई जानना चाहती हूं... अगर तू मुझे अपनी मां समझती है तो तुझे मुझे बताना चाहिए कि तेरे और अल्दीज़ के सम्बन्ध कैसे हैं?"

अमरा जैसे इस सवाल से अचानक पकड़ी गयी। अल्दीज़ तो उसके दिल में था ही नहीं।

"कौन-सा अल्दीज़? अल्दीज़ से क्या मतलब, मां?"

"अगर अल्दीज़ नहीं है तो फिर तेरा कौन है?"

"क्या किसी का होना ज़रूरी है?"

"मैं क्या कह रही हूं, अमरा, पर बता। अल्दीज़ से तेरे सम्बन्ध कैसे हैं?"

"सम्बन्ध हैं ही नहीं।"

"अमरा, तू झूठ बोल रही है, क्या अल्दीज़ से तेरी कोई बात नहीं हुई थी?"

"मां, तुम क्यों अल्दीज़ को मेरे साथ जोड़ रही हो? हम दोनों में भाई-बहन के सम्बन्ध हैं..."

"मुझको पागल मत बना, अमरा!"

या इसका कोई और आ गया है? आह, बेटी छुपाने लगी, इसका क्या किया जाये। पर आखिर वह कौन हो सकता है?

"सुन, अमरा। किसने तेरी ज़बान इस तरह सी दी? कौन है आखिर? तुझे मुझे बताना चाहिए।" देस की आवाज़ ऊंची होने लगी। उसे ज़ोर-ज़बरदस्ती से बेटी से पता लगा लेने की आशा थी।

"मेरी ज़बान किस चीज़ से सी जा सकती है, जब तुम्हें बताने को कुछ है ही नहीं, मां," अमरा साफ़-साफ़ कहने में आगा-पीछा करने लगी।

"कैसे कुछ नहीं है बताने को? तेरे और अल्दीज़ के बीच में क्या बात हुई, वह तो इतना अच्छा लड़का है।"

"अल्दीज को मैंने कभी प्यार नहीं किया, मां।" "फिर आखिर तू किसको प्यार करती है?" "तुम उसे नहीं जानती!" अमरा को यह बात सहन नहीं हो पायी और वह दरवाजे से बाहर भाग गयी। देस इस खबर से दंग रह गयी और सिर पकड़कर बेंच पर बैठ गयी। "हाय, क्या-क्या देखना पड़ रहा है मुझे! मेरी बेटी मेरे हाथों से निकल गयी!!"

पन्द्रह

मैं चरागाह में रह रहा था और नीचे, गाँव में जाने की मेरी बिलकुल भी इच्छा नहीं हो रही थी। शायद मेरी ऐसी इच्छा रही हो पर मैं मानता था, मेरे लिए नोवालूनिये में करने को कुछ भी नहीं। शायद इस वजह से कि वहाँ रहने से मुझे कोई राहत नहीं मिलती थी। मेरे दिल को अच्छा लगे या बुरा, सब मेरे दिल में ही रहता है और किसी को इस का पता नहीं चलेगा। वहाँ मैं अपने लिए नया क्या देख लेता? कौन-सी ऐसी चीज थी जो मेरा हौसला बढ़ाती, मुझे खुशी देती? इससे अच्छा तो यही रहेगा कि मैं जाँचनेवाली, सवाल पूछनेवाली और सहानुभूति दिखानेवाली नजरों से दूर ही रहूँ। काम ही मेरा सबसे अच्छा साथी और मित्र है।

काम में व्यस्त रहने पर मैं सब कुछ भूल जाता था। अगर काम मेरा ध्यान नहीं बंटा देता तो शायद मैं पागल ही हो गया होता। पर काम खत्म होने के बाद सुस्ताने के लिए जब मैं पत्थर

पर शान्ति से बैठता हूँ, मेरे सारे विचार, मेरी सारी अनुभूतियां अच्छा मौका देखकर मुझपर वैसे ही टूट पड़ती हैं जैसे भेड़ियों का झुण्ड ठोकर खाकर गिरे घोड़े पर।

इस समय भी मैं स्थिर बैठा बकरी के चंचल बच्चों को घास के मैदान में खेलते देख रहा हूँ। वे चारों ओर भाग रहे हैं, अपने कच्चे सींगों से एक-दूसरे को टक्कर मार रहे हैं, बच्चों की तरह धमाचौकड़ी कर रहे हैं। एक बकरी का बच्चा, जो लगता था चालाकी से बचने रहने से उकता गया था, भागकर मेरे पास आया और अपनी चंचल आँखें मुझ पर टिका कर देखने लगा। इस बकरी के बच्चे की मुख-मुद्रा आश्चर्यजनक रूप से गंभीर थी। वह इतने अजीब ढंग से मेरी आँखों में झांक रहा था मानो चाहता हो कि मैं भी उसकी आँखों में झांककर वह सब जान लूं, जो वह सोच रहा है। मैं तो सोचने लगा, कहीं वह बीमार तो नहीं। मैं जानता हूँ, जानवर जब भी बीमार होता है, आदमी से सहायता अवश्य मांगता है। इसमें कोई शक नहीं कि वह कुछ कहेगा नहीं पर ऐसी हरकतें करेगा कि आदमी फौरन उसकी ओर ध्यान देगा और जरूर जान जायेगा कि वह बीमार हो गया है। पर नहीं, यह बकरी का बच्चा पूरी तरह स्वस्थ है। उसका पेट भरा है, उसको सर्दी नहीं लग रही है, उसकी आँखें साफ़ हैं, उसमें बीमारी का कोई लक्षण नहीं है, वह मुरझाया हुआ नहीं है और विश्वासभरी नजरों से दुनिया को देख रहा है। पर अगर यह बात है तो वह खेलना छोड़कर मेरे पास क्यों आया? उसे क्या चाहिए, कहीं वह मुझ पर तरस खाकर तो मेरे पास नहीं आया? उसने देख लिया कि मैं उदास बैठा हूँ और मेरे विचार भी शोकपूर्ण हैं। लोगों का कहना है कि कुत्ते मालिक की मनोस्थिति का अन्दाजा लगा सकते हैं। पर हो सकता है, दूसरे जानवरों में भी यह क्षमता हो? शायद यह प्यारा चंचल प्राणी भी महसूस कर रहा हो कि मेरी मनःस्थिति ठीक नहीं और इसीलिए सहानुभूति दिखाने मेरे पास आ गया।

बकरी के बच्चे, घोड़े आदि क्या चाहते हैं, आदमी से किस

बात की आशा करते हैं, अचानक ही यह सब जानने की खूबी मुझे अपने अन्दर महसूस होने लगी। पर अगर ऐसा है तो हम आदमी, क्यों एक-दूसरे का दिल नहीं पढ़ पाते। अमरा क्यों नहीं समझ पाती कि मुझ पर क्या बीत रही है? मैं उसके दिल की बातें क्यों नहीं जान पाता?

मैं बैठा हुआ हूँ और मेरी कल्पना में हर समय तसवीरें बदल रही हैं जैसे मैं अपने बारे में बनी कोई फ़िल्म देख रहा हूँ। कभी पूरी तरह अंधेरा छा जाता है और पर्दे पर सिर्फ़ काला रंग ही नज़र आता है, कभी अमरा अचानक मेरे सामने आ खड़ी होती है। अब वह सड़क पर स्कूल के बच्चों के साथ चली आ रही है और हंस रही है। अब मैं सिर्फ़ उसका चेहरा, उसकी मुस्कान और उसकी आँखें ही देख रहा हूँ।

मैं समझता हूँ, वास्तव में वह बहुत दूर है, पर फिर भी जब वह इस तरह आती है, मुझे राहत मिलती है। मुझे अपने दिल से उस की नेकी, उसका चरित्र, उसका व्यवहार – वह सब कुछ जो मनुष्य का सार होता है महसूस करते हुए बड़ी खुशी हो रही है। मैं इसलिए खुश हूँ क्योंकि कोई मुझे ऐसी मुलाक़ातों से वंचित नहीं कर सकता। वे न तो स्वयं अमरा पर निर्भर करती हैं, न अल्दीज़ पर और न ही किसी अलगेरी पर।

तस्वीरें एक के बाद एक बदल रही हैं और पर्दे पर फिर अंधेरा छा जाता है, मैं अंधेरे में अकेला बैठा रह जाता हूँ। जब मैं अमरा को देख रहा था, इस बीच बकरी का बच्चा जा चुका था, लगता है, ऐसे आदमी के सामने खड़े-खड़े जो उसकी ओर बिलकुल ध्यान नहीं दे रहा है, उसकी तबीयत ऊब गयी थी। कल्पना में अमरा मेरी है, पर मैं समझता हूँ कि वास्तव में हम पहाड़ और समुद्र की तरह हैं। मैं कैसे उस तक पहुंच सकता हूँ। मैं सिर्फ़ एक पशुचिकित्सक जो हूँ। इससे क्या कि मैं अपने काम को पसंद करता हूँ और उसे बदलने के लिए तैयार नहीं। पर दूसरों की नजरों में तो बच्चों को पढ़ाने और जानवरों का इलाज करने में बड़ा अंतर है। मेरी फ़िल्म फिर शुरू हो गयी और परदे पर से

अमरा अचानक बोल उठी, "तुम भी क्या, अलोऊ, तुमने कैसे सोच लिया कि तुम्हारे काम का मेरे लिए कोई महत्व है? ऐसी कोई बात एकदम नहीं लेकिन..." अमरा की बात पूरी सुनने की मेरी इच्छा नहीं हुई और मैंने अपनी इच्छा शक्ति से अपनी कल्पना समेट ली। जिस जगह बकरी का बच्चा खड़ा था, बिलकुल उसी जगह पर मैंने अब हरज़ामान को देखा। वह बिना कोई आहट किये मेरे पास आकर खड़ा हो गया था। अब हम दोनों बैठे अपनी पहाड़ी से नीचे घाटी को देख रहे हैं।

"हाँ, समय बीता जा रहा है। बिजलीघर बनने की बातें तो शायद बहुत दिनों पहले हुई थी पर अब वह जल्दी ही बनकर खड़ा हो जाने वाला है।"

"हाँ, वह जल्दी ही बन जायेगा। बिजली आ जायेगी। तब हमारा गाँव बिलकुल बदल जायेगा। सामूहिक फ़ार्म के सारे काम बिजली से होने लगेंगे," मैं ऐसे बोले जा रहा था जैसे कोई इलाक़ाई अख़बार पढ़ रहा होऊँ। "हमारा काम हल्का करने के लिए फ़ार्म पर भी बिजली आ जायेगी। श्रम की उत्पादन क्षमता कई गुना बढ़ जायेगी।"

"हाँ, हाँ, शायद बिजली हमारी जगह सारे काम करने लगेगी। हम अपनी जगह से उठेंगे ही नहीं, बैठे रहेंगे। क्या वह मेरी जगह खा-पी नहीं सकेगी? नहीं, बेटा, हम आदमियों के बिना बिजली किसी काम की नहीं होगी।"

"पर आखिर उसका आविष्कार तो आदमी ने किया है। आदमी उन सब चीजों का आविष्कार करता है जो उसके लिए लाभदायक साबित हों।"

"हमेशा नहीं। लेकिन देखो, हम बहस में नहीं पड़ेंगे। बिजली आयेगी – यह अच्छी बात है। मैं क्या इसका विरोध करता हूँ? पर मैंने सुना है, बिजली से गायें भी दुही जायेंगी।"

"हाँ, ऐसा ही होगा।"

"तुम क्या कह रहे हो, बेटा?!"

"और क्या? हमारे यहाँ बस बिजली आ जाये, फिर हम जरूरी साज़ोसामान ले आयेंगे, काम शुरू हो जायेगा।"

"और मैं सोचता हूँ, ऐसा हो ही नहीं सकता। हमारे यहाँ कुछ नहीं हो सकेगा।"

"क्यों नहीं हो सकेगा? दूसरे लोगों के यहाँ तो हो रहा है।"

"देश बहुत बड़ा है। जो एक जगह माफ़िक आ सकता है, दूसरी जगह नहीं आयेगा। तुम ज़रा सोचो तो सही, भला अपनी गायें मशीन से दूध निकलवाने देंगी? वे उस से पहले ज़िन्दा ही पहाड़ी से कूद जायेंगी, पर इस मशीन के आगे नहीं झुकेंगी।"

"आखिर वे जा कहाँ सकती हैं? थोड़ी देर पागल हो लेंगी, फिर आदत पड़ जायेगी, जानवरों को तो कई तरह की बातों का आदी बताया जाता है। आप क्या कभी सर्कस नहीं गये? वहाँ जानवर नाचते हैं, साइकिल चलाते हैं, फ़ुटबॉल खेलते हैं। कहते हैं, खरगोश को माचिस की तीली जलाना सिखाया जा सकता है, पर गायें तो..."

"सवाल यह है, कैसी गायें। शायद कुछ विशेष प्रगतिशील या शहरी गायें ही मशीन से दूध निकालने दे सकती हैं, पर नहीं, भाई, अबखाज़ियाई गायें ऐसा करने दें, मैं कभी विश्वास नहीं कर सकता, कुछ कहना ही फ़िज़ूल है।"

हम थोड़ी देर चुप रहे। मैं तो सोचने लगा था कि कहीं हरजामान को इस बात का बुरा तो नहीं लग गया कि मैं उसकी बात का बुरी तरह खंडन कर रहा था। पर कुछ देर बाद वृद्ध फिर बोल उठा:

"आखिर तुम भी तो मेरी तरह ही अपने गाँव को प्यार करते हो या नहीं?" हरजामान अचानक पूछ बैठा मानो एक बार

फिर जाँच लेना चाहता हो कि वास्तव में मैं नोवालूनिये को चाहता हूँ या नहीं।

"मैं उसे बेहद प्यार करता हूँ।"

"सफलता हमेशा तुम्हारे क़दम चूमे। तुम समझदार लड़के हो। हर आदमी को अपने गाँव से प्यार होना चाहिए। मेरे लिए यह काफ़ी मायने रखता है कि तुम उसी तरह नोवालूनिये को भी प्यार करते हो। हालांकि वह तुम्हारे अपने गाँव की जगह नहीं ले सकता है..."

"आप क्या मुझे ग़ैर समझते हैं? या मैं नोवालूनिये को पराया समझता हूँ? अगर किसी ने आपसे ऐसा कहा है, तो उसने आपको धोखा दिया है। वह परले दर्जे का धोखेबाज और झूठा है।"

"नहीं, नहीं, किसी ने मुझसे कुछ नहीं कहा। मैंने ही ऐसा सोचा था। पर मुझे खुशी है, अगर मेरी बात ग़लत है और मैंने ग़लत सोचा।"

"मैं यहाँ काम करता हूँ, खाता हूँ, सोता हूँ, इसके रास्तों पर चलता हूँ, घास पर बैठता हूँ और इसे अपना गाँव समझता हूँ। और हो भी क्या सकता है?"

"उम्र दराज़ हो जो तुमने इस तरह की बात कही। तुम सदा खुश रहो, बेटा। होना भी ऐसा ही चाहिए। अपनी इज़्ज़त करनेवाला आदमी घुमक्कड़ नहीं हो सकता जिसके लिए हर जगह एक-सी होती है।"

"मैं जाने की सोचता भी नहीं हूँ। मैं हमेशा इसी गाँव में रहना चाहता हूँ।"

"तुम्हारा इरादा तुम्हें खुश रखे, बेटा। शाबाश। नहीं तो ऐसे लोग भी होते हैं, जो आज यहाँ, तो कल वहाँ, इस धरती पर कहीं भी अपने लिए उपयुक्त जगह नहीं ढूंढ़ पाते। मिसाल के तौर पर उसे ही लो... क्या नाम है... अलगेरी।"

अलगेरी का नाम सुनते ही मैं चौकन्ना हो गया। हरजामान यह नाम केवल संयोगवश ही नहीं ले सकता था, या तो वह जानना

चाहता है कि मेरे इंजीनियर के साथ कैसे संबंध हैं, या वह मुझ से पता लगाना चाहता है कि अलगेरी और अमरा के आपस में कैसे सम्बन्ध हैं। हरज़ामान काफ़ी देर तक घुमा-फिराकर बातें करता रहा और अब बहाना कर रहा है जैसे अलगेरी का नाम उसने संयोगवश ही लिया हो। मैंने भी अपने आपको अनजान दिखाने का फ़ैसला किया।

"अलगेरी ? क्या वह घुमक्कड़ है ? मुझे तो इस बात में शक है।"

"ओह ! बेटा, ऐसे लोग वहीं रात गुज़ार देते हैं, जहाँ अंधेरा हो जाता है। जिस जगह उन्हें दिन निकलता दिखाई देता है वहीं से अपनी आगे की यात्रा आरम्भ कर देते हैं। आज वह हमारे यहाँ बिजलीघर बना रहा है, कल किसी और जगह होगा।"

"पर उसका तो पेशा ही ऐसा है। क्या इसके लिए उसे बुरा समझा जा सकता है ?"

"मैं उसको बुरा थोड़े ही बता रहा हूँ। जैसे चाहे, वैसे जिये। खुश रहे। पर मैं तो ऐसी ज़िन्दगी नहीं चाहूँगा और न ही अपने दोस्तों के लिए चाहूँगा।"

"नहीं, अलगेरी का काम अच्छा है। उससे किसी को भी ईर्ष्या हो सकती है।"

"कहीं तुम्हें तो उससे ईर्ष्या नहीं हो रही ?"

"क्या बताऊं, अगर सच कहा जाये ..."

"मैं तुम्हारी इस बात की तारीफ़ नहीं करूंगा। क्या जीवित प्राणियों के साथ काम करना, उनका इलाज करना, उन्हें आराम पहुंचाना बुरा है, क्या हर समय कंक्रीट, पत्थर, काँटेदार तार, गाडियों के साथ काम करना अच्छा है ?"

"मैं शिकायत नहीं कर रहा, पर मैं यह कहना चाहता हूँ कि अलगेरी का एक ख़ास पेशा है और उसे उचित सम्मान मिलना चाहिए।"

"क्या इसलिए कि वह हर वक्त एक जगह से दूसरी जगह जाता रहता है ?"

"पर वह अकेला तो दूसरी जगह नहीं जाता, अपने साथ वह प्रकाश और बिजली ले जाता है।"

"अच्छा ! अब तक हम उसकी बिजली के बग़ैर रोटी खाते रहे हैं, शराब पीते रहे हैं और तुम्हें बता दूँ कि हम कोई बुरी ज़िन्दगी नहीं बिता रहे थे। हम अब भी अपना काम बिना तुम्हारे अलगेरी के चला सकते हैं। मुझे न तो खुद उसकी कोई ज़रूरत है और न ही उसकी नास-पीटी बिजली की।"

हरज़ामान की बातें सुनने से मुझे और अच्छी तरह मालूम हो गया कि असली कारण बिजली नहीं है, बल्कि किसी कारण से अलगेरी वृद्ध को पसन्द नहीं आया और अब वह अपना गुस्सा उसके पेशे पर उतार रहा है। मैं अच्छी तरह समझ गया कि अगर अमरा और अलगेरी में कुछ बात है तो उन्हें बिना हरज़ामान के आशीर्वाद के ही काम चलाना होगा। पर मुझे इन सब बातों से क्या मतलब ? मानो हरज़ामान अपनी पोती की भावनाओं को क़ाबू में रख सकता हो और जहाँ चाहे उन्हें मोड़ सकता हो।

जब हरज़ामान ने देखा कि अलगेरी के बारे में मैं उसकी बातों का अनमने होकर समर्थन कर रहा हूँ, तो उसने फिर से बिजलीघर की बात छेड़ दी।

"इसमें कोई शक नहीं कि सड़कें और बिजली बुरी चीजें नहीं हैं। पर आखिर वे खाली जगह में तो आ नहीं सकतीं, आसमान से भी नहीं टपक सकतीं। मैं जानता हूँ, दूर के पहाड़ी इलाकों में जहाँ तक बड़ी सड़क पहुंच चुकी है, जंगल गायब हो रहे हैं, पहाड़ नंगे हो गये हैं, पानी उन पर से सब कुछ बहा ले जाता है। क्या अबखाज़िया की धरती के लिए, उसकी प्रकृति के लिए तुम्हारा दिल नहीं दुखता ?"

"उन्हें कौन जंगल काटने और पहाड़ों को नंगा करने देगा ?"

"हूँ ! कौन करने देगा ? जब सड़क ठीक मेरे बाग़, मेरे परिवार के क़ब्रिस्तान के बीच से निकालने दी गयी तो फिर खुले जंगल में तो ... तुम क्या उनका रास्ता रोक लोगे ?"

हमारी बातचीत का विषय अकसर बदलता रहा। हालांकि हम कभी कभी बहस भी कर रहे थे, लेकिन लगता था कि हरज़ामान के लिए मैं एक अच्छा सहभागी साबित हुआ। अन्त में वह बोला,

"सुनो, बेटा, तुम अब हमारे घर में नहीं रहते हो, यहां तक कि झांकते भी नहीं हो, अगर तुम आओगे तो हम सब को बड़ी खुशी होगी। कल रविवार है। आकर हमारे परिवार के साथ दोपहर का खाना खाना।"

इस तरह मैं हरज़ामान के घर में मेहमान बनकर आया। उस घर में मेहमान बनकर आया जहां मैं पहले रहा करता था, अपने आपको घर का आदमी समझता था।

बेटी से बात होने के बाद, जिसे झड़प कहना ज्यादा ठीक होगा, देस चैन से नहीं बैठ सकी। इसलिए कि बाद में उसे अपने को ही दोष न देना पड़े और यह देख कर कि वह और कुछ सोच पाने की हालत में नहीं है, देस अलीआस पर बरस पड़ी,

"तुम अपनी मशनी में पूरी तरह उलझ गये हो। तुम सोचते हो, दुनिया में उसके अलावा कुछ और है ही नहीं।"

"मेरी मशीन से तुम्हें क्या तकलीफ़ हो रही है?"

"क्यों नहीं? तुम हमारे बारे में बिलकुल भूल गये, जैसे हम दुनिया में हैं ही नहीं। हम भी तो जीते-जागते आदमी हैं।"

"पर हुआ क्या है?"

"क्या हुआ? क्या तुम्हें मालूम नहीं कि हमारी एक बेटी है?"

"तो उसे क्या हो गया है?"

"पर क्या तुम उसे कुछ होने का इन्तजार करते रहोगे?"

"उसे क्या हो सकता है?"

"काश, मैं जान पाती।"

"अगर नहीं जानतीं तो क्यों बोलती हो। तुम्हें क्या बुखार चढ़ा हुआ है?"

"हम दोनों को बुखार चढ़ जाने तक इन्तज़ार नहीं करना चाहिए। सब कुछ पहले से ही कर लेना चाहिए।"

"पर क्या?"

"अमरा अब बच्ची नहीं रही है। वह जवान लड़की है।"

"तो फिर..."

"किसी न किसी को उसे सही रास्ता बताना चाहिए।"

"तुम सोचती हो कि वह सही रास्ते से भटक गयी है?"

"तुम बच्चों की तरह सोचते हो। जैसे तुम नहीं जानते कि यह सब कैसे होता है। वह कुछ कर बैठे उससे पहले उसकी शादी कर देनी चाहिए।"

"तुम खुद बच्चों से बुरी हो। वह क्या गुड़िया है, जो हम उसकी शादी किसी के साथ कर दें? वह अपना भला-बुरा खुद समझती है। घबराओ मत।"

"ठीक है, तुम देखना वह कैसे अपना भला-बुरा समझती है, पर तब तक देर हो जायेगी।"

"मुझे लगता है, तुम खुद ही कुछ गड़बड़ शुरू कर रही हो। मैं तुमसे प्रार्थना करता हूं, अमरा के मामलों में दखलन्दाजी मत करो।"

"ठीक है, जैसा चाहो, वैसा करो, पर इस सबकी जवाबदेही तुम्हीं पर होगी।"

ज़रूरत की बातें और उससे भी कहीं ज्यादा कह लेने के बाद देस कुछ समय के लिए शान्त-सी हो गयी। रविवार के दोपहर का खाना ठीक-ठाक हो गया। मेरे आने से घर के सब लोग खुश हुए थे और मैंने भी उन दिनों की तरह, जब मैं हरज़ामान के परिवार के साथ रहता था, अपने आप को हल्का और स्वाभाविक महसूस किया। अमरा विशेष रूप से अच्छी लग रही थी। वह मेज़ पर खाना परोस रही थी, ताज़ा पकवान लाकर रख रही थी, खाली बर्तन उठाकर ले जा रही थी, वह एक मिनट के लिए भी नहीं बैठी। उसकी नम्रता, गर्मजोशी और प्यार मेज़ पर बैठे खा रहे सब लोगों के लिए काफ़ी रहा।

उसे अन्दाज था कि किसे क्या चाहिए, पर जब वह मेरी ओर पूछती-सी देखती तो मुझे लगता, ऐसी नजरें सिर्फ़ मेरे लिए ही हैं, सिर्फ़ मेरी ही वह इतनी खातिर कर रही है, सिर्फ़ मेरे कारण ही वह मेज़ की चारों ओर इतनी दौड़धूप कर रही है। उसकी नजर मुझसे जो चाहे करा रही थी। उसने मेरे और

अपने बीच में इतने शान्तिपूर्ण, भले और पवित्र सम्बन्ध स्थापित कर लिये थे कि मैं उसे सब कुछ साफ़-साफ़ बता देने, उसे अपना प्यार जाहिर करने की बात सोच भी नहीं सकता था। उसने मेरे दिल में झाँककर देखने की इच्छा का कोई संकेत नहीं दिया। अमरा में किसी तरह की शरारत या नखरे का संकेत न था।

उस दिन बात मैं केवल ताल्येई से ही कर रहा था। वह संयोग से अभी-अभी सुखूमी से आया था और मैंने देखा, वह काफ़ी बदल गया था। हालांकि ताल्येई बाहर से पहले जैसा लड़का ही रह गया था, उसके दिल और चेतना में शायद काफ़ी गंभीर परिवर्तन हो चुके थे। वैसे सुखूमी में पढ़ने से पहले भी वह अपनी उम्र के लड़कों से अपनी विवेकशीलता और गंभीरता के कारण अलग ही नज़र आता था। अब तो वह संगीत और कला को परखने में, जीवन के बारे में इतने परिपक्व विचारों का हो गया था कि ताल्येई को अगर मैंने देखा न होता और उसे जानता न होता तो शायद सोच लेता कि कोई अनुभवों का धनी, वुद्धिमान वयस्क बोल रहा है।

खाने के बाद सब अपने-अपने कामों में व्यस्त हो गये और मेरी तरफ़ किसी ने विशेष ध्यान नहीं दिया। मैं और ताल्येई बालकनी में बैठे बातें करते रहे। हालांकि किशोर की बातों में उसके अध्यापकों के शब्द और विचार झलक रहे थे, पर साफ़ मालूम दे रहा था कि वह उन्हें नाप-तौल और सोच-समझकर बोल रहा था, जिसे कहना चाहिए, अपने दिल की छलनी में छानकर उत्साह, रुचि और सहज ढंग से बोल रहा है। उसने अपने भविष्य की योजनाओं के बारे में भी बताया।

"मेरा अपना गाँव है। मेरा नोवालूनिये। मैंने उसकी कितनी कमी महसूस की उस बड़े शहर में! रातों को मैं उसकी आवाज़ सुनता रहता था। दुनिया में शायद नोवालूनिये जैसी सुन्दर आवाज़ किसी और गाँव की नहीं है। अलोऊ, जरा ध्यान से सुनो, क्या यह सच नहीं है कि हमारे गाँव की आवाज़ अद्‌भुत है?"

"आवाज़? तुम किस चीज़ की बात कर रहे हो? आलीप्स्ता के शोर की?"

"सिर्फ़ आलीप्स्ता का ही नहीं, सारे गाँव का।"

"पर मैं इसके अलावा और कोई आवाज़ नहीं सुन रहा हूँ।"

"तो इसका मतलब है, तुम बहरे हो। ठीक से सुनो। क्या तुम्हें कोई संगीत नहीं सुनाई दे रहा?"

मैं वास्तव में ध्यान से सुनने लगा, पर मुझे सुनाई दी केवल अमरा के रसोई में तश्तरियाँ उठाने-रखने की आवाज़। मेरे विचारों का क्रम फिर अमरा की ओर मुड़ गया। मैं उसकी कल्पना बर्तनों के बीच में कर रहा था, उसकी हर गति और मेरी कल्पना की पुष्टि खट-खट और झन-झन से हो रही थी।

"क्या तुम तश्तरियों की आवाज़ को अपने गाँव की आवाज़ समझ बैठे हो?".

"कौन-सी तश्तरियाँ, कौन-सी आवाज़? अमरा, बर्तन छोड़ कर हमारे पास आ जाओ! अलोऊ को हमारे गाँव का संगीत सुनाई नहीं दे रहा है। वह कहता है कि नदी के शोर के अलावा और कोई आवाज़ नहीं आ रही है, कोई संगीत सुनाई नहीं दे रहा है। क्या तुम्हें भी नहीं सुनाई देता?"

हम बरामदे में खड़े सुनते रहे। सच कहूँ तो मैंने अभी भी कुछ नहीं सुना था। अमरा या तो वास्तव में वहाँ कोई संगीत सुन रही थी या दिखा रही थी जैसे सुन रही हो। ताल्येई खड़ा था, उसकी आँखें चमक रही थीं उसके चेहरे पर कुछ अजीब-सा भाव था। मुझे आश्चर्य हो रहा था कि अकेला यह आदमी यहाँ कैसे संगीत सुन सकता है, जहाँ दूसरों को एक आवाज़ भी सुनाई नहीं दे रही।

हमारे तोवालूनिये में बिजलीघर बनने यह दूसरी पतझड़ थी। गांव के हर क्षेत्र में किसी भी चीज़ का अभाव महसूस नहीं हो रहा था। बस बिजली आने का इन्तजार था। खेतों से सारी फ़सल उठा ली गयी थी। सारे गांव में शराब की तेज गंध आ रही थी। शादियों का मौसम था। शादियां इतनी जल्दी-जल्दी हो रही थीं कि सब में शामिल हो पाना मुश्किल था।

इस पतझड़ में अगरा ने अपने मन की बात पूरी करने के लिए दृढ़तापूर्वक क़दम उठाने का निश्चय कर लिया था। आखिर कब तक अपने रास्ते से अमरा के हटने का इन्तज़ार करती? किसी से कोई आशा किये बग़ैर उसे ख़ुद ही काम शुरू कर देना चाहिए। अगर वह बैठी इन्तज़ार करती रही तो कुछ हाथ नहीं आने का!

काश, अगरा लड़का होती! तब उसे मालूम होता कि क्या करना चाहिए। वैसे अल्दीज़... चाहे वह उसका भाई है; पर वह भी कहीं कोई लड़का है? आज कल के लड़के मुर्दों के बराबर हैं। अपनी प्रियतमा के घर के इर्द-गिर्द मंडराते और आहें भरते रहते हैं। बेवक़ूफ़ कहीं के! लड़की को तो टंगड़ी मारकर गिरा देना चाहिए और संभलने का मौक़ा ही नहीं देना चाहिए, फिर जायेगी कहां। लड़की को तो साथ लेकर भाग जाना चाहिए, चाहे सारा गांव उन के पीछे गोलियां बरसाता दौड़े!

असली नौजवानों को यही तरीक़ा अपनाना चाहिए!

अगर अल्दीज ज़रूरत से ज़्यादा डरपोक है तो उसके लिए यह काम अगरा करेगी! यह बहादुरी और शराफ़त की बात भी होगी! बहन अपने भाई का प्रेम-विवाह करा देगी! बहन अपने भाई के लिए करेगी। भला और कौन कर सकता है? अल्दीज़ अति नरम दिल है। क़िस्मत बनाने का मौक़ा वह इतनी आसानी से दूसरों के लिए छोड़ रहा है। उसे ज़रूर कुछ हो गया है। पहले हमेशा उसके होंठों पर अमरा का नाम रहता था, पर अब जैसे वह उसके बारे में भूल ही गया है। आख़िर यह तो हो ही नहीं सकता कि वह अमरा को प्यार करना इतनी जल्दी छोड़

दे। या जब वह समझ गया कि अमरा का प्यार पाना इतना आसान नहीं तो उसके हाथ ही झुक गये। अगर बात ऐसी भी है तो अमरा उसके दिमाग़ में से इतनी जल्दी तो निकल नहीं सकती। या कहीं अमरा ने उसे इन्कार तो नहीं कर दिया? शायद अमरा ने उसे भी धोखा दे दिया, जैसे उसने उस दिन अगरा से कहा था कि उसका यानी अमरा का प्यार अभी जागा नहीं है, उसका प्यार अभी उसके दिल में सो रहा है, जैसे पालने में...

शायद अल्दीज ने इस बात पर विश्वास कर लिया और तब तक इन्तज़ार करने का फ़ैसला कर लिया जब तक कि उसका प्रेम जाग न जाये? पर क्या वह इतना बेवक़ूफ़ है? लड़के को तो इन्तज़ार करने के बजाय लड़की के और ज़्यादा पीछे पड़ जाना चाहिए जिससे उसका प्यार ख़ुद ही जाग उठे! या अल्दीज छोटा है और इस बात को नहीं समझता? अल्दीज को बता देना चाहिए कि अमरा जैसी लड़की को तो चूज़े की तरह गर्दन मरोड़कर अपनी जेब में रख लेना चाहिए। और फिर वह किसी और की न होकर उसी की हो जायेगी।

सारे लड़के अमरा पर लट्टू क्यों हो रहे हैं, समझ में नहीं आता? उन्होंने उसमें ऐसी क्या ख़ूबी देख ली है?

क्या दुनिया में सुन्दर लड़कियों की कमी है? हां, अगर कोई बहुत ज़्यादा सुन्दर लड़की होती तो और बात थी, लेकिन वह तो दूसरी लड़कियों जैसी ही थी। आख़िर उसमें ऐसा क्या है? और फिर घमंड के मारे नाक ऊंची किये चलती है जैसे गांव में उससे बढ़कर कोई है ही नहीं।

अगरा शीशे के सामने खड़ी उसमें अपना प्रतिबिम्ब देख रही थी। "क्या अमरा से ज़्यादा सुन्दर कोई लड़की नहीं है? क्या

मैं उससे ज़्यादा सुन्दर और सुडौल नहीं हूं? किसी ने मेरी तरफ़ ध्यान नहीं दिया, बस मेरे पास से गुज़र जाते हैं। तो इसका राज़ यह है! अगर एक लड़का किसी लड़की के पीछे भागने लगे तो फिर सब यही करेंगे। अमरा के साथ भी तो यही हुआ है। और अब वह सबको चूरचखेली की तरह धागे में पिरोये जा रही है।" हूँ... अमरा की जगह कोई और लड़की होती तो वह भी यही करती। और उसे, अगरा को, अभी सफलता नहीं मिली है, मौक़ा ही नहीं मिला है, नहीं तो वह इन सब बेवक़ूफ़ लड़कों को तड़पा कर रख देती... और अलोऊ को भी... उसे अमरा में ऐसी क्या ख़ूबी दिखाई देती? अगरा उसे बता चुकी है कि अमरा उसे प्यार नहीं करती, दूसरे से मिलती है, दूसरे को प्यार करती है। फिर भी वह उसी तरह अमरा के पीछे भटक रहा है। उसे आखिर उससे क्या चाहिए? वह अमरा के घर गया था। वह वहाँ किसलिए गया? काश, वहाँ हुई बातें मालूम हो जातीं? शायद अमरा के साथ उसका समझौता हो गया हो? लेकिन अमरा के पास तो दूसरा लड़का है...

यह अमरा कब तक अगरा के रास्ते का रोड़ा बनी रहेगी?

अगरा ने शीशे में अपने को देखा और गर्व से सिर ऊंचा कर लिया। उसे ख़ुद अपने आप पर रास आ रहा था...

"सुन्दर है, मेरी बहन, वास्तव में ख़ूबसूरत है," कमरे में आते हुए अल्दीज़ की आवाज़ सुनाई दी। वह कुछ लड़खड़ा रहा था। शायद अभी किसी शादी से लौटा था।

"क्या अमरा से भी ज़्यादा?" अगरा ने चुटकी ली।

"हाँ... तुम... तुम्हारी ख़ूबसूरती अपनी तरह की ही है।"

"पर मुझमें उस चीज की कुछ कमी है, जो अमरा में है..."

"तुम्हें उसकी ज़रूरत भी नहीं है..."

"तुम्हें तो मैं नशे में ही सुन्दर लग रही हूँ," अगरा ने नख़रे से कहा।

"मैं तुम्हें सेबसे ज़्यादा प्यार करता हूँ।"

"और अमरा को?"

"हाँ, अमरा को भी... बहन की तरह।"

"तुम सब अमरा पर लट्टू हो रहे हो। छुपाते क्यों हो?"

"हाँ, वह जिसके घर जायेगी, वह बड़ा भाग्यशाली होगा।"

"फिर मामला क्या है? हिम्मत कर डालो! तुम्हें कौन रोक रहा है?"

पर अल्दीज़ ने अगरा को कोई जवाब नहीं दिया। वह अपने बिस्तर में घोड़े बेचकर सो गया। नशे में नींद ने उसे जल्दी ही अपनी आग़ोश में ले लिया था।

"वह अमरा को पहले की तरह प्यार करता है। बस, अपने इरादे का पक्का नहीं है। इरादे का पक्का था ही कब। पर उसकी बहन तो है! और सिर्फ़ बहन ही उसकी मदद कर सकती है। यह तो सगे भाई भी नहीं करेंगे। मैं पत्नी ढूंढने में उसकी मदद करूंगी। अगर अमरा आसानी से नहीं मानेगी तो उसकी मर्जी के बिना करना पड़ेगा! मैं उसे कसकर बाँध दूंगी, फिर कहाँ जायेगी। मैं ख़ुद इस काम में पहल करूंगी। फिर देखेंगे, महामहिम अमरा, तुम क्या कर लोगी! और फिर तुम दूसरों का रास्ता नहीं रोक सकोगी!"

अगरा ने अपने निकट सम्बन्धियों को इकट्ठा करके उन्हें अपनी योजना बतायी। उसने यह प्रार्थना अल्दीज़ की तरफ़ से की, जैसे वह अमरा को भगा ले जाने में उनकी मदद चाहता हो। सारे रिश्तेदार अपने सम्मानित अल्दीज़ की इस काम में मदद करने के लिए बड़ी ख़ुशी से तैयार हो गये।

उसी दिन शाम को अगरा अमरा के पास उसके स्कूल में गयी। अमरा अपनी सहेली को देख कर उससे मिलने बाहर आयी। और हालांकि अगरा को दूसरी दिशा में जाना था, पर वह अमरा को गाँव की ताज़ा ख़बरें बताती हुई उसे छोड़ने चली। अमरा उसकी बकवास सुनती रही। अगरा ने अमरा को एक शब्द भी बोलने का मौक़ा नहीं दिया और ख़ुद लगातार बतियाती रही।

मैं कम-से-कम दूर से ही अपनी प्यारी अमरा को देखने की उम्मीद में गाँव में घूम रहा था और उसके दिखाई न देने पर

मेरा इरादा उसके घर जाने का था। मैंने अमरा के घर से कुछ दूर पटरी के किनारे एक कार खड़ी देखी। शाम के धुंधलके में मैं ने कार के पास पहुंच रही दोनों लड़कियों को पहचान लिया। अमरा को देखते ही मेरा दिल तेजी से धड़कने लगा और उससे मिलने के लिए मैं लम्बे-लम्बे डग भरने लगा।

लड़कियां मेरे मुकाबले कार के ज्यादा नजदीक थी और मैं ने देखा कि कार के दरवाजे खुले और उसमें से कुछ लोगों ने कूद कर अमरा को हाथों में उठाकर कार में पटक दिया। अगरा खुद भी कूद कर गाड़ी में बैठ गयी और गाड़ी मुझे वहां भौचक्का छोड़ तेजी से चल पड़ी। "किसे भगा कर ले गये, अमरा को या अगरा को?" मैं हैरान हुआ सोच रहा था, पर अचानक मैं समझ गया। मैं समझ गया कि उस काली गाड़ी में किसे भगा कर ले गये। मैं कार के पीछे भागा पर वह तेज रफ़्तार से पहाड़ी से नीचे उतर चुकी थी और मैं उसे पकड़ नहीं पाया। तब मैं चिल्लाने लगा। मैं पीछे मुड़ कर देखे बिना सारे आंगनों और दरवाज़ों में पूरी ताक़त के साथ चिल्लाने फिरने लगा। मैं बिना रुके चिल्लाता जा रहा था:

"अमरा को भगा ले गये! अमरा को भगा ले गये! अमरा को भगा ले गये!"

लोग भाग कर मेरे पास पहुंचने और पूछने लगे, पर मेरी समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था। मैं बस चिल्लाता ही चला गया:

"अमरा को भगा ले गये! अमरा को भगा ले गये!"
मैं लोगों के पास से तेजी से भाग कर गुजरता
और चिल्लाता जा रहा था,
"अमरा को भगा ले गये! अमरा
को भगा ले गये! अमरा
को भगा ले,
गये!"

सत्तरह

जब अमरा को उन लोगों ने जबरदस्ती कार में धकेला तो वह चिल्ला भी नहीं सकी थी। गाड़ी वहां से उसी वक़्त फर्राटे से दौड़ पड़ी थी और पिछली सीट पर बैठे आदमियों ने लड़की के कंधे मजबूती से पकड़ लिये थे। एक ने तो हाथ रखकर उसका मुंह भी बन्द भी कर लिया था। अब चिल्लाने का फ़ायदा ही क्या रह गया था। गाड़ी दौड़ी जा रही थी। गाड़ी के शीशे ऊपर को चढ़े थे। ड्राइवर के पास अगरा बैठी थी। वह इस तरह शान्त बैठी थी जैसे कुछ हुआ ही न हो। रास्ते में आते-जाते लोगों को सबसे पहले आराम से बैठे ड्राइवर और अगरा ही नजर आते थे। वे गाड़ी में पीछे की ओर के उन हट्टे-कट्टे लड़कों को नहीं देख पाते थे जो दोनों ओर से निस्सहाय लड़की को पकड़े बैठे थे।

अमरा का दिल छलनी हुआ जा रहा था। वह छूटने के लिए हाथ-पांव मार रही थी लेकिन मज़बूत शिकंजों से छूटना असंभव था। अगरा कभी-कभी मुड़कर तसल्ली दिलाते हुए कह रही थी,

"कुछ न सोचो, अमरा। इसमें डरने की ऐसी बात ही क्या है? हम लड़कियों की क़िस्मत ही ऐसी है, हमारे अबखाज़ियाई रीति-रिवाज ही ऐसे है। लड़की को भगा कर ले जाना तो इज्जत की बात होती है। तुम देखना, बहुत सी लड़कियां तुम से ईर्ष्या करेंगी। अगर मुझे भगाकर ले जाते तो क्या मैं खुश नहीं होती? बल्कि उन लड़कों का शुक्रिया अदा करती जो उस मर्द की मदद करते।"

"यह सब क्या है?" अमरा घबराती हुई सोच रही थी। अब क्या करना चाहिए? गाड़ी से उसे कूदने नहीं देंगे और उनसे मुक़ाबला करने की उसमें ताक़त नहीं थी। आखिर इन आदमियों को भेजा किसने है? वह कहां है? अमरा को दोनों ओर से पकड़ कर बैठे लड़के सिर पर बाश्लीक लपेटे थे। उनके चेहरे वह देख नहीं सकती थी। गाड़ी चलानेवाले ने एक बार भी मुड़कर नहीं देखा था। सिर्फ़ उसकी गुद्दी दिखाई दे रही थी। पर इस सारी

घटना में अगरा क्या भूमिका अदा कर रही थी? वह इस तरह चुपचाप क्यों बैठी थी, जैसे पहले से ही सब कुछ जानती हो? कहीं इसमें अगरा का भी तो हाथ नहीं? अगर ऐसा न होता तो वह बिलकुल दूसरी तरह ही पेश आती। इसका मतलब है, उसे भगा ले जानेवाले को अगरा अच्छी तरह जानती है। आख़िर वह है कौन?

गाड़ी किसी अहाते में घुसकर ठीक सीढ़ी के सामने रुकी। घर में से तीन और लड़के भागकर बाहर निकल आये और कार का दरवाज़ा खोल, अमरा को हाथों में उठाकर घर में ले गये। दो कमरों में से होते हुए वे तीसरे कमरे में उसे छोड़कर चले गये। भगायी लड़की दो अनजानी औरतों के साथ कमरे में रह गयी।

"यह घड़ी तेरे लिए शुभ हो, बेटी।"

"तेरा नया जीवन ख़ुशी-ख़ुशी शुरू हो और भविष्य में भी ख़ुशी-ख़ुशी बीते।"

दोनों औरतों ने नज़दीक आकर अमरा को चूमा। अमरा अब प्रतिरोध नहीं कर रही थी। वह अपना होश संभालने की कोशिश कर रही थी। वह जानती थी कि अब रोना-धोना, आँसू, सिसकियाँ, आहें और अनुरोध – सब बेकार होगा। यहाँ उसे चरित्र और दृढ़निश्चयता की ज़रूरत है। आँसू और सिसकियाँ केवल अपना अपमान करने के बराबर होंगे। अब सब कुछ इस पर निर्भर करेगा कि अमरा कैसे पेश आती है।

"इसका क्या मतलब है?" अमरा ने शान्ति और दृढ़तापूर्वक पूछा "मुझे कहाँ लाया गया है और आप लोग कौन हैं? आपने क्या मुझे गिरफ़्तार किया है?"

"बेटी, तुम ऐसी बात कैसे कह सकती हो?"

"तुम गिरफ़्तार नहीं की गयी हो, सिर्फ़ तुम्हारी शादी हुई है।"

अमरा की दृढ़ता धोखा दे गयी और वह चीख़ पड़ी। लेकिन औरतों का बोलना जारी रहा,

"निस्संदेह, शादी एक मुश्किल चीज है। आदत नहीं होती है। फ़ौरन सारी ज़िन्दगी ही बदल कर रह जाती है।"

"बेटी, मुश्किल तो होता है, लेकिन हम जवान लड़कियों की शादी होते पहली बार तो देख नहीं रहे हैं। सब एक ही ढंग से पेश आती हैं। शुरू में रोती-चिल्लाती है, बाद में सन्तुष्ट होकर सुखी हो जाती है।"

"पर ऐसी नीचता करने की हिम्मत किसकी हुई?"

"उसकी दिलेरी, तुम दोनों की ख़ुशक़िस्मती में बदल जाये।"

"मुझे दिखाइये तो कौन है वह डरपोक जो छुपा हुआ है, मुझसे आँख मिलाने की हिम्मत नहीं कर पा रहा"

"आ जायेगा, बेटी, आ जायेगा। आख़िर वह इसीलिए तो तुझे उड़ाकर लाया है कि तेरे पास आ सके। हमारे जाते ही वह आ जायेगा।"

"थोड़ी देर सब्र करो, बेटी। तुम तो जानती ही हो कि हमारे रीति-रिवाजों के अनुसार हमारे रहते वह यहाँ नहीं आ सकता और फिर इससे फ़ायदा भी क्या।"

"थोड़ी देर सब्र करो, बेटी, अभी उसका यहाँ आना अच्छा नहीं लगेगा।"

"वह फ़ौरन आये, नहीं तो मैं ख़ुद यहाँ से निकल भागूँगी।"

औरतें एक ओर को हट गयीं। लगता था, वे इस ज़िद्दी लड़की से बहस करते-करते ऊब चुकी थीं। अमरा ने लपककर दरवाज़े की कुंडी घुमाई। दरवाज़े में ताला लगा था।

"यह बड़े शर्म की बात है, शर्म आनी चाहिए!"

"बेटी, शर्म की बात तो तब होगी, जब तू यहाँ से घर लौट जाये। और यहाँ रहने में शर्म की बात ही क्या है? सभी लड़कियाँ सदियों से शादी करती आयी हैं।"

"मैं कभी नहीं मानूँगी, मैं हर हालत में भाग जाऊंगी।"

"प्यारी बेटी, सभी यही कहती हैं, पर उनकी बातें बस बातें ही रह जाती हैं और लड़कियाँ खुद वहीं रह जाती हैं, जहाँ उन्हें लाया जाता है।"

"मैं यहाँ कभी नहीं रुकूँगी।"

"गुस्सा होने की क्या जरूरत है? आखिर तू जहाँ जाना चाहती है, वहाँ अब किसी को तेरी जरूरत नहीं है।"

"अगर लड़की किसी मर्द के घर में रह ले तो वह और किसी काम की नहीं रह जाती, तुम तो जानती ही हो। अब सबको मालूम हो गया है कि तुझे पराये हाथ लग चुके हैं। अब अबखाज़िया का कोई भी लड़का तेरी ओर नहीं देख सकता, बेटी।"

"मुझमें शर्म और इज्ज़त है। मैं उस बात को नहीं मान सकती जिसे न मेरा दिल चाहता है, न मेरा शरीर।"

अमरा और दोनों औरतें एक ही कमरे में, एक ही वक्त साथ-साथ बैठी थीं लेकिन उनकी बातों में मानो शताब्दियों का अन्तर था। वे एक दूसरे से दूर, समय के दो भिन्न-भिन्न शिखरों पर खड़ी थीं और उनके बीच अपार चौड़ी, अंधेरी खाई थी।

इस बीच जोश से भरी अगरा भागती घर पहुंची और अलदीज को उसने ऐसे जगाया मानो उसके लिए कोई खुशखबरी लायी हो।

"उठो अल्दीज़, उसे ले आये हैं।"

"किसे ले आये, कहाँ ले आये?"

"अमरा को।"

"कहाँ से ले आये, कहाँ ले आये, किसलिए ले आये?"

"अब वह हमारे हाथों में है। तुम्हारे हाथों में। अमरा आज से तुम्हारी पत्नी हो गयी।"

"तुम क्या कह रही हो, अगरा, यह मज़ाक़ बन्द करो।"

"हम तुम्हारे लिए पत्नी ले आये हैं। अब तो उठो! क्या अब भी तुम्हारी समझ में नहीं आया?"

अल्दीज़ सब कुछ समझ गया और जल्दी-जल्दी कपड़े पहनने लगा। अगरा उसे पता बता कर घर से तेज़ी से निकल गयी।

अमरा पर निगरानी रखनेवाली औरतें अब न उसे बधाई दे रही थीं और न ही उस की चापलूसी कर रही थीं। तीनों एक-दूसरे पर गुस्सा हो रही थीं और जली-कटी बातें कर रही थीं। इस बीच दरवाजा भड़ाक से पूरा खुला और देहरी पर अल्दीज दरवाजा बन्द कर दिया।

"लो, वह आ गया! तुमने तो हमें मार ही डाला।"

"अब इन्हें आपस में बातें करने दो," औरतों ने बाहर निकलकर दरवाजा बन्द कर दिया।

"इसका क्या मतलब है?" अभी दरवाजा बन्द ही हुआ था कि अमरा चिल्लाई। "यह नीचता है! झूठा, कपटी, डरपोक कहीं का!"

अल्दीज फ़ौरन अमरा के सामने घुटनों के बल बैठ गया।

"अमरा, मुझे माफ़ करो, कुछ गलतफ़हमी हो गयी है।"

"मैं तुम्हें अपना भाई मानती थी और तुम..."

"मैंने भाई-बहन का रिश्ता नहीं तोड़ा, अमरा। जरूर कोई भारी बेवकूफ़ी भरी गलतफ़हमी हो गयी है।"

"फिर किसने यह रिश्ता तोड़ा?"

"मुझे कुछ मालूम नहीं।"

"मुझे यहाँ कौन लाया है? किसके कहने से?"

"मैं नहीं जानता।"

"पता नहीं क्यों, मुझे तुम पर विश्वास है। अच्छा, चलो पता लगायें।"

"हाँ, मुझ पर भरोसा रखो। डरो नहीं। मैं यहीं हूँ और तुम्हारा कुछ नहीं बिगड़ेगा। मुझ पर सगे भाई की तरह भरोसा रखो।"

"पर यह सब हुआ कैसे?"

"मैं खुद भी जानना चाहता हूँ।"

अमरा ने अपने साथ हुई सारी बातें अल्दीज को विस्तार में बता दीं।

"बहुत बुरा हुआ! पता नहीं यह सब किसने किया, पर इसमें मेरी कोई गलती नहीं है।"

"तुम फ़ौरन मुझे मेरे घर ले चलो।"

अल्दीज़ ने बालकनी में निकलकर आँगन में नजर दौड़ाई पर वहाँ कोई न था। सब जैसे मर गये थे या ईमानदारी से नवविवाहितों को एक-दूसरे के पास अकेला छोड़ कर भाग गये थे।

उस समय हरज़ामान आँगन में चक्कर लगाता कोसता जा रहा था। उसका गला बैठ गया था।

"मार डाला, जान से मार डाला, बरबाद कर दिया! अमरा! मेरी इकलौती अमरा!"

अलीआस उस दिन घर में नहीं था। वह अपनी मशीन के काम से सुख़ूमी गया हुआ था और अभी तक वापस नहीं लौटा था। हरज़ामान को सबसे ज़्यादा ग़ुस्सा अलीआस पर ही आ रहा था:

"अपनी मशीन में ही उलझा रहता है। कभी सुख़ूमी जाता है, कभी त्बिलिसी और परिवार को छोड़ जाता है। और अब यह हो गया! पहले मेरी ज़मीन उजाड़ दी गयी और अब अमरा... उसे ऐसे उठा ले गये जैसे वह अनाथ हो और उसे बचानेवाला कोई नहीं हो। बड़ी शर्म और बेइज़्ज़ती की बात है! बेचारी शायद चिल्लाई भी होगी, पर कौन सुनता, कौन उसकी मदद करता? और अब तो सब ख़त्म हो चुका। क्या मैं, बुड्ढा उस को उड़ा कर ले जानेवालों से छीनकर लाऊंगा? और अगर उसे ले भी आऊँ तो फ़ायदा क्या होगा? शायद वे उसे ख़ुद ही ले आयें, पर ग़ैर मर्दों के हाथ लगने के बाद वह किसके काम की रह जायेगी? इस मुसीबत से पहले मुझे मौत क्यों नहीं आ गयी? क्यों मुझ बुड्ढे की क़िस्मत में अपनी इज़्ज़त बिगड़ते देखना लिखा था?"

अल्दीज़ अमरा का हाथ पकड़े उसे सीढ़ियों से नीचे उतार लाया। घर और आँगन में अचानक जान आ गयी। मालूम नहीं कहाँ से वे दो औरतें, वे लड़के जो अमरा को उड़ाकर लाये थे और घर का मालिक निकल आये। उन लोगों ने नवविवाहितों को चारों ओर से घेर लिया, शायद वे हैरान हो रहे थे कि कमरे

में फ़ैसला इतनी जल्दी हो गया। पर घर का मालिक अल्दीज़ का व्यवहार देखकर सबसे पहले असलियत समझकर फ़ौरन रास्ता रोककर खड़ा हो गया.

"तुम क्या करना चाहते हो, अल्दीज़?"

"कुछ नहीं, हम घर जा रहे हैं।"

"कहाँ?"

"क्या ऐसा हो सकता है?" सब एक साथ बोल उठे।

"तुम क्या सब लोगों के सामने मुझे भोथरे छुरे से चीर डालना चाहते हो? अगर तुमने मेरी देहरी के बाहर क़दम रखा तो तुम मेरे घर और मेरे ख़ानदान की इज़्ज़त हमेशा-हमेशा के लिए मिट्टी में मिला दोगे। सब यही सोचेंगे कि मैंने तुम्हारा ठीक से स्वागत नहीं किया। मैं लोगों से आँखें कैसे मिला सकूँगा?"

"शुक्रिया, बहुत बहुत शुक्रिया। इस सबके लिए हम तुम्हारे शुक्रगुज़ार हैं, पर अब हम घर जा रहे हैं।"

"नहीं, तुम ऐसी हिमाक़त नहीं कर सकते।"

"चलो, अल्दीज़," अमरा ने अल्दीज़ का हाथ खींचा।

"पर हमसे क्या ग़लती हो गयी, आख़िर क्यों?"

अल्दीज़ ने आग-बबूला होते अपने रिश्तेदारों के बीच से अमरा को निकालकर वहीं सड़क पर अहाते के फाटक के सामने खड़ी कार में बिठा दिया।

हरज़ामान के घर के पास पहुंचने पर गाड़ी की बत्तियों की रोशनी सारे आँगन, जिसे आँगन का बाक़ी बचा हिस्सा कहना चाहिए और बालकनी पर खड़े सारे लोगों पर पड़ी। हालाँकि बत्तियों की तेज़ रोशनी में यह देख पाना मुश्किल था कि गाड़ी में कौन बैठा है और कोई यह सोच भी कैसे सकता था कि अमरा को ले आये होंगे। अमरा गाड़ी से निकलकर भागती हुई सीढ़ियाँ चढ़कर घर में पहुंच गयी।

"मैं आ गयी, माँ!"

सब पत्थर-से खड़े रह गये, हरज़ामान भी। माँ से लिपटकर अमरा हरज़ामान की तरफ़ लपकी।

"दादा, मैं हूँ। मेरे साथ कुछ नहीं हुआ है।"

इस बीच अल्दीज़ भी बालकनी में पहुंच गया। सबकी नज़रें उसपर टिक गयीं, वे समझ नहीं पा रहे थे कि क्या सोचें। हो सकता है वह अपनी गाड़ी में भगानेवालों का पीछा करके अमरा को उनसे छुड़ा लाया हो? या? ... पर ऐसा करने के लिए उसे किसने कहा? जब लड़की को भगाया जाता है तो उसको छुड़ाने के लिए नज़दीकी रिश्तेदार—बाप, भाई आदि ही पीछे भागते हैं। पराये आदमी, परिवार के मामलों में दखलन्दाज़ी नहीं करते। पता नहीं, क्या हो जाये क्योंकि हो सकता है, लड़की को मां-बाप की गुपचुप रज़ामंदी से उड़ा लिया गया हो और दखलन्दाज़ी करनेवाला सारा खेल बिगाड़ डाले।

देस ने सबसे पहले अपने पर क़ाबू पाया। वह बेटी को खींचकर दूर कमरे में ले गयी और उससे सारी बात सच-सच बताने को कहा। अमरा ने बिना कुछ छुपाये उसे सब कुछ बता दिया।

"हे भगवान! तूने यह क्या कर डाला?" देस ने फ़ौरन अपनी बेटी को फटकारना शुरू कर दिया। "तू जानती है, अपने बाप के घर वापस आ कर तूने क्या कर डाला? तेरी हिम्मत कैसे हुई, तू वापस कैसे आयी? तू जानती है, इसका क्या मतलब होता है? फिर तुझे अल्दीज़ खुद अपनी गाड़ी में लेकर आया है। क्या तेरे बिलकुल भी दिमाग़ नहीं है? अब सब यही कहेंगे कि अमरा बदनाम लड़की है और अल्दीज़ ने, जो उससे शादी करना चाहता था, निकम्मी लड़की को उसके मां-बाप को लौटा दिया। तू तो जानती ही है कि सदियों से अबखाज़ियाई परिवार के लिए सबसे बुरी बात किसी मर्द के हाथों से लड़की का लौट आना है। लोगों के मुंह कैसे बन्द करेगी? बेवक़ूफ़ तू अल्दीज़ के साथ क्यों नहीं रह गयी? या तुझे अल्दीज़ से ज़्यादा अच्छा दूल्हा मिलने की उम्मीद है? तेरी क़िस्मत बन रही थी, पर तूने उसे संभालकर रखने के बजाय हम सबकी ऐसी बेइज़्ज़ती करा दी जो किसी ने अभी तक सुनी भी न होगी। अभी फ़ौरन अल्दीज़ के पास जा और जहां जी चाहे उसके साथ दफ़ा हो जा।"

झल्लाहट में देस ने अमरा को ज़ोर से नोच लिया। अमरा कमरे से बाहर भागी।

"नहीं, नहीं, मैं नहीं चाहती। सबको मालूम होना चाहिए: अल्दीज़ ने मुझे बचाया है। वह मेरा रक्षक है। मेरा कोई सगा भाई नहीं था, अब हो गया है। देखिये, अल्दीज़ मेरा सगा भाई है! उसने भाई-बहन का रिश्ता और भाई का फ़र्ज़ ईमानदारी से निभाया है।"

हरज़ामान ने सारी बातें ध्यान से सुनीं और अमरा की घबरायी और लड़खड़ाती आवाज़ सुनने के बाद वह अल्दीज़ की ओर देखते हुए बोला,

"तुझे दो ज़िन्दगी मिलें, अल्दीज़! तुम तब तक जियो जब तक अबखाज़ियों की इज़्ज़त ज़िन्दा रहे!" वृद्ध ने अल्दीज़ के पास पहुंचकर उसे चूम लिया।

अल्दीज़ ने फ़ौरन एक घुटना टेककर हरज़ामान के अर्खालूक का किनारा चूम लिया।

"इसी वक़्त से तुम अमरा के भाई हुए। अगर उसकी यही इच्छा है और ऐसा हो भी गया तो मैं क्यों उसके खिलाफ़ होऊं? तुम दोनों भाई-बहन के रिश्ते के क़ाबिल बनो। मेरे पास इससे ज़्यादा कोई और क़ीमती चीज़ नहीं है, अल्दीज़, जो मैं तुम्हें भेंट करूं। पर मुझे खुद को बहुत बड़ा तोहफ़ा मिल गया। मेरे परिवार में एक भला आदमी शामिल हो गया। इसी वक़्त से यह सारा घर, आंगन और हमारे पास जो भी है जैसा हमारा है, वैसा ही तुम्हारा है। हर चीज़ में तुम्हारा बराबर का हिस्सा होगा। इससे तुम्हें खुशकिस्मती मिले।"

"तुम्हारी सारी बलायें हमारे सिर आयें," देस ने भी कहा।

अल्दीज़ ने शान्त स्वर में कहा,

"मैं हमेशा आपके क़ाबिल बना रहूं।"

लगता था इसके साथ ही अमरा के भगाये जाने का किस्सा खत्म हो गया, पर फिर भी उसकी छाया हम सब पर पड़ी। फिर उसे खत्म हुआ समझा भी कैसे जा सकता है जब गांव बड़ा हो,

उसमें बहुत से लोग रहते हों, जब हर एक के कान हों और सब से बड़ी बात – जब हर एक के पास ज़बान हो।

हर आदमी को तो जाकर समझाया नहीं जा सकता कि वास्तव में क्या बात हुई थी। और अगर समझाया भी जाता तो विश्वास कौन करता? वे विश्वास करें भी क्यों? हर एक के कंधों पर सिर इसीलिए तो है कि वह अपने ढंग से सोचे।

देस अमरा की छीछालेदर करती रही,

"बेवक़ूफ़, वहीं जमकर बैठी रहती। अल्दीज़ तुझे निकाल तो देता नहीं। अब तक सब ठीक हो गया होता। तो अल्दीज़ के पीछे ऐसे पड़ गयी, जैसे रक्षक हो। उसने कुछ नहीं खोया। उसने तो कुलीनता दिखाई और हमारे ख़ानदान में शामिल हो गया। पर क्या तेरी अक़्ल जाती रही थी? अब तेरी इज़्ज़त बचाने में देर हो चुकी है। एक बार किसी मर्द के घर रह ली, तो इसका मतलब है, तेरी इज़्ज़त गयी।"

जो हो चुका था, देस उसके बारे में इसी तरह सोचती थी। हर आदमी अपने-अपने ढंग से सोच रहा था। हरजामान भी शान्त-सा हो गया था, लेकिन दिल में टीस-सी बाक़ी रह गयी थी। पता नहीं, आगे अमरा की क़िस्मत क्या रंग दिखाये। सब ख़त्म हो चुका था, पर दाग़ तो रह ही गया। अगर सारी ज़िन्दगी उसे इसके लिए ताने दिये जाते रहे तो कुछ भी हो, उस बेचारी पर तरस आता है।

जो हुआ उसके बारे में क्या अलगेरी को मालूम है? जैसा लगता है, उसे कुछ मालूम नहीं है, नहीं तो वह बहुत पहले दौड़ा आता। वैसे शायद उसने सुन लिया होगा, पर उसने कुछ किया नहीं। शायद उसे मालूम न हो। और मालूम होने पर जाने क्या सोचेगा? लड़की को ज़बरदस्ती घसीटकर गाड़ी में न जाने कहाँ ले गये, पता नहीं उसके साथ क्या किया और फिर लाकर माँ-बाप के माथे पर पटक गये। भला अलगेरी किसी की जूठन से संतुष्ट हो सकता है। वैसे इस वक़्त वह कहीं पहाड़ों में होगा, पर क्या ख़बर उड़कर ऊंचे पहाड़ों तक नहीं पहुंची होगी? अबख़ाज़िया

में सारी ख़बरें आवाज़ की रफ़्तार से चारों ओर फैल जाती हैं।

अमरा भगाये जाने के कारण स्कूल नहीं गयी थी। छुट्टी हो जाये तो छात्र-छात्राओं को अकसर ख़ुशी होती है। पर आख़िर उन्हें भी तो मालूम था, उनकी अध्यापिका कहाँ रही थी। शायद वे भी, जो हुआ, उसके बारे में बातें कर रहे होंगे और वैसे ही सोच रहे होंगे जैसा उनके माँ-बाप ने उन्हें सिखाया और जैसा आसपास के सब लोग, जैसा अबख़ाज़ियाई लोग, क्या छोटा और क्या बड़ा, सोचते हैं। पर गाँव के लोग क्या कहते हैं?

शाम हो आयी थी जब सुख़ूमी से घर लौटे अलीआस पर यह तूफ़ानी ख़बर गाज-सी पड़ी। गाँव में वह ज्यों ही घुसा, औरतों ने उसे घेर लिया।

"भगवान की दया से, सब कुछ ठीक हो गया, अलीआस।"

"शाबाश, अमरा! अपने ख़ानदान का नाम नहीं डुबाया।"

"हां, बेचारी, किसी तरह बच गयी, अब भले ही कुछ भी कहो।"

"सबसे अच्छी बात तो यह हुई कि अपने घर लौट आयी।"

"सबसे बड़ी बात ज़िन्दा लौट आने की है। अगर आत्महत्या कर लेती तो वंश हमेशा के लिए ख़त्म हो जाता।"

"अमरा चरित्रवान मालूम पड़ती है।"

"और समझदार भी। घर ही वापस नहीं लौटी, भगाकर ले जानेवाले को भाई भी बना लिया।"

"हर कोई इस तरह अपनी ग़लतियों पर पर्दा डालना नहीं जानता।"

अलीआस सारी बकवास सुनता रहा। उसे कुछ पूछने का भी मौक़ा ही नहीं मिल पा रहा था। घर आया तो देस बरस पड़ी,

"मैंने तुमसे क्या कहा था? तुम मेरी बात सुनना ही नहीं चाहते थे। जानते हो तुम्हारी बेटी ने क्या गुल खिलाये हैं? उसके मुंह पर तो सब उसके घर लौट आने की बड़ाई करते है, पर किसे ज़रूरत पड़ी है ऐसे घर लौटने की?"

"तो क्या अच्छा यह होता कि वह वहीं रह जाती, जहां रहना नहीं चाहती थी?"

"लड़की हमेशा वहां रह जाती है जहां उसकी इज्जत की जाती। क्या दुनिया में यह तुम्हारा पहला दिन है?"

अलीजान अमरा को दोषी ठहराना नहीं चाहता था। इसके विपरीत, वह उसकी हिम्मत और दृढ़ता की तारीफ़ करता रहा।

दूसरे दिन अमरा स्कूल गयी। वह घर से जल्दी से जल्दी रवाना हो गयी जिससे रास्ते में किसी से मुलाक़ात न हो। वह अध्यापकों के कमरे में घंटी बजने का इन्तजार करती, किताब में आंखें गड़ाये एक ओर बैठी थी। जब दूसरे अध्यापक उसका अभिवादन करते, वह आंखें उठाये बिना जवाब दे देती। उससे किसी ने बात नहीं छेड़ी और न ही पूछताछ की, सब जैसे अपने-अपने काम में लगे हुए थे। अध्यापक लोग बिना अमरा की ओर ध्यान दिये आपस में बातचीत कर रहे थे। पर अमरा को साथियों की हर बात नापी-तौली लग रही थी। शायद वे इस कोशिश में थे कि उनके मुंह से कोई ऐसा शब्द न निकल जाये जिससे अमरा को चोट पहुंचे, उसका अपमान हो। और यही तो अमरा को सबसे ज्यादा बुरा लग रहा था।

घंटी बजी। अमरा सबसे पहले उठकर दृढ़निश्चयता के साथ अध्यापकों के कमरे से बाहर निकली। उसने हमेशा की तरह कक्षा में हाजिरी ली। हाजिरी के बाद ऐसी चुप्पी छा गयी मानो बच्चे सांस भी नहीं ले रहे थे। बच्चे अमरा पर नजरें जमाये उसके पहला शब्द बोलने की प्रतीक्षा कर रहे थे। बच्चों की दसियों आंखें अपनी अध्यापिका को घूर रही थीं और अमरा को लगा, ऐसा कोई शब्द नहीं जिसे बोलकर वह वातावरण के तनाव को तुरन्त कम कर सके। यह तनावपूर्ण चुप्पी जितनी ज्यादा बढ़ती गयी, अमरा की घबराहट भी उतनी ही बढ़ती गयी। लेकिन इस के साथ ही, वह यह भी जानती थी कि अगर इस समय कक्षा को ढील दे दी गयी इससे भी कुछ न कुछ बुरा ही होगा। उसने बदली-सी आवाज में पूछा,

"बच्चो, किसे याद है, साहित्य में आज का पाठ क्या था?"

बच्चे चुप रहे। मानो अपनी अध्यापिका अमरा के प्रति घृणा दिखाने के लिए वे जानबूझ कर चुप हों।

"अच्छा तो कौन बतायेगा कि आज साहित्य में क्या काम दिया गया था। क्या किसी को मालूम नहीं? आज किसने पाठ याद किया है? बताओ?"

"औरत की इज्जत," पिछली बेंच पर बैठी एक लड़की खड़ी होकर बोली। उसके चेहरे से ढीठ चुनौती झलक रही थी। उसकी मुखमुद्रा बता रही थी: "ठीक है, अगर आप यही चाहती हैं, तो मैं बता देती हूं!"

सारी कक्षा उस लड़की की तरफ़ मुड़कर देखने लगी।

"मैंने पाठ याद किया है। आज के लिए हमें 'औरत की इज्जत' उपन्यास में से सईदा के अपहरण का परिच्छेद सुनाने के लिए दिया गया था।"

सारी कक्षा में शोर मच गया। बच्चे एक-दूसरे को कोहनी मारने लगे। अमरा सन्न रह गयी। वह ऐसे संयोग को कैसे भूल गयी। वह ज़ोर देकर कह रही थी कि बच्चे जवाब दें, पर वे शायद इसी लिए चुप बैठे थे क्योंकि वे अध्यापिका से पहले समझ गये थे कि आज यही पाठ सुनाना उचित नहीं होगा। अब एक लड़की सबकी ओर से जवाब दे रही है। लगता है, उसे अच्छा नहीं लग रहा है। उसकी कोई गलती नहीं है। अमरा ने खुद ही सब बच्चों और इस लड़की को कठिन परिस्थिति में डाल दिया था।

लड़की ने विस्तार से सुनाया कि किन परिस्थितियों में सईदा का अपहरण किया गया, उसे कहां ले जाया गया और उसके बाद क्या हुआ। वह उपन्यास का एक अंश सुना रही थी, पर बच्चे जो सुन रहे थे, उसका सम्बन्ध अपनी अध्यापिका के साथ घटी कल की घटना के साथ जोड़ रहे थे।

अमरा के चेहरे का रंग उड़ गया, लड़की की कोई बात उसे सुनाई नहीं दी। वह अपने बारे में और कल की घटना के बारे में बिलकुल वैसे ही सोच रही थी, जैसे बच्चे सईदा के बारे में न

सोचकर अमरा के बारे में सोच रहे थे। लड़की को किसी ने नहीं टोका, किसी ने उस से कुछ नहीं पूछा, सब व्यंग्यपूर्ण मुस्कराहट के साथ इन्तज़ार कर रहे थे कि उनकी अध्यापिका के साथ घटी घटना का अन्त कैसा होता है। उपन्यास की नायिका सईदा नहीं बल्कि उन की अध्यापिका ही थी।

लड़की जो कहानी सुना रही थी, उससे और कल की घटना से अमरा का दिल सुलग रहा था। वह उस अफ़वाह के बारे में सोच रही थी जो पलक झपकते चारों ओर, दूर-दूर तक फैलती जा रही थी। अब यह घटना बच्चों के लिए केवल एक पाठ या पुस्तक में छपी कहानी नहीं रही थी बल्कि एक रोमाँचकारी घटना हो गयी थी। अमरा की आँख उठाने की हिम्मत नहीं हो रही थी, वह बच्चों की तरफ़ नहीं देख पा रही थी, पर उसे महसूस हो रहा था कि सारे बच्चे उसकी ओर देख रहे हैं। अभी लड़की अपनी कहानी सुनाना ख़त्म भी नहीं कर पायी थी कि घंटी बज गयी। अमरा ने जल्दी से कहा,

"ठीक है, बैठ जाओ।"

लड़की अपनी जगह बैठ गयी पर, "ठीक है" का मतलब नहीं समझ पायी। दूसरे बच्चे भी नहीं समझ पाये कि उनकी अध्यापिका क्या कहना चाहती थी। "ठीक है" का क्या मतलब है? क्या लड़की ने कहानी ठीक ढंग से सुनायी या कहानी ही ठीक थी? या अमरा ने "ठीक है" असंतोष और गुस्से से कहा था? उसने कहा ठीक है, तो अपनी जगह बैठ जाओ, फिर देखा जायेगा। और हो सकता है, "ठीक है" वह नम्बर है, जो डायरी में लिखा जायेगा। अब बैठकर सोचो कि इस "ठीक है" का क्या अर्थ है। क्योंकि अध्यापिका तो इस के अलावा कुछ और कहे बिना कक्षा से निकल गयी थी।

कमरे से अध्यापिका के बाहर जाते समय बच्चे चुप रहे। पर उसके बाहर निकलते ही, पीछे से सबके एक साथ हंसने का शोर गलियारे में सुनाई पड़ा।

उस दिन अमरा ने बाक़ी के सब पाठ उदासी और बिना किसी उत्साह के पूरे किये। कक्षा में बच्चे खिन्न हुए चुप बैठे रहे और

अध्यापकों के कमरे में अध्यापक। इन लोगों की चुप्पी का क्या अर्थ है? शायद वे युक्तिपूर्ण ढंग से इसलिए चुप हैं कि कहीं अपनी बातों से अमरा के घाव न कुरेद दें? और हो सकता है, वे इसलिए चुप हैं कि वे अमरा की निन्दा कर रहे हैं, उससे घृणा कर रहे हैं और उसके साथ कोई सम्बन्ध नहीं रखना चाहते? ये दोनों ही बातें बुरी हैं।

जब आखिरी पाठ ख़त्म हुआ तो अमरा आध्यापकों के कमरे में गये बग़ैर जल्दी से घर चल दी। वह यही चाह रही थी कि उसे रास्ते में कोई न मिले जिससे उसे आँखें झुकानी या छुपानी न पड़ें, या फिर जो सबसे बुरा होता किसी के सवालों का जवाब न देना पड़े। उसको जल्दी से जल्दी घर पहुंच कर कमरा बन्द करके अकेले में सब बातों पर अच्छी तरह सोच-विचार करने की इच्छा हो रही थी। पर घर पास नहीं था। जब मूड अच्छा हो, जब इच्छा होती है कि लोग मिलें, उनसे "दुआ-सलाम" हो या बातचीत हो, उनका मुस्कराकर अभिवादन करे तो रास्ता चलता एक आदमी भी नहीं मिलता। अब तो वे जानबूझकर रास्ते में हर क़दम पर मिलेंगे।

अमरा बिना इधर-उधर देखे चली जा रही थी। वह केवल अपने पैरों की ओर देख रही थी मानो ठोकर लगने का डर हो। कितनी अच्छी बात हो, अगर शाम हो जाये और अमरा के चलते-चलते रास्ते में ही अंधेरा छा जाये। तब वह किसी की नज़र में पड़े बिना चुपचाप अपने फाटक तक पहुंच जाये। अमरा को किसी के मिलने का पूर्वाभास हो रहा था। अभी उसके रास्ते में ग़ैर, अनजाना आदमी दिखाई देनेवाला है। लग रहा था जैसे वह अमरा के रास्ते में उसी तरह हिलडुल रहा था जैसे जंगल में आँख के आगे नुकीली टहनी हिलती-डुलती है। कोई बात नहीं, अगर किसी से मुलाक़ात होनी ही है तो फिर जल्दी से जल्दी क्यों न हो जाये। मिलनेवाला भले ही कोई भी क्यों न हो, अमरा निडरता से उससे आँख मिलायेगी और तटस्थ भाव से नमस्ते करके गर्व से उसके पास से निकल जायेगी। अगर मिलनेवाले ने कुछ पूछा तो वह

उसका सवाल न सुनने का बहाना करेगी। अगर मिलनेवाला भला आदमी हुआ तो वह वैसे ही उसके पास से चुपचाप गुज़र जायेगा जैसे कुछ हुआ ही न हो। अगर उसने कोई सवाल किया, तो क्या हुआ, अमरा भी जवाब देना जानती है, अगर उसने कोई चुभनेवाली बात कही तो वह भी चुभता हुआ जवाब देना जानती है। बस दिल नहीं चाहता कि किसी से वास्ता पड़े और अनजाने लोग उस के दिल को कुरेदें।

रास्ते का खेतोंवाला खाली हिस्सा खत्म हो चुका था। अमरा एक गली में घुसी जिस के दायें-बायें मकान थे। वैसे रास्ते के किनारे-किनारे तो केवल बाड़ हैं, पर भला सड़क से घर की ओर बीस क़दम चल कर बाड़ पर कोहनियाँ टिकाकर सड़क की ओर देखना क्या मुश्किल है। अमरा को यह गली तंग पिंजरे-सी लग रही थी जिस में उसे जानबूझकर धकेल दिया गया हो। वह अगल-बग़ल नहीं देख रही थी, न उसे घर दिखाई दे रहे थे, न बाड़ ही। लेकिन फिर भी बाड़ों के पीछे से घर उसे दोनों तरफ़ से भींच रहे थे। उसे लगा कि सब लोग अपने-अपने घरों से निकल आये हैं और वह अब जैसे दसियों टटोलती, चिपकती, निगलती और बुरा चाहनेवाली आँखों की क़तार के सामने से गुज़र रही है।

और सचमुच लोग अपने-अपने घरों से निकलने लगे। पहले वे अपनी-अपनी देहरी पर खड़े देखते रहे, फिर फाटकों के पास आ गये। लगता था, एक घर से दूसरे घर में बेतार के तार से खबर पहुंच रही थी कि अमरा आ रही क्योंकि जैसे-जैसे वह आगे बढ़ती गयी निठल्ले लोगों की संख्या भी बढ़ती गयी। सब देख रहे थे कि अमरा अकेली बिना किसी रक्षक के आ रही है, उसे चोट पहुंचायी जा सकती है, फिर क्यों न देखा जाये। और अगर मौक़ा मिल जाये तो क्यों न देखा जाये, वह कैसे साँस ले रही है, उस के दिल की हालत कैसी है। अभी तक उसे किसी ने नहीं छेड़ा था और न ही कोई कुछ बोला था। हालाँकि ऐसी हिमाक़त आसान न थी। सब जानते हैं, अमरा चुप रहनेवाली नहीं। अगर किसी ने छेड़ा, तो वह ऐसा जवाब देगी कि छेड़नेवाला पछताता

रह जायेगा। उसका कुछ बिगड़नेवाला नहीं। मिसाल के तौर पर, वह कह सकती है, किसी के मामले में अपनी नाक घुसेड़ने की ज़रूरत नहीं। उसका कोई क्या कर लेगा? कुछ नहीं।

उसे जल्दी से जल्दी घर पहुंच जाना चाहिए। लगता है, रास्ता पांच गुना लम्बा हो गया है। किसी तरह खत्म ही नहीं हो रहा है। इस गली को पार करते ही उस पहाड़ी के पास पहुंच जायेगी और उसके पास ही उसका घर है।

आँगन में जमा हो कर, बाड़ पर कोहनियाँ टिकाकर अपमानित अध्यापिका को देखने से औरतों को रोकने के लिए कोई क़ानून नहीं। भला ऐसा हो सकता है कि वह उनके पास से गुज़र जाये और वे उस पर ताने बिलकुल भी न कसें। अभी सिर के ऊपर से या पीठ पीछे से किसी की प्यार भरी पर छुपे हुए तानेवाली आवाज़ सुनाई देनेवाली है। ऐसा ही हुआ।

"नमस्ते, अमरा," एक जवान लड़की ने उसका अभिवादन किया।

अमरा चौंक उठी और उसने इतने धीरे से जवाब दिया कि वह लड़की सुन नहीं पायी।

"नमस्ते, अमरा, तुम क्या बहरी हो गयी हो? मैं तुम्ही से कह रही हूँ। अपने आपको बहुत ज्यादा समझने लगी हो, किसी मामूली लड़की से बात करने में अपनी हेठी समझती हो।"

"माफ़ करना। मैं ने जवाब धीरे से दिया था।"

बस शुरुआत हो गयी।

"अमरा आओ, हमारे यहाँ बैठो।"

"शुक्रिया।"

"अमरा कहाँ से आ रही हो?"

"काम से।"

"अमरा, कितने बजे हैं?"

"मेरे पास घड़ी नहीं है।"

"अमरा, तुम्हें क्या कोई दिखाई नहीं देता, तुम्हें क्या हो गया है?"

"मैंने सिर्फ़ तुम्हें ही नहीं देखा। दूसरों को देख रही हूँ।"

"अमरा तुम्हारा मूड बिगड़ा हुआ लगता है?"

"तुम्हारी आँखें कमज़ोर हैं।"

"अमरा, आज कौन-सा दिन है?"

"पिछला सोमवार।"

"अमरा, तुम्हें कहाँ की इतनी जल्दी हो रही है?"

"तुम्हारे मृत्युभोज में पहुंचना है।"

किसी तरह गली ख़त्म हुई। अब चैन की साँस ली जा सकती है। जिसका सबसे ज़्यादा डर था, वह हो चुका। पर अमरा ने आज अपने गाँववालों, अपने छात्रों की माँओं और बहनों को इतने तीखे जवाब क्यों दिये। उसे क्या हुआ, वह पहले जैसी बिलकुल भी नहीं दिख रही।

अब घर पास आ गया है। आसपास कोई भी नहीं। अमरा को पीछे से आती आवाज़ें सुनाई देती महसूस हो रही थीं।

"बड़ी आयी अमरा।"

"अपने आप को ज़्यादा समझने लग गयी है।"

"दिमाग़ चढ़ गये हैं।"

"जैसे फ़रिश्ता हो।"

"ज़रा अपने को तो देखे।"

अमरा अस्त-व्यस्त हुई घर पहुंची और चुपचाप
अपने कमरे में खिसक कर दरवाजा बन्द करके
रोने लगी।

"क्यों, आखिर क्यों, किस लिये?"
वह रोते हुए बार-बार
कहे जा रही
थी।

अठारह

नोवालूनिये में बस अमरा के अपहरण की ही चर्चा चलती रहती। कुछ लोग दूसरों को सुनाते थे, कुछ केवल सुनते थे पर कुछ अपनी तरफ़ से भी जोड़ लेते थे।

इस घटना से सबसे गहरा धक्का दोनों लड़कियों के परिवारों को पहुंचा।

अल्दीज ने अमरा को ऐसा काम करने के लिए झाड़ा-फटकारा जो उससे कहा नहीं गया था। दूसरे भाइयों के ख़्याल में इस तरह के काम लड़कियों के करने के नहीं और वह भी अल्दीज से पूछे बिना। खुद अमरा अपने आप को वीरांगना समझ रही थी, उसे अपने किये पर गर्व हो रहा था और वह भाइयों पर डरपोक और कमज़ोर होने का आरोप लगाते हुए उन्हें शर्मिन्दा कर रही थी।

अमरा की माँ गेगेशा भी उसके इस काम की प्रशंसा कर रही थी। वह हर चौराहे पर खड़ी होकर चिल्ला-चिल्लाकर लोगों से कहती रही कि सिर्फ़ ऐसी ही लड़की किसी खानदान की शान हो सकती है जिसमें "साहस की कमी नहीं हो" और जिससे मर्द थोड़ा साहस उधार भी ले लें तो किसी भी मर्द के लिए काफ़ी होगा। जो उसका बेटा नहीं कर सका, वह उसकी बेटी ने कर दिखाया। शाबाश। इन बातों से माँ सिर्फ़ अपने को ही ज़्यादा तसल्ली दे रही थी क्योंकि गेगेशा के पास से लोग बिना रुके, सिर हिलाते गुज़र जाते थे और अमरा की ग़लती के साथ माँ की उसको बढ़ावा देने की ग़लती भी जोड़ देते थे।

वैसे गेगेशा अपने मन में मानती थी कि अगर बेटी की जगह बेटे ने इतनी बहादुरी दिखाई होती तो वह उसकी बड़ी खुशी से तारीफ़ करती।

गेगेशा अल्दीज को उसकी कमज़ोरी के लिए ताने देती रही। वह चिल्ला-चिल्लाकर उससे कहती,

"भेड़ों के आगे बहादुर, बहादुरों के आगे भेड़ – तू खुद भेड़ ही रहा! तू सोता रहा और तेरी बहन तेरे लिए बहू उड़ा लायी

और तूने उसे ले जाकर उसके माँ-बाप के घर छोड़ दिया। मुझे कोई ऐसा दूसरा मर्द तो दिखा! मेरी बेटी असली मर्द है! अगर तू मर्द नहीं तो फिर घोड़े की काठी पर मत बैठ!"

अल्दीज़ अगरा से नफ़रत करने लगा और उसने उसका जीना दूभर कर दिया। अगरा के साथ सब ऐसा रूखा व्यवहार करने लगे कि सबका गुस्सा शान्त होने तक माँ ने अगरा को अपने शहर के रिश्तेदारों के पास भेजने का फ़ैसला कर लिया।

कोई नहीं जानता था अमरा और अलदीज किन परिस्थितियों में भाई-बहन बन गये थे। यह राज़ उनके बीच में ही रहा।

जब अल्दीज़ ने अमरा को अपने घर में देखा तो सब से पहली बात जो उसकी समझ में आयी, वह यह थी कि अमरा को इस तरह पाने का उसे कोई अधिकार नहीं। उसका दिल ऐसी लड़की में लग भी नहीं सकता था जिसे उसकी मर्ज़ी के खिलाफ़ भगा लाया गया हो। उसे खुद अपने आप से ही नफ़रत हो जाती।

अल्दीज ने सबसे पहले अमरा और अपनी इज्जत का खयाल किया। आखिर उसने अमरा से भाई बनने का वायदा किया था। आदमी को अपने वायदे का पक्का होना चाहिए। और अल्दीज़ ने वही किया।

अल्दीज अमरा को पहले की तरह ही प्यार करता था। जब अमरा के मिलने की कोई आशा नहीं रही तो वह उसे और ज़्यादा प्यार करने लगा। अब ख़ास तौर से जब वह अकेला रह गया तो अमरा के प्रति अपनी भावना से उसे राहत मिल रही थी हालांकि वह इस लड़की को हमेशा-हमेशा के लिए खो चुका था।

अल्दीज को डर था कहीं अपने खानदान का सदस्य बना कर अमरा उसे केवल अपनी अंगुलियों पर नचाना तो नहीं चाहती। और जब कभी यह खयाल उस के दिमाग़ में आता, वह अपने आप को कोसने लगता – आखिर उसने अमरा का प्रस्ताव माना ही क्यों। वह उसी समय बातचीत में प्रस्ताव इन्कार कर सकता था और इस वक़्त अपने वायदे से बंधा न होता। नहीं, उसे अमरा

को घर वापस छोड़ आने के बजाय अपने पास ही रख लेना चाहिए था। वह उस की पहली पत्नी हो गयी होती। उसे प्यार भी करने लगती ... अगर अमरा उसके साथ रहती तो जिन्दगी में कितनी खुशियां उसका इन्तज़ार कर रही होतीं।

अल्दीज अमरा के आगे नतमस्तक हो, उसका भाई बनने

को राजी हो गया। किसी लड़की का भाई, यानी अमरा जैसी सुन्दर लड़की का भाई बनने का मतलब है – उसकी रक्षा करना, उसकी मदद करना, हर तरह की विपत्ति से उसे उबारना, वैसे ही जैसे उसने अब किया था।

उसे सबसे ज़्यादा गुस्सा अपने गांववालों पर इसलिए आ रहा था क्योंकि उनमें से किसीने भी उसके इस काम का ठीक-ठीक मूल्यांकन नहीं किया था। किसीने उसे सच्चा और बहादुर नहीं माना बल्कि इसके विपरीत वे उसे डरपोक और गद्दार मानते थे। उनके ख्याल से जिस लड़की को वह प्यार करता था, उसे भगाकर फिर वापस उसके घर छोड़ आया।

केवल अल्दीज ही जानता था कि स्थिति को पहले जैसी बनाने के लिए उसे कितने धैर्य और दृढ़निश्चयता से काम लेना पड़ा। उसने अबखाज़ियाई समाज के नियमों में से एक "खानदान की इज़्ज़त न जाये" का उल्लंघन नहीं होने दिया था।

पर जहां तक नोवालूनिये के लोगों का सवाल है, वे इन सब परिस्थितियों से अनभिज्ञ थे और वे इस रिश्ते को नहीं मानते थे। रिश्ते का एलान करना, किसी को भाई या बहन बनाना अबखाज़ियाई लोगों के जीवन में बहुत महत्वपूर्ण घटना होती है। ऐसे मौक़ों पर लोग इकट्ठे होते हैं, दावत होती है और इस दावत में बड़ी धूम-धाम के साथ इस नये रिश्ते का एलान किया जाता

है ... और यहाँ गाँववाले सोचते थे कि लड़का-लड़की कैसे भाई-बहन बन गये जब किसी ने इसके बारे में सुना ही न हो?

और हरज़ामान? वह अपने जोश में समझ ही नहीं पाया कि क्या हो गया। पहले उसने सोचा कि अल्दीज अमरा को उसे भगाकर ले जानेवालों से छुड़ा कर घर ले आया है। पर जब उसे असलियत मालूम हुई तो वह रो पड़ा। अब उस की प्यारी पोती के बारे में बुरी-बुरी अफ़वाहें फैलेंगी। उस निर्दोष की बेइज़्ज़ती कर दी गयी। अपनी व्यवहारिक बुद्धि से वह इस स्थिति को सुधारने का रास्ता खोज रहा था। पर उसे कुछ नहीं सूझा।

और मैं? मैं अमरा के घर का चक्कर लगाता उसे नये ख़तरों से बचाने में लगा था। मैं उसे उन ख़तरों से बचा रहा था जो एकाएक इस सुन्दर लड़की के सिर पर टूट पड़ सकते थे। मुझे डर था, कहीं उसे और लोग उड़ा कर न ले जायें। मैं उसके कमरे में जलनेवाली रोशनी को देखता रहता था और जब वह बुझ जाती, चारों ओर अंधकार और नीरवता का साम्राज्य छा जाता तो मैं चैन से चला जाता था।

कई बार मेरी इच्छा होती कि मैं उसके पास जाकर सब कुछ बता दूँ पर डरता था, कहीं वह मुझे ठुकरा न दे, कहीं मुझ पर विश्वास न करे। वह सोच सकती थी कि मैं मौक़े का फ़ायदा उठाकर दूसरे लोगों की ठुकराई लड़की को चुन रहा हूँ। मैं नहीं चाहता था कि वह ऐसा सोचे। इसलिए उसके पास नहीं जा रहा था। एक बार फिर मैंने उसे सब कुछ बता देने का मौक़ा छोड़ दिया।

सबसे ज्यादा दुखी अमरा थी। वह स्कूल से आकर अपने कमरे में बन्द हो जाती। घर में भी किसी से जो कुछ हुआ उस के बारे में दिल खोलकर बात नहीं कर सकती थी। उसके नज़दीकी लोगों और खुद उसके दिल में भी अचानक हुई इस शर्मनाक घटना की वजह से बहुत गहरा दर्द था।

पर अलगेरी कहाँ है? वह ऐसी कठिन घड़ी में क्यों नहीं आता? क्या सबसे गहरा मित्र अपनी प्रियतमा की क़िस्मत की तरफ़ से इतना उदासीन रह सकता है? क्या अलगेरी उसे धोखा

दे रहा था और उसे यह बात अब मालूम पड़ी, जब उसे अपने दोस्त की सख़्त ज़रूरत हुई? या हो सकता है, उसके साथ अचानक कुछ हो गया और इसीलिए वह उसके पास न आ रहा हो?

अमरा अपना कमरा बन्द किये इस आशा में तपस्विनी की तरह बैठी रहती कि अलगेरी आकर उसे ले जायेगा और चुगलखोरों का जोश फ़ौरन ठंडा पड़ जायेगा। पर अलगेरी अमरा के पास आ ही नहीं रहा था। अमरा ने खुद उससे मिलने का निश्चय किया।

अलगेरी उसी के पास आ रहा था और अमरा उसमें आये परिवर्तनों को देखकर हैरान रह गयी। वह उसकी ओर बदली हुई-सी निगाहों से देख रहा था। उसकी नज़रें इधर-उधर दौड़ रही थीं मानो वह किसी को ढूंढ़ रहा हो। अमरा उसके पास पहुंचकर उसे बताने लगी,

"अलगेरी, तुम्हें शायद मालूम हो चुका होगा कि मेरे साथ क्या हुआ? मुझे तुमसे मिलना जरूरी था। अब मैं आ गयी हूँ ..." अमरा ने घबराते हुए कहा।

अलगेरी बगलें झाँकता रहा मानो अपने ख़यालों में खोया हुआ हो। उसे वास्तव में उस दूसरी लड़की की याद हो आयी थी जिसे उसने काफ़ी अरसे से नहीं देखा था। अलगेरी दूसरी लड़की के बारे में ख्यालों में इस तरह डूबा था कि व्यथित अमरा की बातें सुन ही नहीं पा रहा था।

"इसे क्या हुआ है?" अमरा का दिल धक् से रह गया। "यह तो मेरी बात ही नहीं सुन रहा।"

"अलगेरी, तुमने सुना ..." अमरा उसकी निगाहों को पकड़ने की कोशिश करती बोली।

"डरने की कोई बात नहीं ... बस यूँ ही ..." अलगेरी ने सर्द लहजे में कहा।

"अलगेरी मैं बहुत दुखी हूँ। मेरे चारों ओर इतना शोर ..."

"इसमें दुखी होने की बात ही क्या है ... जिन्दा तो हो," अलगेरी दाँत भींचकर बोला और अमरा अब पछता रही थी कि वह अलगेरी को ढूंढ़ कर उसके पास क्यों आयी।

इसी समय पेड़ के पीछे से अमरा को हरज़ामान का सफ़ेद सिर दिखाई दे गया। अमरा और अलगेरी दोनों अलग-अलग दिशाओं में भागे और फिर नहीं मिले।

"बाबा कहाँ से आ पहुंचे? उन्होंने क्या हमें देख लिया था? अब क्या होगा!" अमरा भागकर घर पहुंची और कमरा बन्द करके बैठ गयी।

अमरा मन-ही-मन अलगेरी के साथ हुई अपनी मुलाक़ात का विश्लेषण कर रही थी। अलगेरी ने उससे न तो कुछ कहा था और न ही कोई सहानुभूति दिखाई थी। वह उसके साथ पराये आदमी की तरह पेश आया था। क्या वह सच्चा दोस्त है? क्या वह उसे प्यार करता है?

हरज़ामान घर आया। पोती उसके सामने नहीं आयी। पर वह कर ही क्या सकता था? पोती को वह हुक्म नहीं दे सकता था पर उसके विचार में अमरा ने ख़ुद ही ग़लती की थी। हरज़ामान सोचता था कि लड़की को ख़ुद सोचने-विचारने की आज़ादी है और उसे अपनी क़िस्मत का फ़ैसला ख़ुद ही करना चाहिए। पर जिस आदमी से वह मिलती रही थी, वह क्या इस निष्कपट हृदय-वाली लड़की के योग्य है?

हरज़ामान बेचैनी से आँगन में चक्कर लगा रहा था। लंगड़ी-लूली हुई बील्या उसके पीछे-पीछे चल रही थी। हरज़ामान उदासी से उसकी आँखों में झाँकता, उसके कानों के ऊपर थपथपा रहा था। हरज़ामान जानता था, अमरा किसके साथ सुखी रह सकती है। पर क्या उससे कहा जा सकता था? और क्या वह बूढ़े की बात सुनने के लिए तैयार होगी?

उन्नीस

कान बहरे कर देनेवाला धमाका हुआ। पहाड़ हिल उठे। हरज़ामान के दिल को जैसे धक्का-सा लगा। वह लड़खड़ा कर पीछे को सरक गया। अभी-अभी जिस चट्टान को वह देख रहा था, वह अचानक अजीब तरह से अपनी जगह से सरककर एक तरफ़ झुकने लगी और ढह गयी। फटे तकिये से बिखरते पंखों की तरह पत्थरों के टुकड़े आसमान में उछलकर फैल गये। फिर वे जमीन पर ओलों की तरह गिरे। कुछ पत्थर हरज़ामान के पास गिरे।

नहीं, हरज़ामान ने सोचा, अगर हम दूसरी विपत्तियों और बलाओं से बच भी जायें तो ये लोग हर सूरत में हमारा ख़ात्मा कर देंगे। ये लोग केवल हमें और हमारे घरबार को ही रास्ते से नहीं हटा रहे हैं बल्कि पहाड़ों को भी। हम इनके सामने कितने असहाय और लाचार हैं। हरज़ामान पगडंडी से हटकर सावधानी बरतता चलने लगा। वह एक घने पेड़ के तले खड़ा हो गया, चट्टान की आड़ में से दो आदमी निकले। वृद्ध ने उन्हें पहचान लिया। ये वही दो इंजीनियर थे जिनसे उसने कभी अपने आँगन में बलूत के तले बात की थी। ये अलगेरी और मीता थे। हरज़ामान को देखकर दोनों इंजीनियर जल्दी-जल्दी उसके पास आ पहुंचे। लग रहा था, वे उसे विस्फोट के क्षेत्र में घुसने के लिए डांटना चाहते थे। पर हरज़ामान उनसे पहले ही विनोदी स्वर में बोल उठा:

"सुनिये, क्या आप लोगों ने दिन-दहाड़े ही हमारी ज़मीन उड़ा डालने की ठान ली है? हम लोग कहाँ खड़े होंगे, कहाँ चलेंगे? और मुझ बुड्ढे को भी आपने क़रीब-क़रीब ज़मीन के साथ ही उड़ा दिया था। अच्छा है, चलो दोनों काम एक साथ ही हो जायें।"

"आँखें खोलकर चलना चाहिए। जिस पगडंडी से चलकर तुम आ रहे हो, वहाँ फट्टे पर लाल झंडी टंगी है। इसका मतलब है – आगे ख़तरा है, जाना मना है।"

"मुझे लगता है, आप लोगों ने सब गड़बड़ कर दिया है। मुझे लाल झंडी से डरना चाहिए, यह कब की बात है। हमारे ग्राम सोवियत की इमारत पर भी लाल झंडा फहरा रहा है। इसका

मतलब है, मुझे ग्राम सोवियत से भी दूर से ही बचकर निकल जाना चाहिए? और फिर त्योहारों के दिनों में भी तो लाल झंडे लगाये जाते हैं, वे भी क्या हमें डराने को होते हैं?"

इंजीनियरों के मुंह उतर गये। हरज़ामान के मज़ाक़ से वे पसोपेश में पड़ गये थे।

"त्योहारों और ग्राम सोवियत की बात और है। हमारे काम की जगह में लाल झंडी का मतलब है – ख़तरा और मनाही।"

"यह कैसे हो सकता है कि एक ही रंग त्योहारों के मौक़ों पर शान्ति का प्रतीक हो और काम के समय ख़तरे का।"

इंजीनियर वृद्ध के बेमतलब छिद्रान्वेषण से तंग आ गये थे। एक तो ख़तरे के क्षेत्र में घुस आया, अपनी जान खो बैठता और जवाबदेही हमारी होती। अब ऊपर से हमारी ही ग़लतियाँ भी निकाल रहा है। मीता समझ नहीं पाया कि हरज़ामान को क्या जवाब दे, लगता है, उसने इस सवाल के बारे में कभी सोचा ही नहीं था। अलगेरी शुरू से ही इस बेकार की बहस में नहीं उलझा था। पर हरज़ामान ने दूसरी बात छेड़ दी।

"आपकी सड़क पहाड़ों में हमारे फ़ार्म के पास से निकाली जा रही है। उसे आप लोग कहाँ तक ले जायेंगे? क्या सबसे ऊंची पहाड़ियों तक?"

"जहाँ तक ज़रूरी होगा।"

"क्या चहेते उत्तर को दक्षिण से मिलाना चाहते हैं?" हरज़ामान ने फिर मज़ाक़ किया।

"ज़रूरी हुआ तो मिला भी देंगे। अभी हम पहाड़ों के अन्दर तक सड़क ले जायेंगे जिससे पेड़ों को काटकर निकाल ले जायें।"

"क्या हमारे जंगल जड़ से काटने का इरादा है?"

शुरू से ही ख़ामोश अलगेरी विस्फोट के क्षेत्र की ओर चला गया।

"बेटा मीता," वृद्ध चुप नहीं हुआ, उसके दिमाग़ में कोई अपना ही विचार था, "अपनी सड़क बना लेने के बाद आप लोग कहाँ जायेंगे?"

"किसी और जगह सड़क बनाने।"

"कौन सी जगह?"

"जहाँ भेजा जायेगा।"

"हमारे गाँव के आसपास या कहीं उससे दूर?"

"जहाँ सड़क की ज़रूरत होगी, वहीं हमें भेज दिया जायेगा। लेकिन आप क्या हमें जल्दी से जल्दी इस जगह से विदा कर देना चाहते हैं?"

"आप लोग ख़ुद ही जल्दी-जल्दी सड़क बना रहे हैं। ख़ैर अब मुझे इससे क्या लेना-देना। चाहे इस शताब्दी के ख़त्म होने तक बैठे रहो। मैं तो बस यूँ ही जिज्ञासावश पूछ बैठा। बिजलीघर बना लोगे, उसके बाद? अलगेरी को ही लो, वह कहाँ जायेगा, कहीं दूर?"

मीता समझ गया, वृद्ध का इशारा किस ओर है। उसकी सीधी-सादी चक्करदार बातें समझकर उसने हरज़ामान की खिल्ली उड़ाने की सोची,

"जब तक अलगेरी मुराद पूरी नहीं कर लेगा, आपके गाँव से नहीं जायेगा।"

"क्या बिजलीघर बन जाने के बाद भी?"

"हाँ, उसके बाद भी।"

"वह हमारे यहाँ क्या करना चाहता है?"

"अलगेरी से पीछा छुड़ाना क्या आप इतना आसान समझते हैं? आप कुछ नहीं कर पायेंगे। वह अगर गया भी तो आपके गाँव का एक टुकड़ा अपने साथ ले जायेगा। हाँ, हाँ, हाँ, जहाँ तक मुझे मालूम है, वह आपके गाँव का एक टुकड़ा अपने साथ ले जाना चाहता है।"

"भला, कौन-सा टुकड़ा?" हरज़ामान ने खोये-खोये पूछा। उसके चेहरे से उसकी घबराहट साफ़ ज़ाहिर हो रही थी। वृद्ध

को छल-कपट करने या अपनी भावनाएं छुपाने की कला तो आती नहीं थी।

"आप अलगेरी को अभी नहीं समझ पाये हैं," मीता ने हरज़ामान को और भी डराया। "वह खाली हाथ नहीं जानेवाला।"

"सुनो, मुझे बताओ, वह अपने साथ क्या ले जाना चाहता है? वह ऐसा कौन-सा टुकड़ा है?"

"वह जानता है, उसे क्या ले जाना है। कोई बुरी चीज़ वह अपने साथ थोड़े ही ले जायेगा। हमारा अलगेरी बेकार की चीज़ें ले जानेवालों में नहीं। वह कोई सबसे अच्छी चीज़ ढूंढ़ लेगा।"

मीता शान्त और अविचल स्वर में बोल रहा था और मन-ही-मन हरज़ामान की घबराहट से खुश हो रहा था।

"सुनिये, आप लोग यहाँ किसलिए आये हैं? क्या हमें हमारी ज़मीन से भगाने आये हैं?"

"भगाने क्यों, हम तो आपके साथ रहने, आपसे रिश्तेदारी करने भी आये हैं।"

हरज़ामान की आँखों के आगे गुस्से के मारे अंधेरा छा गया। कैसा वक़्त आ गया है! कहाँ गयी जवान लोगों की विनम्रता, समझदारी, कहाँ है उनकी शर्म-हया? यह लड़का कितनी बेशर्मी से उसकी खिल्ली उड़ाये जा रहा है, इसे उम्र का भी लिहाज नहीं, सफ़ेद बालों का भी ख़याल नहीं। कहाँ गया क़ानून, कहाँ है ज़मीर?

"कहीं ऐसा न हो जाये, रिश्तेदार बनने के बदले हम दुश्मन बन बैठें। तुम्हें तो मालूम ही है, इसका मतलब क्या होता है और इसका नतीजा क्या हो सकता है।"

"भला ऐसी दुश्मनी किसलिए? उल्टे हमारे बीच मज़बूत रिश्तेदारी हो जायेगी।"

हरज़ामान का गुस्सा और ज़्यादा तेज़ होता गया,

"क्या रिश्तेदारी किसी पर थोपी जाती है? और मान लो, अगर मैं आपसे रिश्तेदारी बिलकुल भी न करना चाहूँ तो?"

"हर हालत में होगी, चाहो या न चाहो।"

"कैसे? ज़बरदस्ती?"

"सब अपने आप हो जायेगा।"

"और अगर मैं न चाहूँ तो?"

"और अगर हम चाहें तो?"

"आप लोग होते ही कौन हैं?!"

वृद्ध जितना ज़्यादा उबल रहा था, मीता उतनी ही शान्ति से जवाब दे रहा था।

"हम नहीं, मेरा इससे क्या लेना-देना। पर कोई और, जो इस समय हमारे साथ नहीं है।"

"और अगर मैं न चाहूँ, चाहे वह कोई भी हो? चाहे वह क्या भूत-प्रेत ही क्यों न हो। क्या वह अपनी मर्ज़ी के चक्कर में हमारा चैन लूटने आया है?"

"मेहरबानी करके मुझे बताओ," मीता ने एकाएक बात बदली, "क्या अमरा के बारे में लोग जो बातें कर रहे हैं, वे सच हैं? या बस अफ़वाह ही है?"

हरज़ामान को पैरों तले ज़मीन खिसकती महसूस हुई। अगर वह ज़मीन के अन्दर भी समा जाता तो खुशी ही होती। "बेचारी अमरा," वह सोच रहा था, "लगता है, लोग उसे चैन से नहीं जीने देंगे और मुझे भी। लेकिन कभी ऐसा हुआ है, कोई दुध-मुंहा किसी बूढ़े से ऐसा अपमानजनक सवाल पूछे? यह तो पूछ भी रहा है और इसकी आँख तक नहीं झपकी। किसलिए, किस वजह से ये लोग मेरी पोती पर टूट पड़े हैं? जैसे गाँव में ऐसी और लड़कियाँ हों ही नहीं जिनके बारे में बातें बनायी जा सकें।"

"भला, तुमने अमरा के बारे में क्या सुना है?"

मीता सकुचाया। वह समझ गया, उसने अपने सवाल से वृद्ध के दिल को चोट पहुंचायी है, उसे बेकार ही चिढ़ा दिया है।

"मैं कुछ नहीं कह रहा हूँ, सिर्फ़ सुना है, लोग बकवास कर रहे हैं।"

"बताओ, क्या बकवास कर रहे हैं?"

"मैंने कोई बुरी बात नहीं सुनी। अफ़वाह है, किसी ने उसका अपमान कर दिया।"

"किसने अपमान किया, कब, जवाब दो।"

"मुझे ठीक-ठीक मालूम नहीं।"

"और अगर मालूम नहीं है तो बकवास करने की ज़रूरत भी नहीं है।"

ये शब्द जैसे अकेले मीता के लिए ही नहीं बल्कि उन सब लोगों के लिए कहे गये थे जो अमरा के बारे में अफ़वाहें फैला रहे थे या आगे भी फैलानेवाले थे।

चिल्लाकर ये कटु शब्द कह देने के बाद हरज़ामान जल्दी से मीता से दूर चला गया और मीता वहीं खड़ा रहा। उसे कोई जवाब नहीं सूझ रहा था।

हरज़ामान तेज़ी से चला जा रहा था। अगर कोई कनखियों से उसकी आँखों की ओर देखता तो उसे लगता जैसे उनसे चिन्गा-रियाँ छूट रही हैं। पर खुद हरज़ामान के लिए वे धुंधला गयी थीं और वह बिना रास्ता देखे, अपने आगे हर चीज़ अस्पष्ट देखता चला जा रहा था।

उसकी दायीं ओर नीचे फैला गाँव जैसे अपना परिधान बदल चुका था। चटकदार, सुन्दर और आँखों को मोह लेनेवाले दृश्य के स्थान पर वहाँ धुंधलका और उदासी छा गयी थी। हरज़ामान ने अगर पहले यह देख लिया होता कि वह कैसे अनाकर्षक, पंखकटे-से गाँव में रह रहा है तो वह किसी दूसरे गाँव में जा बसा होता।

पेड़, घर, बाड़ें, पगडंडियाँ जो एक दूसरे की ओर आकर्षित-सी होकर, एक सुन्दर चित्र बना देती थीं, अब अलग-अलग घरों, बाड़ों, पेड़ों और घरों के ढेर में बिखर गयी थीं। जाने वह बयार भी कहाँ चली गयी थी जिसमें हरज़ामान इतने सालों से सांस लेता आया था। एकाएक हवा ऐसी हो गयी कि उसमें साँस ले पाना भी मुश्किल हो गया। वह किसी तरह सीने में ही नहीं जा रही और साँस लेने के बाद बाहर निकाल पाना भी मुश्किल पड़ रहा है। उसके पांव रह गये हैं। जिस पगडंडी पर चलकर हरज़ामान इतनी आसानी से पहाड़ों तक पहुंच जाता था, मानो उसपर किसी ने जादू कर दिया है। उस पर क़दम भी बड़ी मुश्किल से बढ़ पा रहे हैं। फ़ार्म तक का रास्ता भी कुछ लम्बा हो

गया है। और अगर इसी तरह उसका काम भी बदल जाये और आज से नीरस और ऊबा देनेवाला हो जाये तब क्या होगा, कैसे जिया जायेगा? हरज़ामान ने अनमने होकर क़दम बढ़ाये जैसे वह अपने काम पर जल्दी से जल्दी पहुंचना चाहता हो और देखकर विश्वास कर लेना चाहता हो कि वह पहले की तरह ही उसकी प्रतीक्षा में है।

बीस

जब मैंने इन सब बातों के बारे में अच्छी तरह सोच-विचार किया तो मेरी समझ में आ गया कि मैं एक परले दर्जे के तुच्छ आदमी की तरह व्यवहार कर रहा हूँ और अगर मुझे बुरा लग रहा है, मेरे हालात ख़राब हैं, मैं तड़प रहा हूँ तो सारा का सारा दोष मेरा ही है। मैं एक गूंगे या लकवा मारे आदमी की तरह जी रहा हूँ: सब कुछ देख-सुन रहा हूँ, सब कुछ महसूस कर रहा हूँ, तड़प रहा हूँ पर करता कुछ भी नहीं। इस बीच अमरा के साथ कितना कुछ हो चुका है – अलगेरी आया, अल्दीज ने शादी का प्रस्ताव किया और अंत में उसे भगाया भी गया, पर मैं उस वक़्त क्या कर रहा था? कुछ नहीं। क्या मुझे नयी घटनाओं का इंतज़ार करना चाहिए? क्या मुझे उस समय तक हाथ पर हाथ रखकर बैठे रहना चाहिए जब तक कि सब मेरी आँखों के सामने अपने-अपने काम, जिस तरह चाहें और जिसमें उन्हें फ़ायदा हो, पूरे कर लें? लगता है हर कोई अपने ही ढंग से अपने लक्ष्य तक पहुंचने के लिए

संघर्ष कर रहा है: अलगेरी, अल्दीज़, अपहरण का आयोजन करनेवाली अगरा, देस। केवल मैं अकेला सबके पैरों के तले फंसा, संघर्ष में कोई भाग नहीं ले रहा। क्या मेरे लिए आस्तीनें ऊंची करने का समय नहीं आ गया है?

एक बार और सोच-विचार लेने के बाद मैं इस नतीजे पर पहुंचा कि अगर मैंने संघर्ष आरम्भ किया तो पहला आदमी, जिससे मुझे टक्कर लेनी होगी, वह अलगेरी ही होगा। लेकिन जब मुख्य प्रतिद्वंद्वी का पता चल ही गया है तो मैं इन्तज़ार किसलिए कर रहा हूँ? मैं अलगेरी के पास से गुज़रता हूँ, उससे बातें भी करता हूँ मानो मुझे उससे कोई मतलब न हो। उसे जल्दी से जल्दी ढूंढ़ना चाहिए। न कल, न परसों, बल्कि आज, अभी, चाहे कुछ भी क्यों न हो उसे ढूंढ़कर अपना काम शुरू कर देना चाहिए। मैं अपने प्रतिद्वंद्वी को ढूंढ़ने के लिए गाँव में चक्कर लगाने लगा। अगर मुझे खुद अलगेरी के मिलने की आशा नहीं थी तो कम-से-कम उसके पैरों के निशानों के मिलने की तो थी। आखिरकार मीता के तंबू की ओर जानेवाली पगडंडी पर मुझे एक आदमी दिखाई दिया और मुझे लगा कि वह अलगेरी ही है। मैं उसके पीछे भागा। क्योंकि अलगेरी धीरे-धीरे चलता हुआ पहाड़ की ओर जा रहा था, इसलिए मैं बड़ी तेजी से उसके नज़दीक पहुंचता जा रहा था। मैं कल्पना कर रहा था कि मैं किस तरह से भागता हुआ उसके पीछे जा पहुंचूंगा, उसे पैरों से पकड़कर सिर के ऊपर उठाकर घुमाऊंगा और पहाड़ियों में दूर फेंक दूंगा जहाँ से उसकी हड्डियाँ भी इकट्ठी न की जा सकेंगी। पर मुझमें धैर्य की कमी रह गयी। अलगेरी के पास भागकर पहुंचने से पहले मैंने उसे आवाज़ दी। मेरी आवाज़ सुनते ही अलगेरी रुक गया। मैं उसकी तरफ़ किसी जहाज़ पर निशाना साधकर छोड़े तारपीडो की तरह या किसी हवाई जहाज़ को सीधी टक्कर मारने जा रहे हवाई जहाज़ की तरह बढ़ता जा रहा था। मुझे लग रहा था कि मैं अभी उसको चीरकर दो टुकड़े कर दूंगा। अलगेरी पगडंडी पर शान्त खड़ा मेरी प्रतीक्षा कर रहा था। सच कहूँ तो उसकी आँखों में आश्चर्य झलक

रहा था। शायद उसे मेरी मुखमुद्रा और मुझे अपने पास पहुंचते देखकर आश्चर्य हो रहा था।

"कहो," उसने मुझे अपने से पांच क़दम दूर रोक दिया, पर मैं अपने पर काबू नहीं रख पाया और उसके बिलकुल क़रीब जा पहुंचा।

मेरी गुस्से के मारे बाहर निकली पड़ रही आँखोंवाली मुखमुद्रा और फूली हुई साँस शायद अलगेरी को डराकर कम-से-कम एक क़दम पीछे हटाने के लिए काफ़ी थी।

"तुम क्या सोचते हो?" मैंने उससे पूछा।

"क्या मैं?"

"हां, तुम।"

"इस वक़्त कुछ नहीं।"

"बहुत हो चुका!" मैंने उसे और ज़्यादा चकित कर दिया।

"क्या बहुत हो चुका? तुम्हारा मतलब क्या है?" अलगेरी को वास्तव में आश्चर्य हुआ। "मेरी समझ में नहीं आ रहा है, तुम्हें क्या हुआ है।"

"तुम अच्छी तरह जानते हो। अनजान होने का बहाना मत करो। जितनी जल्दी हम एक-दूसरे को समझ लें, उतना ही अच्छा होगा।"

"फिर भी मुझे समझाओ तो सही।"

"मेरे रास्ते से दूर हो जाओ!"

"तुम्हारी यात्रा सफल हो!" अलगेरी ने एक ओर हटकर मेरे लिए पगडंडी खाली छोड़ दी।

"बहुत हुआ मज़ाक। मेरे पास मज़ाक करने का वक़्त नहीं।"

"फिर बताओ, बात क्या है।"

"खेल खत्म कर देने का वक्त आ गया है। हालांकि इसे बहुत पहले ही खत्म हो जाना चाहिए था।"

अलगेरी कुछ न समझ पाते हुए वहीं खड़ा रहा। कहते हैं, अगर खरगोश अपनी जगह पर देर तक बैठा रहता है तो फिर वह उतनी ही देर तक बिना रुके भागता रहता है। वैसे एक तरह से खरगोश की सी बात मेरे साथ भी हो रही थी – मैं बहुत देर चुप घुटता रहा था और अब रुक ही नहीं रहा था।

"तुम मेरे रास्ते से हटोगे या मुझे पहले की तरह परेशान करते रहोगे?"

"तुम्हारा रास्ता साफ़ है, अलोऊ, जिस तरफ़ जाना चाहते हो, जाओ। तुमने यह कैसे सोच लिया कि मैं तुम्हें परेशान कर रहा हूँ।"

"तुम बनो मत, मैं इस रास्ते के बारे में नहीं कह रहा हूँ।" मेरी आवाज़ ऊंची और कुछ तीखी होती गयी। मुझे खुद अपनी आवाज़ पर हैरानी थी।

"तुम्हें मालूम है, मैं क्या कहना चाहता हूँ। अमरा को छोड़ दो। अमरा और मेरे रास्ते में अड़कर मत खड़े होओ!"

"क्या? तुमने यह कैसे कहा?!" अलगेरी की मुखमुद्रा एक पल में बदल गयी, ठीक उसी तरह जैसे धूप में चुपचाप ऊंघता मुर्गा पड़ोसी के मुर्गे को देखते ही बदलता है। "यहाँ अमरा से क्या मतलब? या तुम भी उसके चारों ओर चक्कर काट रहे हो? बस तुम्हारी ही तो कमी थी। वास्तव में हद हो चुकी है! मुझे तुम्हारी आवाज़ फिर सुनाई नहीं देनी चाहिए। तुम बच्चे हो। क्या एक अल्दीज ही कम था? तुम मुझसे क्या चाहते हो? अगर जरूरत से ज्यादा गर्म किया जाये तो पत्थर और चट्टान भी चटक जाते हैं। तुम मेरी सहनशक्ति की परीक्षा मत लो। मुझे चैन से रहने दो।"

"मेरे रास्ते से हट जाओ," मैं यही रट लगाये था, हालाँकि मेरी आवाज़ में आत्मविश्वास कम होता जा रहा था।

"तुम किस बात की उम्मीद में हो?" अलगेरी ने शान्ति से पूछा, मानो मेरा मज़ाक उड़ा रहा हो।

"अमरा और मेरा फ़ैसला हो चुका है।"

हालांकि वास्तव में ऐसी कोई बात नहीं थी पर मैं दिन-रात सपने देख रहा था कि अमरा और मेरा फ़ैसला हो जाये और जो मैं चाहता था, उसे सच बताकर मैंने अब निशाना लगा ही दिया।

"तुम्हारा अमरा के साथ?!" अलगेरी एक ज़ोरदार कहकहा लगाया। "तुम अमरा के मंगेतर हो? वह तुम्हारी होनेवाली पत्नी है? हा-हा-हा!"

"हाँ, मैं हूँ! मैं अमरा का होनेवाला पति हूँ। अमरा मेरी होनेवाली पत्नी है। हाँ, हाँ, हाँ!"

"तो ठीक है फिर," अलगेरी की हंसी एकाएक बन्द हो गयी। "अगर वास्तव में अमरा ने तुम्हें 'हाँ' कर दी है, तो मैं तुम्हारा रास्ता नहीं रोकूंगा। पर अगर ऐसा नहीं हुआ और तुम झूठ बोल रहे हो तो..."

अलगेरी की ज़बान से शायद कुछ महत्वपूर्ण शब्द निकलनेवाले थे पर वह चुप हो गया। उसके बाद वह मुड़कर मुझसे दूर चला गया। इस तरह मुझे पता ही नहीं लग सका कि अगर मैं झूठ बोल रहा हूँ तो क्या होगा, यानी वास्तव में क्या होगा।

हाँ, अब मुझमें साहस हो गया है। अब तो कहा जा सकता है कि मैं आस्तीनें ऊंची करके लड़ाई में कूद चुका हूँ। एक काम निबटा भी लिया है। पर मैंने क्या काम किया है? मैंने अलगेरी से झूठ कहा और अमरा को झूठा बनाया। मेरी बन्दूक से गोली छूट चुकी है, पर कैसे?

ऐसा भी होता है कि आदमी के हाथों में असली बन्दूक हो। उसमें एक ही गोली हो जिससे जंगली सूअर या चीते को मारा जा सकता है। पर आदमी डरकर गोली चलाता है और मानो अचानक ही निशाना चूक जाता है।

मैंने ग़ैरज़िम्मेदारी और लापरवाही का काम किया। मैंने अलगेरी को क्यों भड़काया? अब वह अमरा से ज़रूर पूछेगा कि क्या वास्तव में मेरा और उसका फ़ैसला हो चुका है और तब अमरा उससे क्या कहेगी? साफ़ ज़ाहिर हो जायेगा कि मैं झूठ बोला था। मान लिया जाये, अलगेरी सोच ले कि अमरा यह स्वीकार नहीं करती

और उससे सचाई छुपा रही है। पर खुद अमरा मेरी बातों के बारे में क्या सोचेगी? यह सोचेगी कि यह सब उसके खिलाफ़ जानबूझकर किया जा रहा है और मैंने, जिससे उसे छल-कपट की आशा नहीं थी, उसे एक पत्थर और मारा है। और अगर वह इस आखिरी आदमी से भी निराश हो गयी तो क्या फिर वह इस दुनिया में ज़िन्दा रहना चाहेगी? नहीं, मुझे अलगेरी से पहले पहुंचकर अमरा से मिलना चाहिए। मुझे उसे ढूंढ़ना चाहिए, वह चाहे जहाँ भी हो और उसे सब कुछ तरतीबवार बता देना चाहिए। पर आखिर मैं उसे क्या बताऊंगा? मैंने बड़ी बेशर्मी से उसे झूठा बना दिया। इसका मतलब है, आदमी को सब कुछ नाप-तौलकर, सोच-समझकर कहना चाहिए न कि यूं ही। क्या अलगेरी अब विश्वास कर सकता है, अगर मैं उससे कहूँ कि मैं झूठ बोला था? अब वह मुझ पर पहले से भी ज़्यादा अविश्वास करेगा।

इस तरह मैं गया तो था अलगेरी का तिरस्कार करने, उसे अपने रास्ते से हटाने लेकिन अब मुझे उससे माफ़ी माँगनी पड़ेगी, अपना झूठ स्वीकार करना होगा। पर सबसे पहले मेरे दिमाग़ में अमरा का खयाल आया और मैं उसे ढूढ़ने निकल पड़ा।

इस काम में मुझे सफलता मिली जिसकी मैंने आशा नहीं की थी। मुझे अमरा को बिलकुल भी ढूंढ़ना नहीं पड़ा। जैसे ही मैं पहाड़ी से उतरा, मुझे अमरा दिखाई दे गयी। वह चश्मे के, उसी चश्मे के किनारे बैठी थी जो कुछ दिन पहले तक परिवार का अपना, हरजामान के घर का था, पर जब से सड़क ने उनकी ज़मीन के दो टुकड़े कर दिये थे, वह पराया-सा हो गया। अमरा चश्मे के किनारे बैठी पेड़ की एक टहनी को तोड़-मरोड़ रही थी। वह टहनी के टुकड़े तोड़-तोड़कर तेज़ बहते पानी में फेंक रही थी। वह अपने इस काम में इतनी खोयी, सोच-विचार में इतनी डूबी थी कि अपने चारों ओर की उसे कोई भी सुधि न थी। मैं कब उसके पास पहुंच गया, उसे मालूम ही नहीं हुआ। मैं काफ़ी देर तक अमरा के पीछे किंकर्त्तव्यविमूढ़-सा खड़ा रहा। मेरी उससे बात शुरू करने की हिम्मत नहीं हो रही थी। मुझे लगा, अच्छा

होता अगर वह मुड़कर खुद ही मुझे देख लेती फिर उसके चेहरे और उसकी आँखों को देखने से मैं पता लगा लूंगा कि मुझे आगे क्या करना चाहिए। पर अमरा मेरी ओर देखे बिना टहनी के टुकड़े पानी में फेंकती रही। एकाएक अनचाहे ही मैंने उसकी आँखों पर अपने हाथ रख दिये। यह मेरे लिए भी अप्रत्याशित था। न जाने ऐसा करने की संकल्प-शक्ति मुझमें कहाँ से आ गयी थी। और अब मैं अपने हाथों से अमरा की आँखें ढँके निराशा से परिणाम के बारे में सोच रहा हूँ।

"कौन है?" अमरा ने धीरे से पूछा। "मैं पूछती हूँ, कौन है," उसने थोड़ा कड़े स्वर में फिर पूछा।

मैं कुछ भी नहीं कह सका क्योंकि मेरी आवाज़ से वह मुझे पहचान जाती। मैं चुप रहा और मैंने अपनी हथेलियाँ उसके चेहरे पर और ज़ोर से दबा दीं।

"छोड़ दो, मुझे दर्द हो रहा है।"

मैंने नहीं छोड़ा। अमरा मेरे हाथों से एकदम निर्बाध निकल गयी। फिर खड़ी होकर मेरी ओर मुड़ी। क्षण भर के लिए मुझे उसका गुस्से से भरा चेहरा दिखाई दिया। लेकिन क्षण भर को ही। अगले ही क्षण अमरा के चेहरे पर चमक आ गयी, वह प्रसन्नतापूर्वक मुस्करा उठी। उसकी आवाज़ में भी खुशी झलकने लगी।

"अलोऊ! तुमने तो मुझे एकदम डरा ही दिया था। मैंने तुम्हारे बारे में सोचा ही नहीं था। मुझे कभी पता नहीं चलता।"

मैं न तो उसकी बात सुन रहा था, न ही उसके बारे में सोच रहा था। बस एक ही बात मेरी समझ में आयी कि अमरा गुस्सा नहीं हो रही है और न ही मुझे यहाँ से भगाना या मुझसे दूर भागना चाहती है। अमरा के मिलनसार रुख और उसकी बातों में झलकती खुशी से मैं बहुत सकुचा गया, शायद फटकार पड़ने पर भी उतना नहीं सकुचाता।

"तुम कहाँ थे, अलोऊ, तुम ग़ायब क्यों हो गये थे? कितने दिन हो गये हमें मिले हुए!"

अब मैं ठीक-ठीक समझ पाया कि अमरा मुझ पर नाराज़ नहीं है बल्कि मुझे देखकर खुश हो रही है। वह उल्लसित हो

रही है, हंस रही है और उसमें उत्साह फूट रहा है। क्या वास्तव में यह सब इसलिए कि उसने मुझे देखा?

"मैं कहाँ था? कहीं नहीं। यहीं था।"

मैं अमरा से थोड़ी दूर बैठ गया। उसने फ़ौरन बोलना शुरु कर दिया और लगातार बोलती ही रही। ऐसा लगता था जैसे मेरे आने से पहले तक उसके दर्द और अकेलेपन के बारे में सुननेवाला कोई भी नहीं था। वह बिना यह सोचे बोले जा रही थी कि मैं उसकी बातें सुनूंगा भी या नहीं, मुझे उसकी बातों में रुचि होगी भी या नहीं। उसे जैसे खुशी हो रही थी कि उसकी बातें इतनी दिलचस्पी से सुननेवाला आदमी मिल गया। मुझे उसके बातूनीपने से भी खुशी हुई। मैं चला तो था वह बात छेड़ने जो मेरे लिए अरुचिकर थी, पर अब उल्टे ही चुपचाप बैठकर उसकी बातें सुननी पड़ रही हैं।

अमरा ने जो कहा, वह सारा मुझे याद नहीं रहा पर इसमें कोई संदेह नहीं कि अगर मैं पशुचिकित्सक न होकर कवि होता तो उसकी बातों से अपनी कविताओं और काव्य के लिए काफ़ी कुछ ले सकता था। अमरा इस तरह बोल रही थी मानो गा रही हो, कविता पढ़ रही हो। मैं महसूस कर रहा था कि उसकी बातें मुझे लहर की तरह, मीठी नींद की तरह बहा ले जा रही हैं जिससे लड़ पाना असंभव है। कभी-कभी मैंने कुछ बोलने की, उसे यह याद दिलाने की कोशिश कर रहा था कि मैं यहाँ मौजूद हूँ, जिन्दा हूँ पर अमरा मेरी कोशिशों पर ध्यान दिये बिना ही मुझे बीच में ही टोक देती और बोलती चली जाती।

अब मुझे अपने आप पर गुस्सा आने लगा। क्या वास्तव में मुझ में इतनी दृढ़निश्चयता होगी कि मैं उसके भावोद्गार को रोककर अपना काम करूं। मैं अभी उसे टोककर अपनी बात शुरु कर दूंगा। यह मैंने अपने मन में ही सोचा था, हालांकि अमरा की बातों में भी मेरी रुचि धीरे-धीरे कम होती जा रही थी, पर मैं पहले की तरह सम्मोहित-सा बैठा रहा। हाँ, अमरा किसी बात पर खुश हो रही है। वह खुश है। वह खुशी से फूली नहीं समा रही है। पर क्या मुझे उसकी प्रसन्नता का कारण मालूम करना चाहिए?

ये बातें वह उसको सुनाये जिसने उसे इतना खुश किया है। इसका मुझसे क्या वास्ता? क्या उसके दिमाग में यह बात नहीं आ रही है कि मुझे उसकी खुशी के कारणों के बारे में सुनना अच्छा नहीं लग रहा है। मैं उसकी बातें नहीं सुनना चाहता। उसे चुप हो जाना चाहिए। आखिर मैंने तो उससे नहीं कहा था कि वह मुझे अपने दिल के राज़ बता दे। उसे उन्हें दूसरे के पास ले जाना चाहिए।

मैं अमरा को टोकना चाह रहा था पर टोक नहीं पाता। उसकी बातें मीठी नींद की लहरों-सी मुझे बहाये ले जा रही हैं, लोरी सुना रही हैं, मता रही है, मेरी ताक़त और इच्छाशक्ति छीन रही हैं। शायद वह यह सोचती है कि मेरे साथ जिन्दा आदमी की तरह व्यवहार करने की ज़रूरत नहीं, मेरे साथ खिलौने या छोटे-से कुत्ते की तरह व्यवहार किया जा सकता है।

"तो अलोऊ," अमरा ने इस तरह से कहा जैसे वह अपनी बात खत्म कर रही हो, "तुम मेरे सबसे नज़दीकी दोस्त हो और तुम्हें मेरी खुशक़िस्मती के रास्ते पर मेरा साथ देना चाहिए।"

मैंने चीखना चाहा, पर मेरी ज़बान नहीं हिली। मैं क्या सुन रहा हूँ! खुशक़िस्मती के रास्ते पर उसका साथ दूं! हाँ, मैं जानता हूँ, हम अबखाज़ियाई लोगों में रिवाज है: जब लड़की की शादी होती है तो उसके साथ उसका नज़दीकी आदमी, उसके कुल के लोगों में से या बचपन का कोई दोस्त या स्कूल के सहपाठियों में से कोई घनिष्ठ साथी, उसके साथ चलता है। तो अमरा ने मेरे लिए इस तरह की भूमिका चुनी है। बहुत, बहुत शुक्रिया। यह मौत है। शर्म की बात है। दूसरी मौत। मरे को फिर से मारने की तरह। कहीं खुद शैतान तो मुझे घसीटकर इस अभिशप्त नोवालूनिये में नहीं लाया था?

इक्कीस

हरज़ामान की आंख सारी रात नहीं लगी। जब वह आंगन में निकला, भोर भी नहीं हुआ था। अभी सड़क पर गाड़ियां भी चलनी शुरू नहीं हुई थीं। वह ज़मीन के उस हिस्से में पहुंचा जिसे पक्की सड़क ने उसके आंगन से अलग कर दिया था।

उससे यह ज़मीन किसी ने नहीं छीनी थी। वह उसके परिवार की थी। पर फिर भी वह उसे इस तरह से देख रहा था मानो वह कोई काटकर दूर फेंका हुआ टुकड़ा हो।

पर हरज़ामान उस पर से अपनी आंखें नहीं हटा पा रहा है। वह ज़मीन के एक किनारे से दूसरे किनारे तक चक्कर लगा रहा है, क़ब्रों पर जा रहा है और अगर कोई उससे कहे कि अब वह कटा हुआ बग़ीचा उसका नहीं रहा, तो भी वह यहां आता रहेगा, हर मौसम में पहले की तरह ही इस ज़मीन पर काम करता रहेगा।

नहीं, हरज़ामान यह ज़मीन नहीं छोड़ेगा। क्या यही कम है जो उसने यहां से सड़क निकालने दी।

बग़ीचे से घर वापस आने के बाद उसे आसपास बड़ी शांति छायी महसूस हुई। एक ठंडी सांस ले, हरज़ामान घर के अंदर चला गया। देहरी के उस ओर से बील्गा निकली। वह अपनी टूटी टांगों से मुश्किल से चल पा रही थी। बिना कोई आवाज़ किये कुतिया हरज़ामान से प्यार जताने लगी।

"बेचारी बील्गा। तू मेरी ही तरह बूढ़ी और अकेली हो गयी। जब तक हम जवान और ताक़तवर थे, सबको हमारी ज़रूरत रहती थी, हमारे बहुत से दोस्त थे, पर अब तू और मैं आंगन में अकेले चक्कर काटते रहते हैं, किसी को भी हमारी ज़रूरत नहीं रहती। हमारे विचारों की चिन्ता किसी को नहीं होती। पर हम अपना आंगन छोड़कर नहीं जा सकते। हम मरने के बाद भी यहीं रहेंगे और हमें अपने कर्तव्य को ईमानदारी से न निभाने का दोषी कोई भी नहीं ठहरायेगा। और जब हम इस दुनिया से चले जायेंगे, तब ये जवान लोग, कोई कहां, तो कोई कहां, उड़ जायेंगे और अपने पूर्वजों की ज़मीन नहीं जोतेंगे।"

बील्गा हरज़ामान के पैरों से अपना बदन रगड़ने लगी जैसे उस पर भी इसी तरह के दुखदायी विचार छाये हुए हों।

हरज़ामान बालकनी पर चढ़ा और उसने देखा, बील्गा कितनी मुश्किल से अपने कुत्ताघर में घुस रही है। पहली गाड़ियां प्रातःकालीन शांति को भंग करती पहाड़ की ओर दौड़ी जा रही थीं। सफ़ेद धूल के गुबार हरज़ामान की आंखों में छा रहे थे। वह रूमाल निकालकर उससे आंखें मलने लगा। एक और गाड़ी उसकी पुश्तैनी ज़मीन के टुकड़े करनेवाली सड़क पर भागी जा रही थी। सफ़ेद धुआं हरज़ामान की आंखों में घुसने लगा। वह उतनी देर छाया रहा जितनी देर तेज़ी से दौड़ती गाड़ी के पीछे धूल हवा में छायी रही।

घर का दरवाज़ा खड़का और अलीआस सूटकेस लिये आंगन में निकला। अमरा और देस उसके पीछे-पीछे चलीं। हरज़ामान को लगा, परिवार घर छोड़कर जा रहा है।

उसने घबराकर आवाज़ दी,

"तुम सारे परिवार के साथ कहां जा रहे हो, अलीआस? क्या अब अपना घर अच्छा नहीं लगता? या तुमने तुर्की में जाकर बसने की ठान ली है? पर अब वहां जाने के लिए तुम्हें कोई धकिया नहीं रहा।"

"आप क्या कह रहे हैं, पिताजी? मैं तो अकेला ही जा रहा हूं, हमें तुर्की जाने की क्या ज़रूरत है? आप ख़ुद भी इस बात को जानते हैं कि हमारे अबख़ाज़िया से बेहतर जगह कहीं नहीं। और ये लोग तो मुझे छोड़ने जा रहे हैं।"

"पर ऐसे मौक़े पर तुम कहां जा रहे हो? हे भगवान..."

"आपको क्या हो गया है, पिता जी, क्या मैं पहली बार बाहर जा रहा हूं?"

"तुम बताते क्यों नहीं, कहां जा रहे हो? मुझे इस परिवार का मुखिया मानते हो या नहीं? या तुमने ज़िंदा आदमियों की फ़ेहरिस्त से मेरा नाम काट दिया है?"

"आपको हुआ क्या है, पिता जी, मुझे ऐसे ताने किसलिए

दिये जा रहे है? मैं सब कुछ आपके भरोसे छोड़कर जा रहा हूं और मैं सिर्फ़ इसीलिए घर शान्ति से छोड़कर जा सकता हूं, क्योंकि मैं जानता हूं, आप यहां हैं..."

"पर जब तुम लोगों में से हर एक जो जी में आये करता है तो फिर मैं कैसा परिवार का मुखिया हुआ!" हरज़ामान ने अमरा की ओर निगाहें घुमाईं। "मैं वैसे ही चौकीदार बना घर के चारों ओर चक्कर लगाता रहता हूं, रखवाली करता हूं..."

"हमें बुरा मत कहिए, पिता जी," दे़स ने कहा, "आपका ख़याल कौन नहीं करता?"

"क्या तुम सब को दिखाई नहीं दे रहा कि हमारा घर बिखर रहा है? हमारे पुरखों ने उसे हमें चट्टान-सी मजबूत हालत में सौंपा था, हमारे बाद हम उसे किस के लिए छोड़ेंगे? और तुम लोग पूछते हो कि मुझे किस बात की फ़िक्र हो रही है। अपने बाद मैं घर किस के लिए छोड़ूंगा?"

"ऐसी बात मत कहिए, पिता जी, शांत हो जाइए। सब घर पर रहेंगे। सिर्फ़ मैं जा रहा हूं।"

"देखना है, तुम्हारे वापस लौटने तक सब घर पर रहते हैं या नहीं।"

यह सुनकर अमरा भागकर घर में जाकर अपने कमरे में छुप गयी।

हरज़ामान उसकी खिड़कियों की तरफ़ देखते हुए ऊंची आवाज़ में बोलता रहा,

"पता नहीं, तुम सब को यहीं देख पाओगे या नहीं।"

अलीआस ने अपने पिता की बात समझ न पाते हुए जवाब दिया,

"सब यहीं रहेंगे।"

"क्या फिर त्बिलिसी जा रहे हो? जाओ, जाओ, नहीं तो वहां त्बिलिसी का काम तुम्हारे बग़ैर रुका पड़ा होगा..."

अलीआस घर के फाटक से बाहर निकल गया।

हरज़ामान को अपने फ़र्ज़ का अहसास और फ़िक्र हुई। उसने अपनी ज़मीन का एक बार और चक्कर लगाया। उसे चैन नहीं आ रहा था। तब हरज़ामान ने फ़ार्म पर जाने का निश्चय किया। उसे आशा थी, वहां काम में व्यस्त रहने से उसे चैन मिलेगा और वह अपनी योजनाओं के बारे में भी सोच-विचार कर लेगा।

जब अमरा ने देखा, बाबा चले गये हैं तो वह भागकर सड़क पर आयी और स्कूल रवाना हो गयी। वह अपने बाबा से नहीं मिलना चाहती थी।

बाबा के इशारों ने अमरा का संतुलन बिगाड़ दिया था। वह खिन्न और खोयी-खोयी-सी स्कूल पहुंची। उसकी निगाहों और चाल में भी अनिश्चय दिखाई दे रहा था। वह डेस्कों के बीच में से इस तरह से चल रही थी मानो सुरंगें बिछी ज़मीन पर चल रही हो या जैसे वहां सोये हुए लोगों को जगाने से डर रही हो। उसके अनिश्चय का कारण उसे मालूम था – वह अपने बाबा और अपनी मां की इच्छा के विरुद्ध जा रही थी। पर वह अपने आप को धोखा नहीं दे पा रही थी। अमरा अलगेरी से मिलने के लिए तड़प रही थी। पर वह जानती थी कि उसके बाबा और मां उसकी इच्छा का विरोध करेंगे। मां और बाबा को अपना फ़ैसला बताने में उसे डर लगता था। वह उन्हें परेशान करने से डरती थी। वह वैसे ही पिछले कुछ समय से अकसर मां को दुख दे रही थी।

अब वह मां के साथ उतने खुले दिल से बात नहीं कर सकती थी जितना बचपन में किया करती थी। पहले वह दौड़ी-दौड़ी मां के पास जाकर उसे अपने दोस्तों के बारे में बताया करती थी। जो दोस्त उसे अच्छे लगते थे, वे उसकी मां को भी अच्छे लगते

थे। यह बताना उसके लिए आसान था। पर अब... वह अलगेरी के बारे में कैसे बताये? भला वह मां को घर में अकेला छोड़कर जा सकती है? यह मां को मारने के बराबर होगा। अलगेरी एक जगह नहीं रहता। वह एक जगह से दूसरी जगह जाता रहता है।

उसका भविष्य क्या होगा? कौन बता सकता है?

पिछले कुछ समय से मां अमरा पर नज़र रखने लगी थी और उससे पूछताछ करने लगी थी: कहां थी, किसके साथ थी? पर अमरा उसे कुछ नहीं बता पाती थी।

आज देस रसोई में दुखी और उदास घूम रही थी। बेटी बिलकुल हाथ से निकली जा रही है। उसने सब तरीक़े आज़मा लिये, पर कुछ नहीं हुआ, उसकी बेटी उसके सवालों का जवाब ही नहीं देती थी। उसे कैसे क़ाबू में किया जाये? देस को कुछ सूझ नहीं रहा था। अब देस ने बेटी के साथ कुछ सख़्ती बरतने का निश्चय किया। उसने अपनी मुखमुद्रा कठोर बना ली। देस ने मां के अधिकार से काम लेने और बेटी को अपने ढंग से रखने का निश्चय किया। पर यह सख़्ती भी काम नहीं आ सकी। अमरा बिलकुल अन्तर्मुखी हो गयी। एक बार तो झल्लाकर बोल उठी:

"मैं ख़ुद समझदार हूं, मुझे अपनी क़िस्मत का फ़ैसला ख़ुद करने की इजाज़त दो। सिर्फ़ तभी मैं अपने आप को सही मायने में इनसान समझ सकूंगी!"

आख़िर बेटी के साथ क्या किया जाये? यह देखकर कि सख़्ती बरतने से भी उसके हाथ कुछ नहीं लगा, देस की हिम्मत टूटने लगी। वह समझ गयी कि बेटी उसके आगे नहीं झुकेगी बल्कि अपने मन की ही करेगी। मां और बेटी के बीच भावशून्यता पैदा हो गयी जो दोनों को दुख दे रही थी। "इससे अच्छा होता अगर वह मुझसे बहस करती रहती", देस टूटे दिल से सोचा करती। "बेटी का विश्वास खोने से तो बेहतर होगा कि मैं चुप ही रहूं।" देस बेटी से पूछताछ बंद कर हाव-भाव से यह ज़ाहिर करने लगी कि मां-बेटी के संबंधों में गर्मजोशी आ रही है। पर यह सिर्फ़ ऊपर-

ऊपर ही था। वास्तव में अमरा भी अपनी अनुभूतियां मां से छुपा रही थी और मां भी अपनी बेटी की क़िस्मत के बारे में फ़िक्र करना एक मिनट के लिए भी नहीं छोड़ती थी।

दिन का काम ख़त्म कर लेने के बाद अमरा स्कूल के आंगन में निकली। स्कूल का आंगन! कितनी चिंताएं और ख़ुशियां उसके साथ जुड़ी हुई हैं! जब वह बिलकुल छोटी थी तो यहां दौड़ते-भागते कभी थकती नहीं थी। इसी स्कूल के आंगन से वह पूरे आत्मविश्वास और गम्भीरता से स्कूल पास करनेवाली छात्रा बनकर निकली थी। सुखूमी विद्यालय की पढ़ाई ख़त्म करने के बाद वह अध्यापिका बनकर इसी आंगन से स्कूल में आयी थी।

और गांव से स्कूल तक जानेवाली सड़क! इस सड़क की कई शाखाएं स्कूल से गांव के अलग-अलग कोनों की ओर जाती हैं। गांव की सारी आबादी इस स्कूल में अपरिपक्व अवस्था में आती रही और परिपक्व, हर तरह का काम करने में सक्षम बनकर निकलती रही है।

कितनी बार वह इस रास्ते से गुज़र चुकी है!

पहली बार उसके बाबा उसका हाथ पकड़कर इस रास्ते से लाये थे। इस काम के मामले में उन्हें किसी पर भी भरोसा नहीं था। अमरा को याद है कितने गर्व के साथ वह उनके साथ आयी थी। उसने चमकदार नये जूते पहन रखे थे और सिर पर लाल फ़ीता बांध रखा था। वह बाबा के चारों ओर इस तरह उछल-कूद रही थी जैसे बसंत ऋतु में तितली पंख फड़फड़ाती उड़ती रहती है। बाबा बड़ी मुश्किल से उसका हाथ पकड़ पा रहे थे।

उस दिन से हर सुबह हरज़ामान ख़ुद उसे स्कूल छोड़ने जाता था। इसके बाद जब वह कुछ बड़ी हुई तो वह उसे आधे रास्ते तक छोड़ने जाता, फिर दरवाज़े तक और उसे जाते हुए काफ़ी देर तक खड़ा देखता रहता। बाद में अमरा अकेली ही आने-जाने लगी।

अब अध्यापिका बन जाने के बाद अमरा ख़ुद बच्चों को लेने

जाती है। उसके देखते-देखते बच्चे बड़े हो जाते हैं, अपनी शक्ति, अपना ज्ञान बढ़ाते हैं। नोवालूनिये की सारी आबादी भी यह जानती है कि इस रास्ते पर चले बग़ैर किसी की इच्छा पूरी नहीं हो सकती।

अमरा चुपचाप घर की ओर जा रही थी, रास्ता उसका इतना जान-पहचाना था कि आंखें मीचकर भी चले तो हर हालत में घर पहुँच जायेगी।

पर इस समय अमरा की घर जाने की इच्छा नहीं हो रही थी। दूसरे रास्ते उसे बुला रहे थे, अपनी दुर्बोधता और रहस्य से उसे अपनी ओर आकर्षित कर रहे थे।

जब वह अपनी मां के पास से निकल रही थी तो उसने उस पर खोज भरी नजर डाली।

"आ गयी, अमरा?" देस ने पूछा। हालांकि उसने बेटी को घर में घुसते देख लिया था।

"आ गयी," अमरा ने झिझकते हुए धीरे से ऐसे जवाब दिया जैसे मां को उसकी योजनाओं का पता चल गया हो, "मैं आ गयी हूं, पर मेरा इंतज़ार दूसरा रास्ता कर रहा है, मैं उस पर निडर होकर चली जाऊंगी। प्रियतम मेरा इंतज़ार कर रहा है..."

अमरा अपने कमरे में बंद होकर छात्रों की कॉपियां जांचने बैठ गयी। वह शब्दों को मानो छलनी में छान रही थी और उसके हाथों से वे अनाज के साफ़ दानों की तरह निकल रहे थे। आंखों में खटकनेवाले मिट्टी के कणों पर वह लाल पेंसिल से निशान लगाकर कॉपी के हाशिये पर रख रही थी। हर काम पर वह नम्बर देकर अपने दस्तख़त कर रही थी।

गांव की बत्तियां बुझे काफ़ी समय हो चुका था पर अमरा के आगे अभी भी कॉपियों का ऊंचा ढेर पड़ा था। देस अमरा का इंतज़ार न कर पायी और सो गयी।

सिर्फ़ मैं रात के सन्नाटे में उसकी खिड़की के नीचे घूमता, उसके बारे में सोच रहा था। मैंने फिर अपने लिए सारा खेल

बिगाड़ लिया... अगर अलगेरी अमरा को मेरे साथ हुई बात बता दे तो वह मेरे बारे में क्या सोचेगी? आखिर मैं खुद उसे सारी बात कब बता सकूंगा? लोग मुझे परेशान करना कब बंद करेंगे?

अमरा ने आखिरी कॉपी जांच ली पर वह उसे ढेर में रखने का निर्णय नहीं कर पा रही थी। उसे लग रहा था कि अगर उसने आखिरी कॉपी बंद कर दी तो उस काम के दरवाज़े भी बंद हो जायेंगे जो वह आज तक करती रही है। उसने कॉपी को बिना बंद किये ही मेज़ पर रख दिया।

अमरा मेज़ के पास से उठी। उसके चेहरे पर दृढ़निश्चयता झलक रही थी। वह सफ़र के लिए तैयार थी... यह रास्ता उसके लिए नया था और मंज़िल का भी उसे पता नहीं था, पर इस रास्ते से सब लोग गुज़रते आये हैं। वह यानी अमरा भी इसी रास्ते से गुज़रेगी।

अमरा ने उस परिवार को छोड़कर जाने का फ़ैसला कर लिया जिसमें वह बड़ी हुई थी। उसने स्वतन्त्र और अब तक अपने लिए अज्ञात जीवन में प्रवेश करने का निश्चय कर लिया... नये जीवन में उसे क्या मिलनेवाला है, इसका जवाब कौन दे सकता था? बस स्वयं जीवन ही। अमरा उसे अच्छी तरह समझ लेने के लिए जा रही थी।

अमरा बालकनी में निकली। उसने अंधेरे में झांककर देखा। आसमान काला था। एक भी तारा उसके रास्ते में उजाला करने नहीं निकला। आंगन से निकलकर अमरा ने राहत की एक सांस ली, जैसे उसने वह सीमा लांघ ली हो जहां उसे रोका जा सकता था, अब वह आज़ाद है।

अपने पैरों में नज़रें गड़ायी वह खाई के पास पहुंच रही थी। इस खाई के आरपार लचकीले तख़्तों का पुल बना हुआ था। दिन में भी उस पर चलना ख़तरे से ख़ाली नहीं था। वह आदमी के पैरों तले ऐसे हिलता था कि बीच में ही रुक जाना पड़ता था जिससे तख़्तों का हिलना बंद हो जाये।

मैं अमरा को फ़ौरन पहचान गया। सांस रोके मैं खाई के पास एक पेड़ के नीचे खड़ा था। इतनी रात गये अमरा कहा जा रही है? जब सब सोये हैं, तब ऐसा कौन-सा काम आ पड़ा जिस के कारण वह घर से निकलने पर मजबूर हो गयी? मैंने जब अमरा को हिलनेवाले पुल पर पैर रखते देखा तो मेरे सारे शरीर में फुरफुरी हो आयी। वह छोटे-छोटे क़दम रखती, मेरे नज़दीक आ रही थी। अब वह आधा रास्ता पार कर चुकी थी। अगर वह पुल पार करके मेरे पास से गुज़र जायेगी और मैंने उसे नहीं रोका तो इसका मतलब होगा, मैं अपनी मर्जी से उसे अलगेरी की बाँहों में सौंप दूँगा। नहीं, मुझे ऐसा नहीं होने देना चाहिए। अमरा के क़दमों की आवाज़ मेरे कानों में गूंज रही थी। और अब उसके साथ अपनी क़िस्मत बनाने की जो थोड़ी-बहुत उम्मीद थी, वह भी मेरे देखते-देखते, हाथों से निकली जा रही थी।

शू! क्या हो रहा है? कोई मेरे पास से भूत की तरह निकलकर पुल की ओर लपकता दिखाई दिया। चेतावनी देती हुई सी खांसी की दबी आवाज़ सुनाई दी।

कौन है यह?

कहीं अमरा को अपनी बांहों में थामने के लिए अलगेरी ही तो नहीं आया है?

अमरा की निगाह पैरों के नीचेवाले तख़्ते से चूक गयी और सर्कस में रस्सी पर चलनेवाले सन्तुलन खो बैठे आदमी की तरह वह लड़खड़ाकर पहले एक तरफ़ झुकी, फिर दूसरी तरफ़ और फिर जैसे तेज़ हवा का झोंका उसे लगा और वह नीचे जाती रही...

"हाय, क्या हो गया! हाय, क्या हो गया!" अमरा की तरफ़ बढ़नेवाला आदमी चिल्लाया।

मैं उसे पहचान गया। वह हरज़ामान था।

"हाय, मेरा बदक़िस्मत बुढ़ापा!" उसकी आवाज़ उसी गहरी खाई से आ रही थी जिसमें अमरा गिरी थी।

"हरज़ामान, आपने उसे ढूंढ लिया?" मैंने हरज़ामान से चिल्लाकर पूछा।

"तुम कौन हो?" हरज़ामान ने सवाल के जवाब में सवाल किया।

"मैं हूं। अलोऊ!"

"ओह, बेटा, जल्दी से हमारी मदद करो।"

मुझे अमरा के कराहने की आवाज सुनाई दे रही थी। मैं उसकी ओर लपका। मैंने अंधेरे में ही हरज़ामान को उसे हाथों में उठाये देख लिया। नीचे खाई से हरज़ामान खुद अमरा को उठाकर लाया। जब हम कगार के पास पहुंचे, मैं पलक झपकते ऊपर पहुंच गया। हरज़ामान ने कगार की दीवार से घुटना टिकाकर अमरा को मेरे हाथों में पकड़ाने के लिए हाथ ऊपर उठाये।

मैं घुटनों के बल बैठ गया जैसे भगवान द्वारा सौभाग्यवश मिली भेंट के लिए प्रार्थना कर रहा होऊँ। खाई के ऊपर झुककर मैंने हरज़ामान के हाथों से अमरा को अपने हाथों में ले लिया।

अमरा के हाथों में आते ही मानो मुझमें दुगुनी ताक़त आ गयी। मैं उसे लेकर उठ खड़ा हुआ और मेरी इच्छा हुई, सारी दुनिया हमें इस अंधेरे में देख ले।

अमरा बाज के पंजों में फंसी बटेर की तरह मेरी बांहों में पड़ी थी। उसका दिल ज़ोर-ज़ोर से धड़क रहा था, शांत रात में घड़ी की टिक-टिक की तरह। उसके बदन की गर्मी से मुझमें गर्मी आ रही थी और मेरी ताक़त बढ़ती जा रही थी। मैं पहाड़ों और नदियों को पारकर उसे दुनिया के दूसरे छोर तक ले जा सकता था। मेरे रास्ते में चाहे किसी भी तरह की रुकावट क्यों न आती, मैं उसे कभी अपने हाथों से नहीं उतारता और दूर, बहुत दूर ले जाता...

अमरा बिना कुछ बोले विश्वासपूर्वक मेरे हाथों में लेटी थी।

"इस जगह बिजली पड़े," हरज़ामान कोसता हुआ खाई की तरफ़ से आ रहा था। "यह कोई ज़मीन है, यह तो शैतान की कालकोठरी है!"

बाबा की आवाज़ सुनकर अमरा बिनती करने लगी,

"अलोऊ, हे भगवान, बाबा... ज़रा..."

"डरो मत, तुम्हें कुछ भी नहीं हुआ, अमरा!" मैंने उसे

विश्वास दिलाया, हालांकि मैं नहीं जानता था, वह किस बात के लिए विनती कर रही है।

अमरा मुझसे अपनी रक्षा करने की विनती कर रही थी, यह तो मैं समझ गया था। वह मुझसे मदद चाहती थी। जब उसके बाबा नज़दीक पहुंचे तो वह मुझे अपनी बांहों में भींचकर मुझसे चिमट गयी, मेरे कंधों में अपना सिर छुपा लिया।

मैं उसका बुरा कभी नहीं होने दूंगा, मैं उसकी हर इच्छा पूरी करूंगा, बस मेरी बांहों में उसे आराम मिलता रहे।

"तुम शायद थक गये, बेटा, इसे इसके पैरों पर खड़ा कर दो," मेरे पास पहुंचने के बाद हरज़ामान ने कहा। "खड़ी हो जा, अमरा, खड़ी हो जा, अलोऊ थक गया है।"

अमरा मुझसे और ज़ोर से चिमट गयी।

"लगता है, तेरा पैर टूट गया है?" हरज़ामान की आवाज़ कांपी। "खड़े होने की कोशिश कर..."

"नहीं हो सकती," अमरा जवाब में कराही।

"क्या हुआ है तुझे, तेरा पैर टूट गया है?" हरज़ामान ने घबराकर कहा। "मेरे पास आ," उसने उसकी ओर हाथ बढ़ाये। उसे लगा, अगर वह अमरा को अपने हाथों में उठा ले तो उसे पता लग जायेगा, पोती को कहां चोट लगी है।

"नहीं, बाबा, मुझे छोड़ दो," उसने बाबा को मना कर दिया जो उसके लिए अप्रत्याशित था। "घर ले चलो," उसने कांपती आवाज़ में कहा।

हम तेज़ी से हरज़ामान के घर की ओर चल दिये। बाबा हमारे आगे-आगे चल रहे थे मानो हमारे रास्ते से अंधेरे को भगा रहे हों।

बाईस

जब हम अमरा को उठा कर आंगन में घुसे और अंदर ले गये, बील्गा बेइन्तहा इधर-उधर भागी, रोई, कूं-कूं करती फिरी। कुतिया बिलकुल पागल-सी हो गयी थी, वह कांप रही थी, हमारे सामने पेट के बल घिसट रही थी, उछल रही थी, उछलकर दूर जाती फिर लौट आती। उसकी चीख़ बिलकुल उस मां की हृदय-द्रावक चीख़-सी थी जिसका बच्चा खो गया हो।

हां, देस भी इसी तरह चीखती हुई, सिर्फ़ कुर्ते में ही हमारी ओर भागी आयी। बेचारी देस। वह इतनी डरी, बिसरी थी कि लोगों के सामने इसी हालत में निकल आयी। जब उसे हमारी बातचीत और कुतिया के भौंकने की आवाज़ें सुनाई दीं, शायद वह सो रही थी। निस्सन्देह वह सबसे पहले भागकर अमरा के कमरे में पहुंची। वहां अपनी बेटी को न पाकर, वह सुध-बुध गंवाये हमारी तरफ़ दौड़ी। निस्सन्देह, दूसरे समय और दूसरी परिस्थितियों में कोई भी अबखाज़ियाई स्त्री कभी ऐसा नहीं करती।

"क्या? क्या हो गया? कौन है मेरा हत्यारा? मेरी बेटी कहां है?!"

"धीरे बोलो। चिल्लाओ मत, जान मत दो। अमरा यहां है। ख़तरे की कोई बात नहीं है।" हरज़ामान उसे धीरज दिलाने के लिए शांत स्वर में बोलने की कोशिश कर रहा था। उसे हर क़ीमत पर तसल्ली देना ज़रूरी था। अगर भीड़ में कोई टोपी उछाले तो हर आदमी, जिसके हाथ हैं, उसे और आगे उछाल देगा। इसलिए ऐसी हालत में आदमी कुछ नहीं कर सकता। पर जब तक टोपी आदमी के सिर पर रखी है, उसे छूने की हिम्मत कोई नहीं कर सकता। पर उसे ज़रा भीड़ में फेंककर देखिए, फिर क्या होता है। बिलकुल इसी तरह परिवार की बात परिवार में रहती है। पर आदमी अगर ख़ुद ही अपने परिवार के बारे में कोई बुरी बात कहने लगे तो दूसरे लोग बात को हज़ारों गुना बढ़ा-चढ़ाकर दूसरे लोगों को सुनाने लगेंगे। और फिर आदमी अपने मुंह से निकले शब्दों को कभी पकड़ नहीं पायेगा।

हरज़ामान यह सब अच्छी तरह समझता था और इसीलिए सबसे पहले वह अपनी पुत्रवधू को चुप कराने की कोशिश कर रहा था। हरज़ामान की शांत आवाज़ से देस को होश आया और वह खुद को सोने के कुर्ते में देखकर घबरायी कमरे में भागी। ससुर और पराये आदमियों के सामने सोने के कपड़ों में आना बड़े शर्म की बात है – तीन बार मरने के समान।

हमने अमरा को कमरे में लाकर बिस्तर पर लिटा दिया। मेरे हाथ ख़ाली हो गये और मैंने महसूस किया, अब इस घर में मेरी ज़रूरत भी नहीं रही। मैंने अपना फ़र्ज़ पूरा कर दिया था और अब मैं जा सकता था। कौन जाने, शायद ऐसे समय में वे अकेले में अपने परिवार में बातचीत करना चाहते हों, भला-बुरा सोचना चाहते हों, जैसा परिवार में होता है। मैं उनका कौन होता हूँ? जब यह दुर्घटना हुई तो मैं संयोगवश वहीं था। पर अगर स्टेशन पर संयोगवश मुझे अपने परिचित लोग मिल जायें और मैं सूटकेस उठाने में उनकी मदद करता हूँ तो इसका यह मतलब तो बिलकुल नहीं होगा कि मैं उनके घर जाऊँ और शायद वहाँ चाय भी पिऊँ या खाना खाऊँ। बिलकुल इसी तरह मैं अपनी अभी की परिस्थिति के बारे में सोच रहा था और जाने के लिए मुड़ा। पर अमरा ने उसी वक़्त आवाज़ देकर मुझे रोक दिया।

"अलोऊ, मत जाओ", जब मैं देहरी पर खड़ा था तो उसने कहा, "मत जाओ, अलोऊ।" मैं उसकी आवाज़ सुनकर मुड़ा।

"वैसे तुम्हें कहां की जल्दी हो रही है? रुक जाओ। हो सकता है, तुम्हारी मदद की ज़रूरत पड़े," हरज़ामान ने कहा।

"पैर! मेरा पैर दर्द कर रहा है!" अमरा कराही। "बहुत ज़ोर से दर्द हो रहा है। बहुत तेज़। जैसे कोई नोकदार शीशे से काट रहा हो!"

"क्या, कहाँ दर्द कर रहा है?" हरज़ामान भागकर उसके पास पहुंचा। "कहाँ हो रहा है दर्द, दिखाओ!"

देस कपड़े बदलकर फिर कमरे में आयी।

"आप मर्द लोग खड़े क्यों है?" वह हरज़ामान और मुझ पर बरस पड़ी। "मैं सोच रही थी, डाक्टर यहां आ गया होगा! क्या आप लोग बिलकुल भी नहीं समझते हैं? डाक्टर को बुलाइए!"

देस की बात ख़त्म होने से पहले ही मैं डाक्टर को बुलाने दरवाज़े के बाहर पहुंच चुका था। मैंने अल्दीज़ को जगाकर अपने आने का कारण बताया। अल्दीज़ ने जल्दी से कपड़े पहनकर गाड़ी स्टार्ट की और हम तेज़ी से भाग चले। रास्ते में अल्दीज़ ने जो कुछ हुआ, उसका पता मुझसे लगाने की कोशिश की। लेकिन असफल। भला, मैं उसे कैसे बता सकता था कि अमरा कहां और क्यों जा रही थी, कहां गिरी, कैसे गिरी। अगर अमरा चाहे तो वह भले ही खुद अपने बारे में उसे बता दे। मैं तो बाहर का आदमी हूँ। मैंने सिर्फ़ इतना ही बताया कि अमरा के पैर में चोट लग गयी है। अल्दीज़ के वहां जाने के लिए इतना ही काफ़ी है, बाद में जो हो, उसका मुझसे कोई वास्ता नहीं।

अल्दीज़ जब अमरा को देख रहा था तो उसने उससे यह नहीं पूछा कि यह कहां और कैसे हुआ। वह गिर पड़ी और उसके पैर में चोट आ गयी, कहां और कैसे गिरी – डाक्टर के लिए यह जानना ज़रूरी नहीं है। अमरा की जांच कर लेने के बाद अल्दीज़ ने कहा, घर पर इसका इलाज होना मुश्किल होगा। अस्पताल ले जाना ठीक रहेगा।

हरज़ामान और देस को अल्दीज़ का यह सुझाव अच्छा नहीं लगा। वह ऐसा क्यों चाहता है? क्या अमरा की बीमारी की ख़बर सारी दुनिया में फैलाना चाहता है। उन्हें तो लग रहा था कि ऐसी बात घर के बाहर नहीं जानी चाहिए और वह उसे अस्पताल ले जाने को कह रहा है! सब पूछने लगेंगे: अमरा अस्पताल

कैसे पहुंची, उसे क्या हुआ, कहां से गिरी, रात को जंगल मे क्यों गयी।

"प्यारे अल्दीज़... तुम तो देख ही रहे हो, अमरा के पैर में अचानक मोच आ गयी, घूमते हुए पैर फिसल गया... तुम ज़रा रहम करो, किसी तरह... जिससे कि कोई न जाने", हरजामान उसे कातर स्वर में मनाने लगा।

देस ने दृढ़निश्चय के साथ कहा,

"इसके साथ ऐसा क्या हुआ है जो इसे अस्पताल ले जाना ज़रूरी हो गया? सीधे-सादे मामले को क्यों उलझाया जाये?"

"इसे कुछ नहीं हुआ है और मैं कुछ भी उलझा नहीं रहा हूँ। सीधी-सी बात है, इसके लिए अस्पताल में रहना बेहतर होगा, वहाँ जल्दी ठीक हो जायेगी। बेशक यह बात अच्छी तो नहीं लगती पर इसकी सेहत ज़्यादा मायने रखती है।"

अमरा ने अचानक अल्दीज़ की बात मान ली। वह भी कहीं जाना नहीं चाहती थी। लेकिन पैर का दर्द बढ़ता ही जा रहा था। जब तक हरजामान और देस डाक्टर से बहस कर रहे थे, वह बड़ी मुश्किल से अपनी चीख रोके थी।

देखिये, जिंदगी कैसा मोड़ लेती है। अमरा कहाँ जा रही थी, कहां जाने की तैयारी कर रही थी, किस की तैयारी कर रही थी और कहां जा पहुंची? क़िस्मत कभी कंक्रीट के खंड जैसी हो जाती है जिसे न रास्ते से हटाया जा सकता है और न ही गोलियों से उसका कुछ बिगाड़ा जा सकता है, कभी बारीक धागे, एक बाल से लटकी रहती है जो हवा के हल्के-से झोंके से भी टूट सकता है।

अमरा इस समय उस खास कमरे के कोने में बैठी होती जहां दुलहन को शादी से पहले बैठाया जाता है। उसकी सहेलियां दरवाज़े की दरार से देख-देखकर उससे डाह करतीं, अपनी क़िस्मत के बारे में सोच-सोचकर आहें भरतीं कि उनकी बारी आखिर कब आयेगी। अमरा शादी के हल्के-फुल्के, लटकनवाले सफ़ेद कपड़े पहने खड़ी होती।

और अब उसे अस्पताल के रंग उड़े कपड़े पहनने पड़ेंगे, पहले बिना हिलेडुले पलंग पर लेटा रहना पड़ेगा और उसके बाद अस्पताल के उबा देनेवाले गलियारों में घूमना होगा।

जब अमरा खुद अल्दीज़ से सहमत हो गयी, बहस करना फ़िज़ूल हो गया। वैसे हरजामान ने मेरी राय भी पूछी। मैंने भी उसे अस्पताल ले जाने की सलाह दी।

हम सब लोग अमरा को अस्पताल छोड़ने गये। पर जब उसे अस्पताल की इमारत के अंदर ले जाने लगे तो केवल अल्दीज़ और देस को ही अन्दर जाने दिया गया। तो डाक्टर और मां ही हैं जिन्हें मरीज़ के पास रहने की इजाज़त दी जाती है। हरजामान और मुझको बड़ी बेदिली से बाहर ही छोड़ दिया गया। हम लोगों ने बहस नहीं की। इसका मतलब है, उनके नियम ही ऐसे हैं। हम बाहर खड़े थे और समझ नहीं पा रहे थे, अब क्या करें: घर जायें या थोड़ी देर इंतज़ार करें। पर किस का? मेरे और हरजामान के बीच कष्टदायक चुप्पी छा गयी। हम एक-दूसरे के पास बैठे थे पर अलग-अलग दिशा में देख रहे थे। अचानक अल्दीज़ बाहर निकला। उसने दूर से ही गाड़ी की चाबियां मेरी ओर फेंकीं। इसमें कोई शक नहीं है कि मुझे पाठकों से इस बात के लिए माफ़ी मांगनी चाहिए कि मैंने उन्हें अब तक यह नहीं बताया कि मुझे गाड़ी चलानी आती है, पर आप खुद भी जानते हैं, कितनी तरह-तरह की घटनाएं घटीं।

"जल्दी से अमतोन को ले आओ।"

मैं अल्दीज़ की बात पूरी सुने बिना ही गाड़ी की तरफ़ लपका।

"अमतोन हड्डी बैठानेवाले को, तुम समझ गये?"

अजीब आदमी है, बता रहा है, कौन से अमतोन को लेकर आना है, जैसे मैं खुद नहीं समझ सकता कि अगर किसी आदमी के पैर में चोट आ जाये तो हड्डी बैठानेवाले की ज़रूरत पड़ती है, और किसी की नहीं। हरजामान को कुछ आश्चर्य हुआ और उसने दुबारा पूछा कि उसने ठीक से सुना या नहीं। पर अल्दीज़ फिर अस्पताल के अंदर जा चुका था। मुझे इस बात पर बिलकुल भी

आश्चर्य नहीं हुआ कि अमतोन हड्डी बैठानेवाले की ज़रूरत पड़ी, पर मुझे देर से ध्यान में आयी बात पर अफ़सोस हो रहा था: अगर हर सूरत में गांव के हड्डी बैठानेवाले को ही लेने जाना था, तो अमरा को अस्पताल लाना ज़रूरी नहीं था। हड्डी बैठानेवाले को घर भी लाया जा सकता था।

इसके अलावा मैंने यह भी सोचा कि या तो अमरा का पैर टूट गया है या उसमें मोच आ गयी है। बेचारी, बस इस दुर्घटना के बाद लंगड़ी न हो।

इस बीच मैंने कार स्टार्ट कर ली। मैं क्या अब तक उस लड़के की तरह रहा हूं जिसे जिसका जी जहां चाहे, वहां भेज दे। कभी पड़ोसी, और अब यह अल्दीज़ – मैं जैसे भागा-भागा सबके काम करता रहा हूँ। पर मैं यह समझता हूँ कि इसमें उनकी कोई ग़लती नहीं है। लगता है, मैंने खुद ही अपने को ऐसा बना लिया है कि हर कोई मुझे अपनी मदद करनेवाला समझ लेता है।

इस तरह मैं अमतोन के यहां जा रहा था। यह अमतोन काफ़ी बूढ़ा अबखाज़ियाई है। लोगों का कहना है कि वह एक सौ पन्द्रह साल का है। और अपनी इस लंबी जिन्दगी में वह हड्डी बैठाना इतनी अच्छी तरह सीख गया है कि उसके मुक़ाबले में यह काम और कोई नहीं कर सकता। अपनी मदद के बदले में वह कभी पैसे नहीं लेता पर उसकी प्रसिद्धि सारे अबखाज़िया में फैली हुई है। उसके पास केवल वे ही बीमार नहीं आते जिनके हाथ या पैर में चोट आयी हो, बल्कि इस ज़िले के डाक्टर भी पेचीदा से पेचीदा मामले में उसे बुलवाते हैं। इसमें कोई शक नहीं कि डाक्टर ज्यादा जानते हैं, उन लोगों ने पढ़ाई की है। पर टूटी हुई हड्डियां, मोच आये हुए जोड़ – ऐसे मामले हैं जिनमें केवल ज्ञान की ही नहीं, अभ्यास, दक्षता, संक्षेप में अनुभव की भी ज़रूरत पड़ती है, जो अमतोन ने अपने एक सौ पन्द्रह सालों में काफ़ी इकट्ठा कर लिया है।

और सिर्फ़ ज़िले के डाक्टर ही नहीं। एक बार एक अजीब

घटना हुई। त्बिलिसी में एक अत्यन्त सम्माननीय महिला का पैर अचानक टूट गया। क्या उसे उसी दिन और उसी समय हर संभव मदद नहीं पहुंचाई गयी? सारे डाक्टर वहां खड़े कर दिये गये। पैर की हड्डी बैठाकर प्लास्टर चढ़ा दिया गया। पर लग रहा था डाक्टरों से कुछ कसर रह गयी थी। समय बीता जा रहा था पर दर्द कम होने का नाम ही नहीं लेता। कहते हैं, मरीज़ अपनी बीमारी को ज्यादा अच्छी तरह महसूस करता है। यह बात सच निकली। जिस औरत का पैर टूटा था, उसने सुना कि अबखाज़िया में एक मशहूर हड्डी बैठानेवाला रहता है और उसने मांग की कि उसे उसके पास लाया जाये।

डाक्टरों को मरीज़ की मांग पर हैरानी हुई और बुरा भी लगा। और बुरा लगने का कारण भी था: अगर वे यानी चिकित्सा-शास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान कुछ नहीं कर पाये तो वह एक सौ पन्द्रह वर्ष का अबखाज़ियाई जो शायद बहरा भी होगा, क्या कर लेगा। डाक्टर तो किसी हड्डी बैठानेवाले के बारे में सुनने के लिए भी तैयार नहीं थे, पर मरीज़ ज़ोर देती रही और उन्हें मानना पड़ा।

जब अमतोन अस्पताल में सफ़ेद चोग़ा पहने दिखाई दिया तो सब एक दूसरे की तरफ़ देखने और कानाफूसी करने लगे। उसे सफ़ेद चोग़ा फ़ौरन वहीं दिया गया। उसके घर पर इस तरह का कोई चोग़ा नहीं था। वृद्ध अपने एक सौ पन्द्रह वर्ष की अबखाज़ियाई शान के साथ गलियारे में जा रहा था। वह सीधा तनकर हल्के-हल्के क़दमों से चल रहा था। बुढ़ापे की निशानी के तौर पर उसके छोटी-सी दाढ़ी थी। वह उसके सुन्दर मर्दाने चेहरे को नहीं छिपा रही थी। अगर मर्दों को सुंदरता और गरिमा के लिए अकादमी की उपाधि प्रदान की जाये तो इसमें कोई शक नहीं कि अमतोन अकादमी के सबसे पहले सदस्यों में से होता।

अनजानी परिस्थितियों में अमतोन घबराया नहीं। अस्पताल में वह इतने आत्मविश्वास और खुले ढंग से पेश आ रहा था कि डाक्टरों को शक होने लगा, कहीं अकादमी का कोई सदस्य उनका काम देखने तो नहीं आ पहुंचा है। पर जब अमतोन सब से दुआ-

सलाम करने लगा और उसने हाथ उठाया तो उसका सफ़ेद चोग़ा खुल गया और सबने देखा, वह अरख़ालूक़ और ग़ाज़ीर के साथ चिरक़ासियाई कोट पहने हुए है। और उसकी कमर में चांदी की चमचमाती म्यान लटकी है। तब सारे शक दूर हो गये।

अमतोन ने अबख़ाज़ियाई रिवाज के अनुसार अपने चारों ओर खड़े हर आदमी के पास जाकर उसका अभिवादन किया। हर एक से उसने उसका हाल पूछा, स्वास्थ्य और परिवार के बारे में पूछा और हर एक को शुभकामनाएं दीं। सिर्फ़ इसके बाद ही उसने पूछा कि मरीज़ कहां है।

मैं नहीं जानता, इसके बाद क्या हुआ और अमतोन ने टूटे पैर का क्या किया। अगर हर कोई जानता कि क्या करना चाहिए तो फिर अमतोन को अबख़ाज़िया के गांव से त्बिलिसी लाने की जरूरत ही नहीं पड़ती। बस इतना ही कह सकता हूँ कि उसने पैर ठीक कर दिया। ठीक होनेवाली महिला अपने आप को अमतोन के ख़ानदान का आदमी मानने लग गयी।

इस वक़्त मैं इसी अमतोन के यहां अल्दीज़ की कार में जा रहा था। वह मुझे घर पर ही मिल गया। आधी रात गये वह कहां जा सकता था। मैंने उसे संक्षेप में सारा क़िस्सा सुनाया।

"यह कब हुआ, बेटा? पैर टूट गया है या उसमें मोच आयी है?"

"मुझे कुछ मालूम नहीं। मुझे आपको लेने भेजा गया है और मैं आपके यहां आ पहुंचा हूँ।"

"हां, हां, भला तुम्हें कैसे मालूम हो सकता है", अमतोन ने चलने की तैयारी करते हुए कहा।

इसी बीच मेज पर अंगूर की विशुद्ध वोदका की एक बोतल और एक बड़ी तश्तरी में चूर्चख़ेली रख दिये गये थे। अमतोन ने एक पेग अपने लिए भरा और दूसरा मेरे लिए।

"हमारी यात्रा सफल हो। सब ठीक हो जाये।"

अमतोन ने अपना पेग ख़ाली कर दिया पर मैंने अपना छोड़ दिया।

"तुम क्यों नहीं पी रहे हो?"

"मेरे लिए पीना मना है। क्योंकि मैं गाड़ी चलाऊंगा।"

"ओह, बेटा! तुम्हारी ये गाड़ियां तुम्हें जिंदगी के बहुत से मज़े नहीं उठाने देतीं। भला ऐसा हो सकता है कि आदमी गाड़ी में हो तो एक बूंद भी न पिये।"

"हां, मना है।"

"यह कोई अच्छी बात है? गाड़ियों की ख़ातिर आप लोगों ने अबख़ाज़ियाई घोड़ों की उपेक्षा की। पर क्या गाड़ी का घोड़े से मुक़ाबला किया जा सकता है? घोड़ा – असली मर्दानगी का नाम है। मर्दानी सवारी है। इसके अलावा अगर थोड़ी-सी वोदका पीकर घोड़े पर सवार होकर फाटक से बाहर निकलो तो घोड़ा भी तुम्हारे इशारे पर नाच उठता है, तुम्हारी आत्मा भी। घोड़ा असली घुड़सवार को पहचान लेता है। पर तुम्हारी गाड़ी पहचान सकती है? नहीं। लोहा, लोहा ही होता है।"

"वह घोड़ा है और यह गाड़ी है।"

"इसीलिए तो मैं कह रहा हूँ। ठीक है, अगर नहीं पीना चाहते तो मत पियो। चलो।"

हरज़ामान हमें अस्पताल के दरवाजे के पास मिला। अमतोन को देखते ही वह जैसे रोने-रोने को हो गया।

"अगर वह लंगड़ी हो गयी तो क्या होगा, अमतोन? मुझे उसका बड़ा अफ़सोस होता है। आख़िर लड़की है, सुंदर है।"

"शायद, ख़तरे की कोई बात नहीं है", अमतोन ने अनिश्चित-सा जवाब दिया। वह विश्वास के साथ कुछ कह भी नहीं सकता था, क्योंकि उसने अभी बीमार को नहीं देखा था।

हरज़ामान उस बच्चे की तरह फ़ौरन चुप हो गया जिसे पूरी बात कह पाने से पहले ही टोककर समझदार बनाने के लिए कहा जाता है। मैं गाड़ी के शीशे नीचे करके उसमें बैठा रहा। मैं देख रहा था, हरज़ामान को बिलकुल भी चैन नहीं था। कभी वह सीने पर हाथ रखकर खड़ा रहता, कभी अस्पताल के पोर्च से बाहर निकल जाता, कभी वापस आ जाता। इस तरह काफ़ी समय निकल

गया, पर हमें कोई खबर नहीं मिली। अंत में अल्दीज़ बाहर निकला। हरज़ामान जल्दी से उसकी ओर लपका और गाड़ी से निकलकर, मैं भी।

"शाबाश, अमतोन", अल्दीज़ ने थके हुए स्वर में कहा "अमरा को फ़ौरन चैन आ गया और अब वह सो रही है।"

"यानी अब कोई खतरा नहीं रहा?"

"नहीं। कौन-सा खतरा? अमतोन ने सब ठीक बैठा दिया।"

हम एक ही गाड़ी में गांव वापस लौट रहे थे। हम सब चुप बैठे थे, लगता था, सब अपने-अपने ख़यालों में खोये हुए थे। अब हम उन घड़ों की तरह थे जिन में पानी सूख चुका हो। पर ऐसा केवल लग ही रहा था। हम में से हर एक अपने ही विचारों, अनुभवों और अनुभूतियों में खोया हुआ था। एक आदमी बैठा है पर हम नहीं देख सकते, उसके मन में क्या है। पर वास्तव में आदमी के वज़न के मुक़ाबले अनुभूतियों का वज़न कहीं ज़्यादा होता है।

हम ग्राम सोवियत के सामने से गुज़र रहे थे, अल्दीज ने गाड़ी रोक दी।

"चलिए, चलकर देखें, अस्पताल का काम कैसा हो रहा है।"

हम सब कार से निकलकर देखने गये। ग्राम सोवियत की इमारत से लगी ही अस्पताल की नयी इमारत का निर्माण कार्य चल रहा था। छत रखी जा चुकी थी। अल्दीज़ हमें वे कमरे दिखा रहा था जिनमें फ़र्श बन चुका था। वह हम लोगों को बता रहा था कि ज़नाना, मर्दाना और बच्चों के वार्ड कहां होंगे, प्रसूति गृह कहां होगा। हम सब बड़े खुश और उत्साहित हो रहे थे, पर हरज़ामान ने कहा,

"अस्पताल अच्छा बन रहा है, पर भगवान करे, हम में से किसी को भी इस में रहना न पड़े।"

"यह तो है ही है। फिर भी अगर कुछ हो जाये तो शहर जाने की ज़रूरत नहीं पड़ेगी। यह बहुत अच्छा होगा।"

"यहां एक्स-रे होगा," अल्दीज ने एक विशाल कमरे की ओर इशारा करते हुए कहा।

"यह क्या होता है?" हरज़ामान ने रुचि दिखाई।

"आदमी को उसके आगे खड़ा करके देखा जा सकता है उसके अंदर क्या है।"

हरज़ामान चौकन्ना हो उठा।

"कैसे? आदमी के अंदर क्या है, सब देख सकते हो? क्या सचमुच सब कुछ दिखाई देता है?"

"बेशक। इसीलिए तो इसे एक्स-रे कहते हैं," अल्दीज़ ने सीधे-सादे ढंग से जवाब दिया।

"जो कुछ तुम कहते थे, मैं हमेशा मानता था, बेटा। पर इस पर मैं विश्वास नहीं कर सकता।"

"अस्पताल बनकर तैयार हो जाये, तब आपको दिखा दूंगा, हरज़ामान। और आपका एक्स-रे भी कर लेंगे।"

"ओह! अगर आदमी के भीतर जो है वह सारा देख लें तो शायद ज़िंदगी का ढर्रा ही बदल जाये। मालूम नहीं, इससे अच्छा होगा या बुरा, मैं कुछ नहीं कह सकता, पर जो भी हो, अगर तुम्हारा कहना सच होता तो ज़िंदगी ही कुछ दूसरी तरह की होती।"

"एक्स-रे इसीलिए तो है," अल्दीज़ बिना यह समझे कि हरज़ामान कुछ और ही कह रहा है, अपनी ही बात कहता रहा।

"तुम क्या कह रहे हो, अल्दीज। अगर तुम्हारे एक्स-रे से देखा जाये तो इसमें कोई शक नहीं कि वह दिल, फेफड़े तथा दूसरी बीमारियां भी दिखा देगा। पर क्या आदमी के दूसरे रोग, उसकी कमज़ोरियां, उसके दोष देखे जा सकते हैं? तुम कौन-से एक्स-रे से उन्हें देख सकोगे, बेटा। अभी ऐसे एक्स-रे का आविष्कार नहीं हुआ है।"

"यह लो। मैं आप को वास्तविक बीमारियों के बारे में बता रहा हूं, और आप ..."

"पता नहीं, कौन-सी वास्तविक है। प्रकट बीमारी वह है जिसे तुम अपने एक्स-रे से देख सकते हो या वह जो इस तरह से छिपी हुई है कि खुद आदमी भी उसके बारे में नहीं जानता। और अगर जानते हुए भी कोई उसे छुपाये तो उसका पता लगाना

और भी ज़्यादा मुश्किल होगा। क्योंकि यह तो मालूम नहीं होता कि वह शरीर के कौन से हिस्से में छिपी है। मिसाल के तौर पर लालच और कायरता को ही लो। एक और भी बीमारी है जो आम तौर पर सभी लोगों को होती है। वह दुनिया के सभी लोगों की नींद हराम कर देती है, अगर उसका इलाज कर सको..."

"आप हमारे गांव के अस्पताल से बहुत ज़्यादा आशा कर रहे हैं," अल्दीज हंस पड़ा।

"और मैं भी यही कह रहा हूं।"

अल्दीज ने चौराहे पर गाड़ी रोककर हमें उतार दिया। हरज़ामान अपने घर चला गया और मैं फ़ार्म पर अपना काम करने।

यह बड़ी हैरानी की बात थी कि सारी रात मेरी आंख नहीं लगी और मुझे सोने की इच्छा नहीं हुई। मैं चलते-चलते जो कुछ हुआ उसके बारे में सोच रहा था। वैसे हम सब होनेवाली घटना का असली कारण अपने मन में जानते हैं। पर हम सब बहाना ऐसा बनाते हैं जैसे कुछ हुआ ही न हो। हो सकता है, यह ठीक हो? क्योंकि अगर हमारे मुंह से एक शब्द भी निकल जाये तो हर हालत में बात सारी दुनिया में फैल जायेगी और फिर हम उसे रोक नहीं पायेंगे। अमरा की बदक़िस्मती में बस एक और अफ़वाह की कमी रह गयी थी। बेचारी अमरा। थोड़े समय में कितनी मुसीबतें आ पड़ीं।

अचानक पगडंडी पर अलगेरी दिखाई दिया। वह मेरी ओर सिर झुकाये, पिटे मुर्ग़े-सा चला आ रहा था जो किसी और के बाड़े में घुस गया हो। लगता था, उसे किसी चीज़ में रुचि नहीं।

अभी तक मैं उससे मिलना बहुत चाह रहा था, उससे मुलाक़ात का बेताबी से इंतज़ार कर रहा था। पर जब उससे मिलना अवश्यंभावी हो गया, तो मुझे बुरा लगने लगा, मैं सोचने लगा था क्यों न पासवाली पगडंडी पर मुड़ जाऊं, पर इसका समय ही नहीं मिला। जब हम एक दूसरे के बराबर पहुंचे तो मैं ही पहले बोला:

"हो! लगता है, तुम ज़िंदा और तंदुरुस्त हो?"

"और तुम्हें क्या मेरे मरने की ख़बर मिली थी?"

"वही तो नहीं भेजी गयी, मैं भी हैरान हो रहा था कि इसका मतलब क्या हो सकता है, कोई ख़बर ही नहीं मिल रही है।"

"साफ़-साफ़ कहो, तुम मुझसे क्या चाहते हो?"

"मैं जानना चाहता हूं, तुम कहां थे।"

"तुम्हें यह पता लगाने का काम किसने सौंपा है कि मैं कहां रहता हूं, क्या करता हूं?"

"मेरी आत्मा ने।"

"कितने ईमानदार हो। हर वक़्त अपना यही राग अलापना बंद करो!"

"नहीं करूंगा। मेरा अन्तःकरण मुझे चुप रहने को नहीं कहता।"

"अन्तःकरण। अन्तःकरण। साफ़-साफ़ कहो, तुम्हें क्या चाहिए?"

"तुम अमरा के पास क्यों नहीं आये?! तुम कहां थे?"

"तुम्हें क्या मतलब?"

"मैं पूछ रहा हूं, न कि तुम।"

"तब मैं तुमसे पूछता हूं: तुम कहां थे, अलोऊ?"

हम मुर्ग़ों की तरह एक दूसरे के सामने डटे थे और एक-दूसरे को गालियां दे रहे थे।

"नहीं, पर तुम कहां थे?"

"नहीं, तुम बताओ। मैं सारी रात तुम्हें ढूंढ़ता रहा, मेरे पैर भी दुखने लगे। आख़िर तुम थे कहां?"

मेरी सहनशक्ति ख़त्म हो गयी और मैं बरस पड़ा,

"अमरा के पास था, अगर जानना ही चाहते हो।"

"हां। बस यही तो मैं जानना चाहता था। मेरे लिए इतना ही काफ़ी है।"

"मैं पूछता हूं, तुम क्यों नहीं आये?"

"आख़िर तुम तो थे उसके साथ। मैं इसीलिए नहीं आया कि तुम लोगों को परेशान नहीं करना चाहता था। क्योंकि मैं फ़ालतू होता।"

"अमरा तुम्हारा इंतज़ार कर रही थी। आख़िर तुम क्यों नहीं आये?"

"थी तुम्हारे साथ और इंतज़ार मेरा कर रही थी। बड़ी दिलचस्प बात है।"

"ख़ैर ठीक है। बहुत हो चुका, अलगेरी। तुम्हें यह भी मालूम नहीं कि तुम्हारी वजह से वह मरते-मरते बची है।"

"कैसे? तुम यह क्या कह रहे हो?"

"हां। अंधेरी रात में वह तुमसे मिलने जा रही थी कि पुल पर से खाई में गिर पड़ी। और अब वह अस्पताल में है।"

"पर यह तो संयोग था। मेरी वजह से नहीं हुआ। पुल पर से तो वह कभी भी गिर सकती थी।"

"पर उसकी बेइज़्ज़ती हो गयी।"

"क्यों? कोई भी नहीं जानता, वह कहां जा रही थी। बस उसका पैर ठीक हो जाये, फिर तुम्हारी शादी हो जायेगी। तुम्हारे सुख की कामना करता हूं।"

यह कहकर अलगेरी मुड़ा और पीछे देखे बिना चला गया।

"बेशर्म!" मैं उसके पीछे से चिल्लाया। इस क्षण जो कुछ मैं सोच रहा था, कहे बिना नहीं रह सका: "बेशर्म!" मैंने एक बार फिर अपने मन में कहा क्योंकि अलगेरी दूर जा चुका था।

बेचारी अमरा ने कैसे आदमी को प्यार किया! कितनी अंधी हो गयी थी वह! इस नीच आत्मा को ठीक से नहीं पहचान सकी। हरज़ामान की बात ठीक थी। किसी तरह का एकस-रे पता नहीं लगा सकता, आदमी के दिल और दिमाग में क्या है, कैसा आदमी है! जब मैं मन-ही-मन अलगेरी को कई गालियां दे चुका मुझे कुछ राहत-सी मिली। मैं पगडंडी के सहारे पहाड़ की ओर अपने रास्ते चल पड़ा।

अलगेरी खोया-खोया सा घूम रहा था, कभी चट्टान से मैदान की ओर, कभी वहां से फिर चट्टान की ओर। उसके क़दम ठीक से नहीं पड़ रहे थे। मानो उसने अभी-अभी चलना सीखा हो। वह अपने विचारों में तारतम्य बैठाना चाहता था, पर अपने को असमर्थ पाता था। वह स्वयं से पूछ रहा था, क्या करना चाहिए पर बेकार। अभी कुछ दिन पहले तक वह जवान, ताक़तवर और आत्मविश्वासी अलगेरी था। वह जानता था, अमरा को प्यार करता है। उसने उसे अपनी पत्नी बनाने का निश्चय किया था और उससे चट्टान के पास मिलना तय किया था। यहां से वे दोनों हमेशा-हमेशा के लिये साथ जानेवाले थे। पर इन दिनों न जाने क्या-क्या हो गया? अलगेरी अब पहले जैसा क्यों नहीं लगता? क्यों उसकी निगाहें खोयी-खोयी हैं, विचार अस्त-व्यस्त हैं, दिल में अरुचिकर निःसारता है? मानो उसके दिल की जगह किसी पराये आदमी का दिल लगा दिया गया हो जिसमें अरुचिकर निःसारता और उलझनें हों। कल उसका अमरा से मिलना पूरी तरह तय हो चुका था। मिलने के बाद उन्हें नीचे गांव में उतरना था। और उसके बाद... अलगेरी के साथ आखिर ऐसा क्या हुआ जो वह अमरा से मिलने नहीं आया? वह आयी थी, शायद आयी होगी, पर वह नहीं पहुंचा। वह इंतज़ार करती रही और समझ गयी होगी कि उसे धोखा दिया गया, उसका अपमान किया गया, नीचा दिखा दिया गया। और मालूम नहीं अब वह इस वक़्त कहां है, उसके साथ क्या गुज़र रही है। अलगेरी इस तरह का लज्जास्पद नालायकी का काम कैसे कर सका? अब वह किन आंखों से अमरा से आंखें मिला सकेगा? खुद को निर्दोष सिद्ध करने के लिये क्या कहेगा? क्या इस तरह की हरकत का औचित्य सारी दुनिया में कहीं मिल सकेगा? इस तरह की हरकत की उम्मीद किसी बच्चे से की जा सकती थी, पर उस मर्द से नहीं जिसने लड़की की इज़्ज़त की जिम्मेदारी उठायी हो। पता नहीं कैसे यह सब तीन दिन में ही हो गया... नहीं, कैसे तीन दिन, एक घंटे में, एक पल में पासा पलट गया।

शायद, इसके विपरीत, सब ठीक ही हुआ हो? अलगेरी खोया-खोया-सा चट्टान से मैदान की ओर जाते हुए याद कर रहा था कि यह सब शुरू कैसे हुआ, अंत क्या हुआ।

तीन दिन पहले वह सुखूमी में समुद्र के किनारे अकेला जा रहा था। शहर की सड़क पर कम लोग थे। काम का दिन खत्म हो चुका था। लोग घर जा चुके थे। उस समय वे आराम से खाना खा रहे थे। बस खाना खाते ही वे ताजा हवा में सांस लेने, घूमने, आराम करने बाहर निकल आयेंगे। पर अलगेरी तो दूसरे लोगों के बारे में सोच ही नहीं रहा था। क्योंकि वह अपने खयालों और सपनों में डूबा उसी चट्टान के पास था, जहां उसने अमरा से मिलना तय किया था। यह अंतिम और निर्णायक मिलन था। अमरा अलगेरी की पत्नी बन जायेगी, घर पर उसका इंतज़ार किया करेगी, खाना बनाया करेगी, उसका आलिंगन किया करेगी। ये तीन दिन अलगेरी को लंबे लग रहे थे, अब तक की उसकी जिंदगी से भी कहीं ज्यादा लंबे लग रहे थे। वे उसे अंतहीन-से लग रहे थे और अलगेरी सोच भी नहीं पा रहा था कि वह उन्हें काट पायेगा या नहीं।

सड़कों पर लोग कम थे। पर अगर वे ज्यादा भी होते और लोगों की भीड़ ने अलगेरी को तंग घेरे में डाल भी लिया होता तो उनकी ओर वह कोई ध्यान नहीं देता। इसके इन सपनों, मधुर विचारों के बीच कभी-कभी लहरों के छपाके, हंसी, गीतों के टुकड़े, पत्तों की सरसराहट भी उसकी चेतना तक पहुंच जाती।

इन आवाजों के साथ-साथ उसे कहीं दूर से एक आवाज आती सुनाई दी जिसने अलगेरी को रुकने और मुड़कर देखने के लिए मजबूर कर दिया। उसे लगा किसी ने उसका नाम लेकर पुकारा है। कोई प्यार से उसके कान में फ़ुसफ़ुसाया: "अलगेरी"! अलगेरी ने मुड़कर देखा, पर उसे कोई जानी-पहचानी सूरत नज़र नहीं आई। वह आगे बढ़ा और फिर उसे अपना नाम सुनाई दिया। यह क्या जादू है, चारों ओर न कोई दोस्त है, न कोई जाना-पहचाना है, पर फिर भी कोई उसे पुकार रहा है। उसने देखा छरहरे बदन

की एक युवती सचमुच तेज़ी से, उड़ती हुई सी, उसके पीछे-पीछे चली आ रही है। पर वह भी अलगेरी की परिचिता नहीं। फिर अलगेरी को उससे या उसे अलगेरी से क्या वास्ता।

अलगेरी आगे बढ़ गया पर उसी वक़्त उसने फिर किसी को अपना नाम पुकारते सुना। आवाज़ कहां से आयी? आखिर वह आदमी पेड़ पर तो नहीं बैठा? आवाज उसे बहुत पहले की जानी-पहचानी किसी ऐसे आदमी की लगी जो उसके बहुत निकट रह चुका हो। यह आवाज कभी सुनी थी, लेकिन कब। जल्दी से जल्दी याद आ जानी चाहिए। शायद उसने यह आवाज सपने में सुनी थी या बहुत पहले बचपन में? थोड़ी देर और, पेट में है, बस पल भर में ज़बान पर आ जायेगा। कहते हैं, अगर चोन्गूर* के एक तार को छेड़ा जाये तो उसके आस-पास के बाक़ी तार भी पहले तार के कंपनों के कारण बज उठते हैं। अलगेरी के दिल में भी ऐसा ही हुआ। इस आवाज़ से उसके दिल के बहुत दिनों से निस्पंद पड़े तार बज उठे और उनका स्वर लगातार तेज़ होता गया।

"अलगेरी। क्या तुमने सुना नहीं? पांच बार तुम्हें आवाज़ दे चुकी हूं। तुम इतनी तेज़ी से चल रहे हो कि मैं तुम तक पहुंच ही नहीं पा रही थी। आखिर सारे शहर में तुम्हारे पीछे तो भागूंगी नहीं।"

अलगेरी ने मुड़कर देखा, वही लड़की थी जो उसके पीछे-पीछे उड़ती-सी चली आ रही थी, पर जो पहली बार देखने पर उसे अपरिचिता लगी थी। अलगेरी सड़क पर रुककर उसके बोलने की प्रतीक्षा करने लगा।

---

*चोन्गूर – एक प्रकार का वाद्ययंत्र।

"तुमने मुझे पहचाना नहीं क्या ?" लड़की ने बिलकुल पास आकर घबराते हुए पूछा। उसकी आवाज़ में उलझन झलक रही थी। उसमें नाराजगी थी और विनती भी। अगर अलगेरी ने जल्दी से जल्दी उसे पहचान नहीं लिया तो उसकी बड़ी भद्द हो जायेगी।

"मैं ... तुम्हें ... क्या नाम ... अरे, भूल गया ... अभी ... मैं अभी बताता हूँ।"

जैसे-जैसे अलगेरी यह शब्द बोलता गया, उसके चेहरे पर खुशी की चमक बढ़ती गयी। ज़ाहिर था, वह लड़की को फ़ौरन पहचान गया। क्या वह वास्तव में उसका नाम भूल गया था?

"हाँ, मैं त्सीत्सिना ही हूँ। त्सीत्सिना चानवा। क्या भूल गये ?"

"नहीं, तुम त्सित्सिना नहीं हो, मैं अभी याद करता हूँ", अलगेरी और ज्यादा खुशी से मुस्कराया।

"तुम क्यों कह रहे हो कि मैं त्सीत्सिना नहीं हूँ, मैं त्सीत्सिना हूं!" लड़की हस पड़ी।

"नहीं, नहीं, मैं कह रहा हूं, नहीं।"

"कौन ज्यादा अच्छी तरह जानता है कि मेरा नाम क्या है, तुम या मैं? अरे, सनकी, मैं कह रही हूं न, मेरा नाम त्सीत्सि-ना है।"

"लोमशी! यही है तुम्हारा नाम! बड़ी मुश्किल से याद आया, तुम लोमशी ही हो। मैं भूल कैसे गया?! पर लोमशी ही क्यों? इसलिए कि तुम उतनी ही नरम, उतनी ही नाज़ुक, उतनी ही कोमल हो।"

"अलगेरी! तुम हमारे बचपन का खेल अभी तक नहीं भूला, मैं तो सोच रही थी, तुम यह क्या याद करने की कोशिश कर रहे हो। पर अब बचपन बीत चुका है। मैं अब त्सीत्सिना हूँ क्योंकि अब हल्की नहीं रही ..."

"नहीं, लोमशी।"

"त्सीत्सिना, क्योंकि ..." आगे लड़की को कहना पड़ता: "क्योंकि अब कोमल नहीं रही इसलिए," वह शर्माकर चुप हो गयी।

"लोमशी, लोमशी, लोमशी," अलगेरी उसे ऐसे चिढ़ाने लगा जैसे बचपन में चिढ़ाता था।"

दोनों हंस पड़े।

और इस तरह संयोग से भी मुलाक़ातें हो जाती हैं! पर अलगेरी को इस वक्त यह नहीं लगा कि त्सीत्सिना से उसकी मुला-क़ात संयोगवश हुई है। जितना ज्यादा वह त्सीत्सिना की ओर देखता, उतना ही ज्यादा स्पष्ट उसे महसूस होता जा रहा था कि अब तक उसकी ज़िंदगी के बीते सारे साल, उसका जीवनपथ टेढ़ा-मेढ़ा रहा था पर उसने इस क्षण उसे सही रास्ते पर ला पहुंचाया था। कितना अजीब लग रहा था कि वह त्सीत्सिना को देखे बग़ैर और उसके बारे में सोचे बग़ैर ज़िंदा रह सका! नहीं, वह हमेशा उसके दिल में थी, सिर्फ़ उसने अपनी उपस्थिति का पता नहीं चलने दिया। वह छुपकर, चुप्पी साधे अपनी किस्मत द्वारा निर्धारित समय का इंतज़ार करती रही। मानो अब तक के सारे दिन फिरकी पर धागे की तरह लिपटते रहे और अब फिरकी के ज़मीन पर लुढ़क जाने से सारे धागे एक साथ खुल गये थे। साबुत और मजबूत धागे ने शहर के इस सड़क पर खड़े दो वयस्क व्यक्तियों को, उस लड़के और लड़की को जोड़ दिया हो जो कभी रेत में या पेड़ के तले साथ-साथ खेलते रहे थे।

अलगेरी जैसे सारे समय सोता रहा था और अब उसकी नींद खुल गयी थी उसके दिल और चेतना में इतनी निर्मल शांति छा गयी थी कि एक-एक घटना स्पष्ट रूप से स्मरण हो आयी ... इन सारे सालों में उसे कुछ अस्पष्ट-सा भय लगता था, असंतुष्टि-सी और किसी चीज का अभाव-सा महसूस होता था। जैसे वह कुछ खो बैठा हो और वह खोयी चीज भूल भी गया हो। अब उसे वह सब याद हो आया, मिल गया।

अलगेरी त्सीत्सिना की ओर इस तरह देखे जा रहा था जैसे उसे ज़िंदगी में पहली बार देख रहा हो। वास्तव में यह सच ही था। इसमें कोई संदेह नहीं कि वह उसे पहली बार देख रहा था। पहले वह दुबली-पतली, मुस्कराती चंचल आंखोंवाली लड़की थी, अब सुडौल बदनवाली युवती। उसकी आंखों में किसी तरह की

चंचलता नहीं बल्कि शांति और आत्मविश्वास दिखाई देते हैं।

ऐसा भी होता था कि त्सीत्सिना अपनी इन्हीं आंखों से अलगेरी को इशारा करती थी कि मां-बाप से छुपकर समुद्र के किनारे भाग जाने का अवसर आ गया है और वे भाग जाया करते थे। तब अलगेरी एक पल के लिए भी नहीं झिझकता था। वह उसी वक्त इन आंखों के इशारे पर चल देता था मानो वे उस पर ऐसा अधिकार रखती हों जिसका प्रतिरोध वह नहीं कर सकता हो।

अगर त्सीत्सिना अब उसे वैसा ही इशारा करे... अलगेरी महसूस कर रहा था, उन आंखों ने फिर से उसे अपने वश में कर लिया है। वह अभी एक नज़र डालकर इसे बुलाये तो अलगेरी दुनिया के दूसरे छोर तक भी चला जायेगा।

अलगेरी त्सीत्सिना से एक साल पहले स्कूल जाने लगा था। वे पड़ोसी थे। उनके मां-बाप के आंगनों के बीच में केवल एक बाड़ भर थी। इस बाड़ में एक रास्ता था। पर इस रास्ते का उपयोग किये बग़ैर भी बच्चे खेलने के लिए अलगेरी के आंगन में इकट्ठे होते रहते थे। ज़्यादातर यह होता था कि बच्चे खेलते रहते थे और अलगेरी बैठा वर्णमाला की पहली पुस्तक पढ़ता रहता था।

"मैं भी जानती हूँ, इसमें क्या लिखा है," त्सीत्सिना अचानक भागकर आयी।

"नहीं जानतीं। तुम अभी स्कूल ही नहीं जातीं, तुम्हें कैसे मालूम हो सकता है।"

"नहीं, जानती हूँ।"

"तुम कहाँ से जान सकती हो।"

"नहीं, जानती हूँ।"

"अच्छा, पढ़ो।"

"बिल्ली।"

"तुमने अक्षर कैसे पहचान लिया?"

"इसकी ज़रूरत ही क्या है? यहाँ बिल्ली की तस्वीर बनी हुई है, इसलिए मैंने अंदाज लगा लिया। जब तस्वीर बनी हुई हो तो अक्षरों की क्या ज़रूरत है?"

"यानी, मेरी बात सही है, तुम्हें सचमुच पढ़ना नहीं आता।"

"त्सीत्सिना हंसती, जीभ दिखाती भाग जाती।

पता नहीं क्यों बचपन की यही बात सब से पहले याद हो आयी। पर उसके बाद की बातें भी याद आ रही थीं। बच्चों को समुद्र के किनारे सबसे ज़्यादा अच्छा लगता था। वहीं तो बचपन की दोस्ती बढ़ी और मजबूत हुई। त्सीत्सिना और अलगेरी की मांएं न केवल पड़ोसिनें थीं, उनमें दोस्ती भी थी। वे हमेशा एकसाथ समुद्र के किनारे जातीं और साथ में बच्चों को भी ले जातीं। उन दिनों त्सीत्सिना और अलगेरी नंगे ही घूमते थे, रेत में लोटते, समुद्र के किनारे नाचते, नीली-नीली लहरों में छपछप करते। मांएं बच्चों पर नज़रें रखे गप्पें मारती रहती थीं। उनके पास आस-पड़ोस की काफ़ी बातें करने को होती थीं। पर पड़ोसिनें केवल इन्हीं खबरों से तो संतुष्ट हो नहीं सकती थीं। इन बातों को वे या तो कढ़ाई के काम में बेलबूटे बनाकर सजा देती थीं या फिर जहां फटा हुआ दिखाई देता वहां उनके पैबंद लगा देतीं। और कभी-कभी धागा-धागा इस तरह उधेड़ डालती थीं कि किसी भी तरह की सूई उन्हें फिर जोड़ नहीं सकती थी।

बाद में बच्चे अकेले भी समुद्र पर जाने लगे। तैरना सीख गये। त्सीत्सिना मछली से भी ज़्यादा अच्छी तैराक हो गयी थी। वह तैरती काफ़ी दूर निकल जाती थी, उसका सिर लहरों के ऊपर मुश्किल से ही दिखाई पड़ता था। अलगेरी पानी में बैठे-बैठे ऊबने लगता और किनारे पर आ जाता। दूर से त्सीत्सिना का सिर हिलता-डोलता दिखाई देता और वह किनारे पर खड़े अलगेरी की ओर इस तरह देखती रहती मानो पास से देखने के बजाय उसे दूर से देखने में ज़्यादा मज़ा आता हो।

वह समय बहुत पहले बीत चुका था जब वे दोनों भागकर पानी के किनारे आते और अपने-अपने कपड़े उतार कर साथ-साथ लहरों में कूद पड़ते थे। शुरू में त्सीत्सिना कपड़े उतारने के लिए थोड़ी दूर जाने लगी, फिर धीरे-धीरे यह दूरी बढ़ती ही गयी। उसके बाद वह तैरने की पोशाक में भी दिखाई देने लगी। एक बार

त्सीत्सिना पानी से निकलने के बाद अलगेरी से थोड़ी दूरी पर धूप सेंकने लगी। वह दबे पांव उसके पास आ गया। लड़की उसकी ओर पीठ किये बैठी थी, उसने अपनी तैरने की पोशाक कंधों से उतार रखी थी जिससे धूप सेंकने के लिये पीठ ज़्यादा से ज़्यादा खुली रखी जा सके। अलगेरी ने सहेली की पीठ पर हथेली से थपथपाकर उसे डरा दिया। त्सीत्सिना ने न चाहते हुए भी पलटकर देखा और अलगेरी को उसकी छातियां दिखाई दे गयीं। यह सब एक क्षण में ही हो गया। त्सीत्सिना ने फ़ौरन अपनी छातियां हाथों से ढक लीं और जब हथेलियां उन्हें ढकने, छुपाने में असमर्थ लगीं तो फ्रॉक उठाकर सीने से लगा वह छाती के बल रेत में लेट गयी।

बचपन के खेलों और स्कूल की पढ़ाई के बीच अलगेरी देख ही नहीं पाया, उसकी सहेली कितनी बड़ी हो गयी। अब जब वह उसे "लोमशी" कहता तो उसका मतलब "हल्की" नहीं "कोमल" होता था।

यह बहुत पहले की बात थी पर अब सब कुछ एकदम ऐसे भड़क उठा जैसे माचिस की तीली पेटी की खुरदुरी सतह पर हल्की-सी रगड़ से जल उठती है। इसका मतलब है, सतह सूखी थी।

यह बहुत पहले की बात है। बचपन में उसे आखिरी बार काफ़ी कष्टकर लगा था। त्सीत्सिना तैरती हुई समुद्र में दूर चली गयी थी और अलगेरी किनारे पर बैठे-बैठे ऊबने लगा था। वह चला गया और उस दिन के बाद से उसने उसे अब तक नहीं देखा था। उसी दिन त्सीत्सिना का परिवार किसी दूसरे शहर में रहने चला गया।

त्सीत्सिना जब तैरकर दूर चली गयी थी तब वह ऐसी बालिका थी जिसके शरीर का गठन अभी मुश्किल से शुरू ही हुआ था, पर जब वह दूर से तैरती वापस आयी तो अलगेरी के सामने वह एक परिपक्व यौवना बनकर खड़ी थी, मानो इतने बरसों, इतनी लम्बी जुदाई का अस्तित्व ही नहीं था पर यह जुदाई वास्तव में इतनी लंबी थी कि अलगेरी अपने बचपन की मित्र को फ़ौरन पहचान भी नहीं पाया था।

त्सीत्सिना निष्कपट मुस्कराती अलगेरी के सामने खड़ी थी। उसकी मुखमुद्रा कहती प्रतीत हो रही थी: यदि तुम्हारा जीवन उड़ान के लिए तैयार है, अगर जीवन के दो पंख होने चाहिए और एक पंख तुम खुद हो, तो मैं तुम्हारा दूसरा पंख बनने के लिए तैयार और समर्थ हूं। वह आंधी में टूटेगा नहीं, ऊंचाई पर दुर्बल नहीं होगा, इस पर विश्वास कर सकते हो"।

"तो तुम अब ऐसी हो गयी हो ... लोमशी"

"त्सीत्सिना।"

"लोमशी।"

"त्सीत्सिना।"

त्सीत्सिना यों तो मज़ाक में अलगेरी का विरोध करती रही पर उसकी निगाहें कह रही थीं: कहो, कहो मुझे लोमशी, नरम कहो, कोमल कहो, अगर तुम्हें यह अच्छा लगता है, कहो... मुझे तो तुम्हारी आवाज़ गीत-सी लगती है।

एक लड़की की निगाहों में इतनी हार्दिकता और प्यार कहां से आ सकता है? शायद वह यह सारी हार्दिकता जिंदगी भर इसी क्षण के लिए संजोती रही हो और अब उसने सब कुछ एक साथ उंडेलने का निश्चय कर लिया हो। पर वह अलगेरी के सामने एकाएक कैसे आ खड़ी हुई? कहीं इसलिए तो नहीं कि उसे उस रास्ते से भटका दे जिस पर वह चल रहा है?

अलगेरी त्सीत्सिना को देखते, उसकी बातें सुनते वही दिन याद कर रहा था जब वह तैरती हुई समुद्र में दूर निकल गयी थी और उसके बाद उसने उसे फिर नहीं देखा। शाम को वह कहीं चला गया था और त्सीत्सिना का परिवार वहां से दूसरे शहर चला गया। उसके पिता फ़ौजी अफ़सर थे। जैसा कि त्सीत्सिना बता रही है, वे उसके बाद भी एक जगह से दूसरी जगह जाते रहे। पर यह अच्छा ही है। दो मित्रों ने एकाएक आपस में मिलने पर अपने बचपन के दिन याद कर लिये और अब उनके अपनी-अपनी राह जाने का समय आ गया। अब उन्हें एक-दूसरे से "अलविदा" कहना चाहिए। अलगेरी पहल करना चाहता है, पर वह अपनी

जगह से हट ही नही पा रहा है मानो किसी ने उसे जमीन से बाँध दिया हो। वह हिल भी नही पा रहा है। वह उसकी बातें सुनना बंद नहीं कर पा रहा है। आज उसने बहुत से काम करने की सोची थी, पर सब कहीं ओझल, छिन्न-भिन्न, धुंध में विलीन हो गया था। उसके सारे काम, सारी चिंताएं मोटरगाडियों की तरह सड़क पर फर्राटे से भागी जा रही हैं और एकाएक आगे – खड़ी चट्टान ... अब कोई काम नहीं रहा, आगे बढ़ने की गति नहीं रही, जीवन-मार्ग उसे त्सीत्सिना के पास ले आया था और यही उसकी मंज़िल थी।

अलगेरी त्सीत्सिना से बात कर रहा था और उसे हर तरफ़ से अमरा दिखाई देती प्रतीत हुई। उसने बिजली की तरह कौंधकर उन्हें अलग कर दिया था। अलगेरी के मन में दो शक्तियों, दो प्रकार के स्नेह, दो प्रकार की नेकियों और दो प्रकार के प्रेम में द्वंद्व छिड़ गया। कभी एक आकृति अधिक दीप्तिमान हो उठती तो कभी दूसरी। भले ही वे आपस में संघर्ष करती रहें, पर अलगेरी को तो अलग ही रहने दें। पर नहीं। वे एक-दूसरे से लड़ती रहीं तो तकलीफ़ बेचारे अलगेरी को ही होती। शत्रु कुछ समय के लिए एक होकर अलगेरी के हृदय की परीक्षा लेने लगे, उससे स्पष्ट और निश्चित उत्तर मांगने लगे। वे उत्तर को अधिक अनुकूल समय के लिए टालने, भला-बुरा सोचने, निर्णय लेने-देने का अवसर ही नहीं दे रहे थे। जल्दी से जल्दी उनमें से किसी एक का पक्ष लेना था लेकिन किस का, अलगेरी सोच नहीं पा रहा था।

"मैं तुम्हें यों ही रोके हुए हूँ, शायद तुम कहीं जाने की जल्दी में हो? अच्छा, जाओ, नमस्ते। मैं तो बातें करते-करते भूल ही गयी थी। तुम मुझे क्षमा करना, हम एक-दूसरे से इतने दिनों से नहीं मिले थे न।"

"नहीं, नहीं, मुझे कहीं जाने की जल्दी नहीं है। कहाँ जाने की जल्दी हो सकती है?"

"और मुझे भी कहीं की जल्दी नहीं है।"

"तब चलो, शहर घूमते हैं।"

वे चल रहे थे लेकिन थकान नहीं महसूस हो रही थी। शाम भी उनके लिये काफ़ी नहीं रही। रात भी कम रही। उन्हें दिन निकलने तक घूमते रहना पड़ा। दिन में अलगेरी जल्दी-जल्दी अपने काम पूरे करता और दिन ढलते-ढलते फिर त्सीत्सिना के पास पहुंच जाता। तीसरी रात को भी बातों की कमी नही पड़ी। एकदम साफ़ लगता था, दोनों काफ़ी दिनों से नही मिले थे। कोई आश्चर्य नहीं कि उनके पास इतनी सारी बातें जमा हो गयी थीं और उन्हें एक-दूसरे को फ़ौरन सुना डालना जरूरी हो गया था। उनकी बातों से बात इस तरह निकलती जा रही थी जैसे अंगूर की दो लताएं पहले पेड़ के तने के इर्द-गिर्द आपस में उलझ जाती हैं और उसके बाद उस पेड़ की शाखाओं पर भी। घने पेड़ के शिखा में यह पता लगाना असंभव हो जाता है कि किस लता का अन्त कहां हो रहा है। ठीक इसी तरह इन प्रेमियों की बातों का भी अंत नहीं हो रहा था। एक-दूसरे से विदा लेते समय उन्हें मालूम पड़ता कि वे अभी एक-दूसरे को कुछ भी नहीं बता पाये हैं, इसलिए विदा सिर्फ़ इसीलिए होते थे कि जितना जल्दी हो सके फिर मिल सकें।

अलगेरी अपने दिल में महसूस कर रहा था, उसे बहुत पहले दूसरी जगह पहुंच जाना चाहिए था और वह जाने की पूरी तैयारी भी कर रहा था, पर फिर वहीं का वहीं रह जाता। ठीक वैसे ही जैसे शहद में फंसी मक्खी आज़ाद होने के लिए फड़फड़ाती है।

त्सीत्सिना की भी अलगेरी से मुलाक़ात एकाएक ही हो गयी थी। वह नहीं जानती थी, कभी उससे मिल भी सकेगी, न ही उसका उससे मिलने का कोई इरादा था, इसलिए उसने पहले से कुछ भी नहीं सोच रखा था। और उसका ध्यान अन्य कार्यों और चिंताओं से हटाकर अपनी ओर आकर्षित करने में भी उसका कोई बुरा इरादा नहीं था। उसे अलगेरी से मिलने पर बड़ी प्रसन्नता हुई थी। उसके साथ घूमने और गपशप करने में उसे बड़ा आनंद मिला था। उसका दिल नहीं चाहता था कि वह उससे बिछुड़े। यह सब सच था। उसे लग रहा था अब अगर उन्हें कभी जुदा नहीं

होना पड़ा तो यह उनकी सच्ची खुशक़िस्मती होगी।

जैसे-जैसे वे बातें करते रहे, उनके जीवन के बीते वर्षों का अंधेरा दूर होता गया, मानो एक दीपक जल उठा और उसने उन दोनों के सारे जीवन को प्रकाशमान कर दिया। उनके चेहरों पर पहले से ज़्यादा चमक और रौनक़ आ गयी थी।

"क्या तुम क्रॉस पहनती हो?" त्सीत्सिना के गले में पड़ी सोने की पतली जंजीर देखकर अलगेरी ने पूछा।

"क्या कहते हो! मैं चर्च को मानती हूँ लेकिन क्रॉस नहीं पहनती।"

लड़की ने गले में क्या पहन रखा है, शायद यह पूछना अलगेरी के लिए शोभनीय न था लेकिन यह सवाल अनायास ही उसके मुंह से निकल गया था। पर जब उसने देखा त्सीत्सिना शर्म से लाल हो गयी है तो सचाई जानने का हठ उसमें जाग उठा।

"यह क्रॉस नहीं है। पर इतना विश्वास रखो, यह क्रॉस से मेरे लिए ज़्यादा महत्वपूर्ण है।"

"फिर यह आखिर है क्या?"

"जिस तरह मैं अपने बचपन की यादों से जुदा नहीं हो सकती, उसी तरह इससे भी... क्या तुम्हें याद नहीं?" त्सीत्सिना ने ये शब्द धीरे से और बिना किसी विशेष अर्थ के कहे, पर अलगेरी ने महसूस किया, शब्द उसके दिल की गहराई से निकले थे।

इन शब्दों में पहली बार की झिझक और घबराहट के साथ-साथ आत्मसम्मान और गर्व भी था। ठीक इसी तरह झंडा ऊंचा उठा करके हवा में फहराया जाता है जिससे सब उसे देख सकें।

"इसके लॉकेट में आखिर बचा है?

"तुम अन्दाज़ लगाओ।"

"लगता है, कुछ बहुत ही राज़ की चीज़ है। और तुम्हें बहुत प्यारी भी। क़ीमती। तुम्हारे दिल के बहुत क़रीब और राज़-वाली," अलगेरी को उम्मीद थी, त्सीत्सिना खुद ही उसे बता देगी।

पर त्सीत्सिना ने नहीं बताया। वह उसकी आंखों में देखती रही मानो अपना यह छोटा-सा राज़ उसे शब्दों के बिना बता देना

चाहती हो, मानो उसे उत्कट इच्छा हो रही हो कि अलगेरी खुद अन्दाज लगा ले। "इसमें मुश्किल क्या है," उसकी निगाहें कह रही थीं। "ज़रा सोचो, महसूस करो, उसमें क्या हो सकता है, इसके अलावा..."

"तुमने मुझे बहुत बना लिया। अगर तुमने अभी, इसी वक़्त नहीं बताया तो मैं ज़बरदस्ती देख लूंगा..."

"तुम भी क्या बात करते हो, ज़बरदस्ती क्यों?" त्सीत्सिना को बुरा लग गया। "मैं खुद तुम्हें दिखा देती हूं, देखो।" उसने दिल की शक्ल का छोटा-सा लॉकेट जल्दी से खोला और अलगेरी की आंखों के पास ले आयी।

शुरू में अलगेरी कुछ समझ नहीं पाया, फिर उसके दिमाग़ में खून तेज़ी से दौड़ने लगा, उसने अपनी बांहें लड़की की ओर बढ़ाईं पर वह तुरन्त पीछे को हट गयी और उसके जूतों की केवल खटखट की ही आवाज़ सुनाई दी। लॉकेट में अलगेरी के बचपन का बहुत पुराना फोटो था।

होश में आते ही अलगेरी त्सीत्सिना को पकड़ने भागा पर जब वह कोने पर मुड़ा तो उसे गली खाली दिखाई दी। त्सीत्सिना कहीं नज़र नहीं आयी। लड़की से मिलने की आशा में वह शहर में सारा दिन, सारी शाम भटकता रहा, पर वह उसे कहीं नहीं मिली और वह नहीं जानता था, उसे कहां ढूंढ़े। अंत में थककर निराश हो वह नोवालूनिये चला गया। शुरू में उसे सवारी से जाना था, फिर पैदल। गांव तक वह भोर हुए ही पहुंच पाया।

अलगेरी खोया-खोया-सा चट्टान से मैदान की ओर जाता और फिर मैदान से चट्टान की ओर। उसके क़दम ठीक से नहीं पड़ रहे थे मानो उसने अभी-अभी चलना सीखा हो। वह अपने विचारों में तारतम्य बैठाना चाहता था पर अपने को असमर्थ पाता था। वह स्वयं से पूछ रहा था कि उसे क्या करना चाहिए, पर बेकार। अभी कुछ दिन पहले तक वह जवान, ताक़तवर और आत्मविश्वासी अलगेरी था। वह जानता था, अमरा को प्यार करता है। उसने उसे अपनी पत्नी बनाने का निश्चय किया था और उससे चट्टान

के पास मिलना तय किया था। यहां से वे दोनों हमेशा हमेशा के लिए साथ जानेवाले थे। पर अमरा कहां है? वह उसका इंतज़ार करती रही, पर वह नहीं आया। वह इन दिनों त्सीत्सिना के साथ घूमता रहा। अमरा यहां, इस चट्टान के पास इंतज़ार करती रही। इस समय वह कहां है, कौन बता सकता है? वह कितनी देर उसका इंतज़ार करती रही? एक घंटा, दो घंटा या दिन भर? जब वह समझ गयी कि धोखा दिया गया है, अपमानित और बेइज़्ज़त किया गया है तो वह किस दिशा में भागी? हो सकता है, वह घर लौट गयी हो? पर ऐसा शायद ही हो। अपने घर से ग़ैर मर्द के साथ भागने के इरादे से निकली लड़की के लिए वापस लौटने का रास्ता बंद हो जाता है। वह कहीं कुछ कर तो नहीं बैठी?

अलगेरी नोवालूनिये में बेघर आदमी की तरह भटकता रहा। उसके पैर अनजाने में उसे हरज़ामान यानी अमरा के घर ले आये। दिन पूरी तरह चढ़ चुका था। अलगेरी भीख मिलने की आशा में खड़े भिखारी की तरह बाहरवाले फाटक के पास खड़ा रहा। वह घर की ओर देख रहा था और घर उसे बेजान और सूना-सूना लग रहा था। घर के अंदर जीवन की गरमाहट, सम्पन्नता, एकता का अभाव महसूस हो रहा था। सुबह की सर्द हवा उसके गालों को भोथरी छुरी की तरह चीर और खरोंच रही थी।

"ये सब गये कहां?" अलगेरी बिना कुछ निश्चय कर पाये फाटक पर कोहनियां टिकाये खड़ा सोच रहा था। "कोई भी दिखाई नहीं दे रहा।" अलगेरी को हमेशा के लिए कुछ खो बैठने का अहसास होने लगा। वह समझ गया कि इस घर के लोग चाहे जहां हों पर अमरा अब उसके लिए नहीं रही।

बील्गा बाड़ की दूसरी ओर खड़े आदमी की ओर कोई ध्यान दिये बिना धीरे-धीरे चलती, घर के पीछे से घिसटती हुई बाहर निकली। उसने आंगन के बीच में पहुंचकर अंगड़ाई लेकर अपना बदन झटकारा, फिर जंभाई ली।

"बील्गा, बील्गा," किसी जीवित प्राणी को देखकर अलगेरी प्रसन्न हुआ।

पर बील्गा ने कान भी नहीं खड़े किये। उसके लिए सड़क पर खड़ा आदमी, आदमी नहीं था। बहुत से लोग आते-जाते रहते हैं। अगर वह हर किसी की ओर ध्यान देने लगे तो भौंक-भौंककर थक जाये। पर ज़रा कोई बगीचे की बाड़ फांदने की कोशिश करके तो देखे, छठी का दूध याद करा देगी।

"बील्गा, बील्गा, तू क्या मुझे बिलकुल नहीं पहचानती? कुतिया की बच्ची, कम-से-कम मेरी ओर देख तो लेती, भौंकने ही लगती, तब भी कुछ राहत मिल जाती।"

कुतिया ने आखिर अलगेरी की ओर देखा लेकिन बिलकुल ही अस्पष्ट, उदासीन नज़र से, जैसे किसी पेड़ या ठूंठ को देख रही हो। फिर एक अंगड़ाई ले, धीरे-धीरे आंगन का चक्कर लगा वह घर के पीछे गायब हो गयी।

चौबीस

मेरी मनोदशा कितनी भी खराब क्यों न रही, एक परिवार पर मुसीबतों का पहाड़ ही क्यों न टूटता रहा पर गांव की ज़िंदगी अपनी ही रफ़्तार से चलती रही। प्रत्यक्ष में कुछ दिखाई नहीं देता था पर परिवर्तन हो रहे थे, वह आगे बढ़ती जा रही थी। ठीक उसी तरह जैसे हमें पृथ्वी के घूमने का आभास नहीं होता।

हमारे नोवालूनिये में नयी शरद ऋतु आयी। जो हमारे अबखाज़िया की पतझड़ के बारे में नहीं जानता, उसे उसके बारे में बताना व्यर्थ है, पर फिर भी कुछ शब्द आवश्यक हैं।

खेतों में मक्के गांव को घेरे सैनिकों की तरह खड़े रहते जो

बस धावा बोलने ही वाले हों। वैसे मक्का का हर पौधा साधारण सैनिक तो कम, सफ़ेद मूंछोंवाले अनुभवी जनरल-सा ज़्यादा लगता था।

तम्बाकू खेतों से उठाकर खूंटियों पर टांग दिया गया था।

हम नहीं देखते कौन अपने घर में क्या खाता है, बुरा खाना खाता है या अच्छा, उसका पूरा ख़याल रखा जाता है या नहीं लेकिन उसकी मुखमुद्रा से इन सब बातों का पता लगाया जा सकता है। ठीक इसी तरह खरीफ़ की फ़सल देखकर जाना जा सकता है, ज़मीन की संभाल कैसी हुई थी, किसानों ने अपना काम कैसा किया था।

हालांकि तम्बाकू के खेतों से पत्ते काफ़ी पहले उठा लिये गये थे, डंठलों को देखकर फ़सल का अन्दाज़ लगाया जा सकता था। डंठल ऊंचे और सुडौल थे, उनके सिरे नुकीले। कुछ समय पहले तक ये सिरे हरेभरे छल्लेदार थे और हर डंठल अलग ही नज़र आता था।

शरद ऋतु में हमारे नीबू जातीय वृक्ष नये वर्ष के अवसर पर खिलौनों से सजाये देवदार के पेड़ों से दिखाई देते हैं। रुई के ही सही, लोग नये वर्ष के अवसर पर देवदार के पेड़ पर नीबू, संतरे और नारंगियां लटकाना पसन्द करते हैं। हमारा हर फल असली, पका हुआ, रसदार और मीठा होता है – तोड़िये और खाइये। पर खुद मुझे फलों को पेड़ों पर लटका देखकर उनके स्वाद और सुगंध से कम आनंद नहीं मिलता।

भला ऐसा कौन-सा फल है जो हमारे गांव में पैदा नहीं होता! जल्दी पकनेवाले फलों की फ़सल खत्म हो चुकी है – उनके बारे में कुछ नहीं कहेंगे पर अब शरद ऋतु के फल अपने यौवन पर हैं सजे-धजे और फलों के बोझ से झुके पेड़ अब अपने फलहीन हुए पड़ोसियों के बीच में खड़े हैं। अबखाज़ियाई सेब के पेड़ों को कुछ ज़्यादा कठिनाई होती है। भला लचकीली और पतली डालियों पर कई टन सुर्ख़ सेबों का बोझ साधे रखना कोई आसान काम है। अबखाज़ियाई सेबों का असली स्वाद कोई नहीं जानता। शायद

कुछ लोगों ने दुकान या बाजार में खरीदकर चखा भी हो, पर उसमें वह बात कहां। अबखा-जियाई सेब का असली स्वाद चखने के लिए जूते उतारकर सेब के गरम-गरम खुरदुरे पेड़ पर चढ़िये। एक मजबूत-सी डाल चुनकर उस पर इस तरह सवार हो जाइए जैसे घोड़े पर सवार होते हैं और हाथ बढ़ाकर तोड़ लीजिये। और एक पल की भी देर किये बिना जब तक कि सेब में रस उतना ही शीतल हो जितना कि तने में, वहीं बैठे-बैठे खाइये क्योंकि क्षण भर पहले तक सेब और पेड़ एक ही थे, पेड़ का खून फलों में भी दौड़ रहा था। केवल तभी आप समझ पायेंगे, हमारी अबखाजियाई धरती में पैदा हुए फलों में कितना मिठास होता है।

बेशक, हमारे सेब सर्दियों में भी खराब नहीं होते। हम उन्हें सर्दी के लिए उठाकर रखते हैं और लगभग दुनिया के हर कोने के लोगों को भेजते हैं – यह सच है। लेकिन अपने हाथों से तोड़ा सेब बिलकुल ही दूसरा होता है।

पतझड़ के दिनों में आप अबखाजियाई गांवों के पास से गुजरें और आपके मुंह में पानी न आये – यह असंभव है। जिस ओर भी नज़र डालेंगे, आपको हर चीज दूसरी से ज्यादा स्वादिष्ट लगेगी।

"इज़ाबेल्ला" अंगूर का उतारना शुरू हुआ था। चिड़ियां भी उनमें चोंचें मार-मारकर इतना खा जाती हैं कि फिर उड़ ही नहीं पातीं। मुश्किल से हिलती-डोलती बैठी रह जाती हैं। पर हमें चिड़ियों पर गुस्सा नहीं आता – उनकी मर्जी हो जितना खायें, अंगूर की हमारे यहां कोई कमी नहीं।

इन दिनों सारे अबखाजिया में शराब की महक आती रहती है। हर जगह अंगूर कुचला जा रहा है, हर जगह अंगूर का रस

बह रहा है। ढोलों में भरे जाने के बाद वह धीरे-धीरे ख़मीर उठने के साथ-साथ कच्ची मचार शराब में बदलता रहता है। हर घर में अपनी मचार बनायी जाती है, पर फिर भी इन दिनों लोग एक-दूसरे की शराब चखने जाते हैं – ऐसा अबख़ाज़ियाई रिवाज है। कोई आदमी किसी काम से या यों ही एक मिनट के लिए जाता है तो फ़ौरन उसके सामने शराब की सुराही रख दी जाती है जिससे कि वह उसे चखे और उसका मूल्यांकन करे। हर शराब बनानेवाला, इन दिनों, हर दूसरे शराब बनानेवाले के यहां जाता है। सब एक दूसरे के यहां जाकर नयी और ख़मीर उठने से पहले की शराब चख आते हैं। क्योंकि हमारे यहां वैसा नहीं होता जैसा दूसरों के यहां होता है, यहां मेहमान के आते ही सामान ख़रीदने दुकान नहीं भागना पड़ता। हमारे घर में हमेशा सब चीज़ें मौजूद रहती हैं ।

कुछ पाठक शायद यह सोच सकते हैं कि मैं बढ़ा-चढ़ाकर अपनी बड़ाई कर रहा हूं। तो आइये हम किसी भी घर में चलकर अपनी आंखों से देख लें। कौन से घर में चला जाये? किसी भी घर में। जरा सब से मामूली और दूसरों से ग़रीब लगनेवाले घर की ओर इशारा तो कीजिये। मेहरबानी करके फाटक खोलकर बरामदे में जाइये और उस घर के मेहमान बनिये।

अबख़ाज़ियाई लोगों के बारे में कहा जाता है, वे केवल अतिथियों के लिए ही जीते हैं। विश्वास कीजिये, इन शब्दों में लेशमात्र भी झूठ और अतिशयोक्ति नहीं। वास्तव में ऐसा ही है।

मान लीजिये, आप अबख़ाज़ियाई घर में मेहमान हैं। यानी आपने इस घर के लोगों पर कृपा की, उनका आदर किया। तब भला वे आपका अनादर कर सकते हैं? अगर आप के लिए कोई चौपाया, जैसे, बकरा या कम-से-कम दो पैरोंवाला, जैसे, मुर्ग़ा फ़ौरन नहीं काटा गया तो जब आप खाना खाने बैठेंगे तो मेजबान क्या आपसे आंखें मिला सकेगा? नहीं, आपके सामने ही बकरा या मुर्ग़ा काटकर उसका ख़ून बहाया जायेगा। सर्दियों के लिए

रखे गये गोश्त में से सबसे अच्छा हिस्सा पकाया जायेगा। जब अबख़ाज़ियाई लोग अपना जमा आहार खाना शुरू करते हैं तो सबसे पहले ख़राब दिखनेवाले हिस्से से शुरू करते हैं और अच्छे हिस्से मेहमानों के लिए छोड़ देते हैं। इसमें कोई शक नहीं, आप उन्हें ना-नू करेंगे, मना करेंगे, मनायेंगे कि कुछ भी न काटा जाये पर किसी तरह की दलील नहीं चलेगी।

पर मैंने आपको अबख़ाज़ियाई घर में सिर्फ़ इसीलिए आमंत्रित नहीं किया कि आपको अबख़ाज़ियाई अतिथि-सत्कार पर विश्वास हो जाये। दूसरी जातियों के लोग भी अतिथि-सत्कार में पीछे नहीं रहते। मैंने आपको घर में इसलिए बुलाया कि आप हमारी शरद ऋतु और हमारी धरती की सुगंध का पूरा आनंद ले सकें।

इसीलिए मैंने यह ज़िम्मेदारी उठायी। अब आप देख ही चुके हैं कि आपने कितनी ज़ोरदार बहस की और वह कितनी बेकार सिद्ध हुई। अब आपको यक़ीन हो गया है कि मेज़बान अपने हठ पर अड़े हुए हैं तो चलिये चुपचाप आग के पास बैठ जायें। अब हम मेहमानों को मेज़बान के समान अधिकार मिल गये हैं। आइये, अब उनके साथ आग के पास बैठकर बातचीत और हंसी-मज़ाक करें। हम अबख़ाज़ियाई लोगों को ये क्षण बहुत ही सुखद लगते हैं, जब मेहमान आग के एक ओर बैठे होते हैं और मेज़बान दूसरी ओर। हम उसी तरह सहज-स्वाभाविक ढंग से बातें करते रहते हैं जिस तरह फ़ुटबाल के खिलाड़ी अभ्यास करते समय गेंद उछालते रहते हैं।

हर अच्छे मेज़बान के यहां आग भी अच्छी होगी। इसलिए मेज़बान आग में लकड़ी डालने, कुरेदने, हिलाने और उन्हें ठीक करने में बराबर लगा रहता है। आग की लपटें देग का आलिंगन करते, उसे दुलारती-सी रहती हैं और देग में कद्दू की कई क़िस्मों के टुकड़े उबलते रहते हैं। देग के पास ही एक अबख़ाज़ियाई युवती आराम से बैठी मक्का के ताज़ा भुट्टे सेक रही है। भुट्टे आग में सिककर उन लड़कियों के गर्मी की धूप में काले पड़े गालों की तरह सांवले और सुर्ख़ हो जाते हैं।

मेज़बान जैसे कुछ भी दौड़-धूप नहीं कर रहे होते हैं पर इस बीच मेज़ पर हमारी पसंद का सब ज़रूरी सामान लगा दिया जाता है। सबसे पहले अंगूर से बनी वोदका-चाचा और चूरचखेली रखी जाती है। आप शायद नहीं जानते हैं कि चूरचखेली क्या होती है? इसे अखरोट की साफ़ की हुई गिरी को अंगूर के गाढ़े रस में पागकर बनाया जाता है। इससे बढ़कर स्वादिष्ट और पौष्टिक चीज़ कोई नहीं हो सकती। चाचा के साथ खाने के लिए इससे बढ़िया चीज़ कोई नहीं होती।

साथ ही उबला हुआ कद्दू, ताज़ा मक्का के सिके हुए भुट्टे, सूखे अंजीर, अखरोट की गिरी और बहुत-सी ऐसी छोटी-मोटी चीज़ें रख दी गयी हैं जो मेज़ पर ज़रूरी होती हैं।

मेज़बान अपना गिलास उठाता है और हम सब उसके साथ-साथ पीते हैं। हमारी सुस्ती और थकान सपने की तरह ग़ायब हो जाती है। हम फ़ौरन ज़िंदादिल और बातूनी हो उठते हैं।

चाचा मर्दों का असली पेय है। इसमें कोई शक नहीं, अगर आप अपना सामर्थ्य जानते हों, पर मर्दों की शान इसी में ही तो है कि वे अपना सामर्थ्य जानें। हम अबख़ाज़ियाई लोग कभी चाचा का दुरुपयोग नहीं करते। भूख बढ़ाने और मुंह साफ़ करने के लिए, दूसरे पकवानों और पेयों के लिए उसे तैयार करने के लिए चाचा का एक छोटा गिलास पीना लाभदायक होता है। अगर किसी के साथ पीने की होड़ ही करनी हो तो गहरे लाल रंग और ख़ुशबू-वाली "इज़ाबेल्ला" के ढोल के चारों ओर बैठ जाइये। वैसे अभी पतझड़ शुरू ही हुई है, इसलिए गांवों में पुरानी शराब नहीं पर कोई बात नहीं ख़मीर उठती ताज़ा शराब – मचार तो है। और हमें विश्वास होता जाता है कि रसोई में आग के पास बैठे-बैठे मचार पीना, उसके साथ सिका मक्का व उबला कद्दू खाना भी कम मज़ेदार नहीं। सचमुच अच्छा है न?

कद्दू और मचार का इतना महत्व नहीं है जितना कि इस बात का कि खाने-पीने के बाद आप अपने को कैसा पाते हैं। आपके गालों का रंग आपके गिलास की शराब जैसा हो जाता है। आपके

सारे शरीर में पेय का माधुर्य भर जाता है, आप बराबर मुस्कराते रहते हैं, अपने चारों ओर बैठे लोगों को नेक निगाहों से देखते हैं। मचार आपको अपनी तरंगों में बहाये ही लिये जाती है। पर निस्सन्देह, खुद पर नियंत्रण रखना ज़रूरी है। या अगर इस शराब की तुलना एक अच्छे घोड़े से की जाये, तो घोड़े की लगाम ढीली छोड़ने के बजाय घोड़े को लगाम में बंधा रखना ज़्यादा ज़रूरी है। वह शान्त और सधा हुआ दिख सकता है पर उसकी नसों में आग जैसा खून दौड़ता रहता है। उसे खुली छूट नहीं देनी चाहिए।

पर जब तक हम गपशप करते, नयी फ़सल के फल चखते रहे मेज़बान की पत्नी और बेटी बेकार नहीं बैठी रहीं। उन्होंने वह सब जिसके बारे में हम शुरू में बहस करते रहे थे, मेज़ पर लगा दिया। सोंधे-सोंधे चूज़ा और दलिये में से गरम-गरम भाप उठ रही है। भगवान करे हर अबख़ाज़ियाई घर में मेहमान और गरम-गरम दलिये का साथ बना रहे।

अबख़ाज़िया की पतझड़ हमें और क्या ख़ुशी प्रदान कर सकती है? मैं आप को तीन फलों के नाम बताता हूँ: अनार, तेन्दू, शाहबलूत। मैं क्यों इन तीनों के ही नाम गिना रहा हूँ और दूसरों के नहीं? क्योंकि हमारे यहां पुंग्बबदरी, आलूचे, काली अंची और नाशपाती भी होते हैं और न जाने कितने तरह के फल होते हैं।

मालूम नहीं क्यों मैं बचपन से ही अपनी धरती के इन तीन फलों को दूसरे फलों के मुक़ाबले में ज़्यादा पसंद करता रहा हूँ। शरद ऋतु में ये हमारे थाल में मुख्य आकर्षण लगते हैं। हां, मेरे साथ बचपन से ही ऐसा होता रहा है और नोवालूनिये में बीती ज़िंदगी में मेरी धारणाएं बदली नहीं बल्कि वे और भी अधिक दृढ़, अधिक परिपक्व हो गयीं।

फिर अनार के साथ भला किसी और की तुलना की जा सकती है? क्या दुनिया के दूसरे अनारों की तुलना नोवालूनिये में पके अनारों से की जा सकती है? क्या अनार के पेड़ पर बिना नज़र

डाले और पके हुए अनारों की प्रशंसा किये बिना गुज़रा जा सकता है? मैं तो अकसर बाड़ के पास रुककर भी देखने लगता हूँ। मालिक लोग मुझे देखकर और मेरे खड़े रहने का कारण समझ न पाने पर परंपरागत ढंग से आमंत्रित करने लगते हैं: अन्दर आइए, आप ही का बाग़ है।

ग्रीष्मकालीन और शरतकालीन गरमी के साथवाले सब फलों में मुझे तेन्दू विशेष रूप से पसंद है। अब पत्ते पेड़ों से झड़ चुके हैं। अब पेड़ों पर फल कम होते जा रहे हैं, बाग़ सूने होते जा रहे हैं, वैसे ही जैसे बिलियर्ड का खेल समाप्ति पर होने पर मेज़ पर की सारी गेंदें पॉकेटों या शेल्फ़ों में होती हैं। उस समय सुर्ख़ लाल रंग के तेन्दू के फल हर जगह लटके दिखाई देते हैं और हमारे बाग़ों की सुंदरता बढ़ाते रहते हैं। तेन्दू नोवालूनिये में सूरज की तरह होता है। जब सूरज दूर क्षितिज में छुपता जाता है, शाम ढलकर रात होने लगती है। जब आखिरी तेन्दू डाल से गिरता है, पतझड़ आरम्भ हो जाती है और धीरे-धीरे सर्दी आ जाती है।

ठीक उसी तरह जिस तरह उत्तरी रूस के जंगलों में लोग खुमी इकट्ठी करना पसंद करते हैं, हम अबखाजियाई लोग शाह-बलूत। विशेष रूप से बचपन में मुझे इसका बहुत शौक़ था। इस-में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी अगर मैं कहूं कि इस काम में मैं अपने को बड़ा माहिर समझता हूँ। इसके अलावा उनका स्वाद पहचानने में भी मैं कुशल हूँ। जिसे खुमी इकट्ठी करने का शौक़ होता है, उसे उन्हें खाना भी अच्छा लगता है। ठीक उसी तरह मुझे शाहबलूत खाना भी पसंद है। कच्चे शाहबलूत भी, उबले हुए और अखरोट के साथ मिलाकर बनाये हुए भी।

अबखाज़िया की धरती पर पतझड़ आ पहुंची है। वह सुनहले संतरों, गहरे गुलाबी अनारों, काले "इजाबेल्ला," लाल तेन्दू और सुर्ख़ सेबों में प्रतिबिम्बित होती है। उसकी सुगंध ताजा शराब, चूल्हों के सोंधे धुएं, हर तरह के फलों की गंध, गरम-गरम दलिया और सिके हुए ताजा मक्का के भुट्टों में से आती है। इन सब रंगों

का आनंद लेते हुए, इन सब सुगंधों को सूंघते हुए मैं अपनी अबखाजियाई धरती और विशेष रूप से अपने गांव नोवालूनिये को ज्यादा से ज्यादा प्यार करने लगा हूँ।

निस्संदेह इस गांव को मैं केवल इसकी सुन्दर पतझड़ के कारण ही प्यार नहीं करता। यहीं मैंने पहली बार अपने जीवन का मुख्य कार्य शुरू किया, अपना व्यवसाय अपनाया, यहीं मुझे अमरा से प्यार हुआ। अब मेरी सबसे प्यारी चीज़ें यहीं हैं और लगता है, मेरे लिए अब और कहीं जाने का रास्ता नहीं रहा।

नोवालूनिये की हर वस्तु की अपनी विशेषता है, यहाँ तक कि सूरज की भी। विशेष रूप से यहाँ के सूर्योदय की। तभी तो लोग यहाँ कहते हैं, सूरज वास्तव में यहीं उदय होता है, उसकी पहली किरण यहीं पड़ती है।

आपने नोवालूनिये में सूर्योदय नहीं देखा, इसका मतलब है आपके लिए उसके सौंदर्य का वर्णन करना बड़ा कठिन है। मुझे यहाँ का सूर्योदय सबसे पहले हरज़ामान ने दिखाया। उसके बाद तात्येई भी मुझे सूर्योदय दिखाने ले जाता रहा। और अब मैं आपको अपने साथ नोवालूनिये के सूर्योदय का आनंद लेने का निमंत्रण दे रहा हूँ।

"आपके यहाँ सूरज में क्या कोई खास बात दिखाई देती है?" पाठक को पूछने का अधिकार है।

"हां," हम नोवालूनिये के निवासियों का जवाब होता है, "हमारे यहाँ सूरज में कुछ खासियत होती है। इसके अलावा कहने के लिए और रह ही क्या गया, अगर वह हमारे यहाँ ही उदय होता है। बाक़ी लोग हमारे सूरज का ही आनंद लेते हैं। देखिये, यह सब किस तरह होता है।"

नोवालूनिये के पूर्व में चूल्हे के पत्थर की शक्ल का एक बड़ा पहाड़ किएन्ताज खड़ा है जिसका मतलब "नंगा" होता है। उस पर सचमुच न पेड़ उगते हैं, न झाड़ियाँ और न ही घास। नोवा-लूनिये का सूर्योदय देखने के लिए इस पहाड़ की ओर देखना चाहिए। आरंभ में पहाड़ रात की कालिमा में विलीन हो जाता है और

फिर धीरे-धीरे हल्की होती कालिमा के रूप में दिखाई देने लगता है। ऐसा सोचा जा सकता है कि काला लबादा ओढ़े कोई दानव बैठा ऊंघ रहा है। पर वह अपने कंधों पर से लबादा उतार फेंकता है और मालूम पड़ता है, उसने नीचे भूरे रंग के कपड़े पहन रखे हैं। वह भूरे रंग के कपड़े भी उतारने लगता है जैसे नहाने की तैयारी कर रहा हो। तब मालूम होता है, भूरे कपड़ों के नीचे उजले कपड़े हैं। इस तरह "नंगा" पहाड़ भोर होते समय हर क्षण उज्ज्वल होता जाता है।

अब हमें लगेगा कि दानव हमारी ओर पीठ किये बैठा है, वह अलाव के ऊपर झुका हुआ है, इसीलिए अलाव हमें दिखाई नहीं दे रहा पर उसकी चमक और रोशनी सभी दिशाओं में फैल रही है, पहाड़ दमक उठता है।

अब हमें तैयार हो जाना चाहिए क्योंकि सूरज भी उदय होने की तैयारी कर चुका है। अगर आप पहाड़ के ऊपरी किनारे की ओर अनिमेष देखते रहेंगे तो पायेंगे कि उसके पीछे से एकाएक कुछ गहरे लाल रंग की वस्तु निकल आयी है, मानो पहाड़ के पीछे बच्चे आंखमिचौली खेल रहे हैं और लाल फ़ीता बांधे एक लड़की की असावधानी से उसका लाल फ़ीता नज़र आ जाता है और सबको उसका पता चल जाता है। लगता है, लड़की खुद भी पहाड़ की दूसरी ओर हमारे गांव की ओर झांकना चाहती है। वह अपना फ़ीता बंधा सिर ऊपर की ओर उठाये जाती है। इसके साथ ही पहाड़ की ऊपर अरुणिमा भी बढ़ती जाती है।

बेशक, मैं जानता हूँ, यह कोई लड़की नहीं, सूरज है। वह वहाँ आ ही कहाँ से सकती है? पर हर बार जब भी मैं सूर्योदय देखता हूँ, मुझे अपनी वह सहपाठिनी याद आ जाती है जो लाल फ़ीता बांधा करती थी।

पहाड़ के ऊपर निकल आने के बाद सूरज अपनी पहली किरणों से हमारे गांव को तपाता है क्योंकि वह यहीं, पहाड़ की तलहटी में है। फिर कहीं सारी दुनिया में चमकना और सब लोगों, जानवरों, पेड़ों, घास और धरती के सब जीवों को गरमी देना शुरू करता

है। पत्थर भी धूप सेंककर प्रसन्न हो उठते हैं। हमें इस बात का बिलकुल भी बुरा नहीं लगता कि हमारे बाद सूरज अपनी किरणें दूसरे सब लोगों को देता है। और आपको भी इस बात का बुरा नहीं लगना चाहिये कि वह आरंभ हम से करता है। सूरज बहुत विशाल है और हम सबके लिए आगामी कई युगों तक काफ़ी होगा।

पच्चीस

भोर हो चुका था। अमरा अस्पताल के अपने वार्ड में अकेली बैठी थी। वह अस्पताल की खिड़की के शीशों को छूती शहतूत की डाल की ओर देख रही थी। डाल प्रातःकालीन हवा के झोंकों से हिलती-डुलती खिड़की के शीशे से टकरा रही थी मानो अमरा का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करना चाहती हो। पर शुरू में ही वह अमरा का ध्यान अपनी ओर खींच चुकी थी। केवल उन क्षणों को छोड़कर जब वह नींद में होती और उसकी आंखों के आगे धुंध व अंधेरा छा जाता था, अमरा बराबर खिड़की और इस डाल की ओर देखती रहती थी। दो हठी पत्तों को छोड़कर शहतूत के सारे पत्ते झड़ चुके थे। पता नहीं क्यों अमरा को यह सारा पेड़ एक आवारा शराबी की तरह प्रतीत होता था जो सारी रात पीता रहा हो और जिसे झगड़े में पीटा या नशे में लूट लिया गया हो और अब वह ठंड से ठिठुरता, शर्म के मारे घर वापस नहीं लौट सकता हो और खिड़कियों के नीचे खड़ा लड़खड़ाता, कल की बातें याद कर रहा हो।

पता नहीं क्यों अमरा को शीशे को खरोंचती डाल भी आज बुरी लग रही थी। वह उसे स्कूल में साथ पढ़नेवाले उस लड़के की याद दिला रही थी जो पाठ के समय उसे चुपके से गुदगुदी कर देता था।

पेड़ की नंगी डालों पर एक चिड़िया आकर बैठ गयी। चिड़िया के वज़न से पहले डाल कुछ ज़्यादा हिली, फिर धीरे-धीरे उसका हिलना कम होता गया। जब चिड़िया फुदकती या मुड़ती, डाल फिर से हिलने लगती। चिड़िया कितनी बार फुदकी और मुड़ी! लगता था, वह जानबूझकर अमरा को अपने आपको हर तरफ़ से दिखाना चाहती थी, जैसे वह उससे कहना चाहती हो: "देखो, मैं कितनी सुगठित, कितनी फुर्तीली और कितनी सुंदर हूँ। देखो, बायीं ओर से मैं कैसी लगती हूँ। मुझे जी भरकर देख लिया न? तब अब मैं फुदककर तुमको अपना दायाँ हिस्सा दिखाती हूँ। क्यों, है न सुंदर? अच्छा, अब मुझे सामने से देखो। कैसा है मेरा सीना? मैं अपने पंख फैलाकर फड़फड़ा सकती हूँ, पूंछ हिला सकती हूँ, डाल पर पंजे जमाकर उल्टी लटक सकती हूँ। मैं इसी तरह फुदकती रहती हूँ, एक डाल से दूसरी पर उड़कर बैठती रहती हूँ और कोई नहीं जानता, मेरे मन में क्या है: चाहूँ तो मैं यहीं देर तक फुदकती और सजती-संवरती रहूं, चाहूं तो इसी क्षण उड़ जाऊं और फिर तुम मुझे कभी नहीं देख पाओगी। और मैं ख़ुद भी ठीक से नहीं जानती कि अगले क्षण में मैं क्या करनेवाली हूं।"

इसके बाद जैसे चिड़िया ने अमरा को शीशे में से देखकर फुदकना और उछलना बन्द कर दिया और डाल पर बैठकर चहचहाने लगी। जैसे वह अमरा को धीरे-धीरे कुछ सुना रही हो। उसके नन्हे-से गले से मानो एक के बाद एक, कई रोचक कहानियां निकलती जा रही हों। मानो वह जल्दी-जल्दी इसलिए बोले जा रही हो जिससे कि अमरा का ध्यान बंटा सके – उसे कुछ सोचने न दे, मानो डरती हो कि अगर वह चुप हो गयी तो उसी क्षण रोगिणी का ध्यान दूसरी ओर चला जायेगा और उस पर उदासी, निराशा और विषाद की छाया फैल जायेगी।

"गा, मेरी सुनहरी चिड़िया, गा, चहचहा," अमरा के होंठ बुदबुदाये। "मेरे लिए गा। इस समय मुझे तेरे गीत की बहुत जरूरत है। तू रोज सुबह और शाम मेरे पास आ। हर लड़की की जिंदगी बुलबुल के गीत की तरह होनी चाहिए। हर लड़की के लिए एक बुलबुल होती है!"

जब डॉक्टर आते तो अमरा को खिड़की की ओर से मुड़ना पड़ता, पंखों और सुरीली आवाज़वाली सहेली से उसका मौन वार्तालाप भंग हो जाता और लगता कि चिड़िया भी कहीं उड़ जाती। अमरा भी इस प्रसन्नचित्त चहचहाने की आवाज़ की आदी हो गयी थी, वह उसकी प्रतीक्षा करती थी और जब चहचहाना शुरू होता तो वह प्रसन्न होती।

पर चिड़िया तो अब आ ही नहीं रही है।

"वह आयेगी," अमरा बुदबुदायी, "जरूर आयेगी। लगता है, चिड़ियों के अत्यंत जरूरी कामों के कारण वह रुक गयी है। वह जरूर आयेगी और उसी डाल पर बैठकर अपने सारे हावभाव से देर से आने के लिए माफ़ी मांगेगी, कहेगी, समय पर नहीं पहुंच पाने का उसे बहुत खेद है।"

अमरा प्रतीक्षा कर रही थी और यह सही भी था। लड़की को हमेशा किसी न किसी चीज का इंतज़ार करते रहना चाहिए, चिंतित रहना चाहिए। अगर लड़की किसी चीज का इंतज़ार न करे, चिंतित न रहे तो इसका मतलब होगा, उसके दिल की धड़कन रुक गयी है। हमारे गांव के बुज़ुर्गों का यही कहना है।

अमरा इंतज़ार कर रही थी। कभी वह खिड़की की ओर पीठ करके अपने आपको धोखा देने की कोशिश करती कि इस

बीच उसकी सहेली आ जायेगी, कभी पेड़ और डाल की ओर अनिमेष देखती रहती थी। पर अब दिन भी ढल गया, पेड़ भी अंधेरे में डूब गया मानो रात के अंधकार में एक क़दम पीछे हट गया हो। बेचारी लड़की की आशाएं पूरी नहीं हो सकीं।

एक बार तो ऐसा भी हुआ कि अमरा ने खिड़की की ओर नज़र डाली तो बिलकुल दूसरी ही चिड़िया को बैठे देखा। वह फ़ौरन पहचान गयी, यह उसकी चिड़िया नहीं। और पहचानती भी क्यों नहीं। यह तो कुछ सुस्त और चुप रहनेवाली चिड़िया थी। वह बैठते ही तन गयी और हिलना-डुलना भी नहीं चाह रही थी। खिड़की की ओर उदास निगाह से देखती रही मानो उसे अमरा पर दया आ रही हो या अपनी ही किसी चिंता में मग्न हो। चुप रहनेवाली चिड़िया काफ़ी देर गये, अंधेरा होने तक बैठी रही। अमरा को लगा वह अभी भी अंधेरे में बैठी रोशन खिड़की की ओर देख रही है और शायद सुबह होने तक ऐसे ही बैठी रहेगी।

सुबह अमरा की नींद देर से खुली। सबसे पहले उसने खिड़की से शहतूत पर नज़र डाली। चुप और उदास रहनेवाली चिड़िया वहाँ नहीं थी।

सब लोग, डॉक्टर सहित समय-समय पर अपनी बीमार बेटी को देखने आनेवाली देस भी पता नहीं क्यों अमरा को तंग और उत्तेजित कर रही थी। उसकी इच्छा हो रही थी, वह अकेली रहकर किसी के बारे में न सोचे और खिड़की की ओर देखते हुए चिड़ियों से मौन वार्तालाप करती रहे। "क्या चिड़ियां सचमुच आदमियों से अच्छी होती हैं?" अमरा खीझते हुए सोचती, "मुझे किसी को देखने की इच्छा क्यों नहीं होती?"

वार्ड का दरवाज़ा खुला और कोई अंदर आया। अमरा को यह देखने के लिए भी मुड़ने की इच्छा नहीं हुई कि कौन आया, शायद डॉक्टर होगा या ड्यूटी नर्स आयी होगी। अमरा ने देखा और उसे अपनी आँखों पर विश्वास नहीं हुआ। वार्ड के दरवाज़े पर अलगेरी खड़ा था।

वह वार्ड के दरवाज़े पर खड़ा सोच रहा था कि आगे क्या करे। आगे क़दम बढ़ाने का उसको साहस नहीं हो रहा था और पीछे हटने में शर्म आ रही थी।

क्या यह अलगेरी ही है? यह तो बिलकुल बदला-बदला-सा लग रहा है। वह पूरी तरह दयनीय और सिकुड़ा हुआ सा लग रहा है, जैसे उसे अभी-अभी कोई बुरा काम करते हुए पकड़ लिया गया हो। मानो वह अंधेरे में चोरी कर रहा हो पर अचानक किसी ने बिजली जला दी हो और उसे चारों ओर बहुत से लोग दिखाई दे गये हों।

इसकी सुंदरता और शान कहाँ गयी? इसकी चमड़ी का सफ़ेद रंग कहाँ गया जिसका वह इतना ख़याल रखता था, इसकी वह ज़बान कहाँ गयी जो इतने सहज ढंग से शहद उगलती रहती थी? या फिर सारा शहद ख़त्म हो गया और इसकी जीभ तालू से चिपक गयी? इसे यह हो क्या गया? ऐसा संभव नहीं हो सकता कि आदमी बिना किसी कारण के इतनी जल्दी बदल जाये।

अलगेरी को देखकर अमरा के चेहरे पर शिकन भी नहीं आयी, उसकी भौंहें भी नहीं फड़कीं। जब अलगेरी की ओर उसने नज़र घुमायी तब भी उसमें विरक्ति का उतना ही भाव था जितना कि खिड़की की ओर देखते समय।

"कैसी हो अमरा?" आनेवाले के मुंह से आख़िर किसी तरह बात फूटी। "अब तुम्हारी तबीयत कैसी है?" यह सब उसने देहरी पर खड़े-खड़े ही कहा, हालांकि इन शब्दों को कहने के बाद वह वार्ड के अंदर दो क़दम आगे बढ़ आया था।

"बैठो," अमरा ने बिना किसी विशेष उत्साह के कुर्सी की ओर इशारा किया।

अपनी सेहत के बारे में अलगेरी का सवाल मानो अमरा ने सुना ही नहीं और वह खिड़की की झिरी से बाहर निकल गया। अमरा ने खिड़की की ओर भी देखा जैसे वह अलगेरी के सवाल को उड़कर बाहर जाते देख रही हो पर उसे अपनी परिचित चिड़िया के उड़ जाने के बाद हिलती हुई डाल दिखाई दी।

अलगेरी कुर्सी के किनारे पर बैठ गया मानो वह कुर्सी पर नहीं किसी सुरंग पर बैठा हो। वह जैसे अचानक कोई खतरा देखते ही उठकर भागने के लिए तैयार बैठा हो।

इसमें कोई संदेह नहीं, अलगेरी को देर-सबेर यहाँ आना ही था। आखिर वह बिना आये रह भी नहीं सकता था। वह अमरा से मिले और उससे बात किये बिना यूं ही नोवालूनिये से जा भी नहीं सकता था।

और इस समय वह उसके सामने कुर्सी पर बैठा है। अब अमरा चाहे जो कह ले। अब चाहे वह बात कहे, अपमानित करे या शर्मिन्दा करे, चाहे तो वहाँ से उसे निकाल दे। वह यह सब कर सकती है। पर इसके बाद अलगेरी के दिल का बोझ उतर जायेगा और वह चैन से नोवालूनिये छोड़कर जा सकेगा। हाँ, चाहे वह उसे निकाल दे, चाहे पत्थर उठाकर उसका सिर खाली घड़े की तरह फोड़ दे, वह सब कुछ कर ले, जो वह चाहती है, पर केवल चुप न रहे। उसकी चुप्पी का हर मिनट अलगेरी के कंधों को और ज्यादा झुकाये जा रहा है। वह देर क्यों कर रही है? वह इस भयावह क़ब्र जैसे सन्नाटे में उसका दम क्यों घोंटे जा रही है?

बिना कोई हड़बड़ी दिखाये अमरा लेटी रही। न उसने नाराज़-गी ज़ाहिर की, न गुस्सा और न ही नफ़रत। सब कुछ ऐसा हो रहा था जैसे कोई बिलकुल अपरिचित व्यक्ति आया हो और अमरा इस बात की प्रतीक्षा कर रही हो कि वह पहले बोले और उसे बताये कि वह कौन है और क्यों आया है। पर जैसा कि दिखाई दे रहा था, अपरिचित कोई बड़ी बेतुकी फ़रियाद लेकर आया था। ऐसे दिख रहा था जैसे शरमा रहा हो, अपनी बात कह नहीं पा रहा हो और चुप रहने के साथ-साथ उसका संकोच भी बढ़ता जा रहा हो।

"मैं... अमरा," अलगेरी इस तरह बोला जैसे उसके मुंह में गरम-गरम आलू या लोहे का गर्म टुकड़ा हो, जिसे ठंडा करने के लिए उसे पहले कई बार साँस लेनी पड़ रही हो...

"मैं... अमरा... तुम समझती हो... आया हूँ... मेरे खयाल से हर आदमी को देर-सबेर बात साफ़-साफ़ कह देनी चाहिए... जिससे कि उसके आचरण का कारण समझ में आ जाये और वह भी किसी गफ़लत में न रहे, जिससे वह अपनी भावनाओं को समझ ले, अपनी आत्मा की आवाज़ को नहीं ठुकराये, सुने और उसके बाद जैसा चाहे, वैसा करे।"

"इसका क्या मतलब समझूं?" आखिर अमरा को भी बोलना पड़ा।

"यह कि जब मुझे अपने जीवन का सबसे महत्वपूर्ण निर्णय लेना पड़ा तो मेरा दिमाग ठीक-ठीक काम करने लगा और मैंने कुछ ऐसी बातें देखीं जिन पर मैंने शुरू में ध्यान नहीं दिया था, पर इन बातों से मेरे हाथ-पैर बंधे हुए थे।"

अमरा अलगेरी की बात कुछ भी समझ नहीं पा रही थी पर उसने उसे अपनी बात पूरी कह लेने देने और उसे बीच में न टोकने का निश्चय किया।

"उसने खुद मुझसे कहा कि मैं उसके यानी तुम दोनों के रास्ते से हट जाऊं क्योंकि मैं तुम दोनों की खुशी में बाधा डाल रहा हूँ। मैंने सोचा, ऐसा पाप क्यों मोल लूं? ऐसे पाप से आदमी ज्यादा देर सुखी नहीं रह सकता। इसीलिए मैंने उस नौजवान के रास्ते से हटने का निश्चय किया जिसका कहना है कि तुम लोगों के बीच सारी बात पक्की हो चुकी है।"

आखिर अलगेरी ने वह सब कह डाला जो वह कहना चाहता था और अब चैन की साँस ले सकता था।

"हाँ, उसने यही कहा कि तुम दोनों के बीच सारी बात पक्की हो चुकी है और मैं केवल तुम्हारी राह का रोड़ा बना हुआ हूँ।"

"तुम किस की बात कर रहे हो, यह क्या बकवास है?"

"अलोऊ की।"

नाम बताकर अलगेरी ने महसूस किया, उसने सारी बात कह दी और उसे बड़ी राहत मिली।

"अलोऊ? उसका इससे क्या वास्ता? इस बात से अलोऊ का क्या वास्ता?"

पर अलगेरी इसके बाद भी नहीं बोला। उसे जो कुछ कहना था, वह कह चुका था और अब यहाँ से किसी तरह खिसक लेने की सोच रहा था। अच्छा हो, अगर अमरा ही उसें यहाँ से निकाल दे जिससे यह क़िस्सा जल्दी से जल्दी खत्म हो जाये।

अलगेरी ने मेरे बारे में जो कुछ अमरा को बताया, मैंने वास्तव में कहा था। पर उनका उपयोग कैसे और किस उद्देश्य से किया! अगर उसने सम्बन्ध स्पष्ट करने के उद्देश्य से हमारे बीच हुई झड़प के बारे में बताया होता तो बात कुछ और ही होती। उसे मेरे कहे शब्दों की आवश्यकता अपने बचाव के लिए पड़ी जिससे वह अमरा से हमेशा-हमेशा के लिए नाता तोड़ने का अच्छा बहाना काम में ला सके। पर आखिर वह इन शब्दों के कारण तो अमरा से नाता नहीं तोड़ रहा था। उसके अपने कई और कारण थे। हाँ, वह शिकार मेरी और मेरे शब्दों की आड़ में कर रहा था। अगर उसे मेरी इतनी चिंता थी तो वह उसी समय अमरा के पास क्यों नहीं आया?

और काम के अच्छा-बुरा होने की परवाह किये बिना अब अलगेरी बड़ी बेचैनी से निर्माण-कार्य समाप्त होने की प्रतीक्षा कर रहा है जिससे वह इस अभिशप्त नोबालूनिये को जल्दी से जल्दी हमेशा के लिए छोड़कर जा सके। मुख्य इंजीनियर अकसर मीटिंग बुलाकर मजदूरों से जल्दी से जल्दी काम पूरा करने के लिए कहने लगा। मुख्य इंजीनियर हर संभव तरीक़े से काम की रफ़्तार बढ़ाने, बढ़ावा देने, दबाव डालने और जल्दी मचाने में लग गया। इस उद्देश्य से वह ऊँचे आदर्शोंवाले शब्दों का उपयोग कर रहा था: यह बड़ा महत्वपूर्ण कार्य है, मातृभूमि प्रतीक्षा कर रही है, सब लोगों को देशभक्त होना चाहिए और जनता उनकी बहुत आभारी होगी। उसकी भाषा समाचारपत्रों के सम्पादकीय लेखों जैसी होती थी। अलगेरी कम्युनिज़्म के निर्माण की भी बात करता था लेकिन

मन में सिर्फ़ इस गाँव से जल्दी से जल्दी चले जाने की बात होती।

निस्संदेह, इसका मुख्य कारण त्सीत्सिना से हुई उसकी मुलाक़ात था। पर इसके अलावा भी कुछ कारण थे।

अलगेरी का पालन-पोषण उसकी मौसी ने किया था जो बड़ी कर्मठ, समझदार और कामकाजी औरत थी। उसने ही ऐसा इंतजाम किया था कि उसका पोष्य पुत्र इस बिजलीघर के निर्माण कार्य में मुख्य इंजीनियर बन जाये। मौसी सोचती थी कि अलगेरी के भविष्य में बिजलीघर निर्णायक भूमिका अदा करेगा। वह बिलकुल ठीक समझती थी कि मुख्य इंजीनियर बनाये जाने के बाद उसे स्थानापन्न या सहायक नियुक्त करके कभी नहीं भेजा जायेगा।

इसी मौसी ने अलगेरी के नोबालूनिये गाँव की किसी लड़की से विवाह करने के इरादे का कड़ा विरोध किया था।

अलगेरी ने अपनी सरल प्रकृति के कारण अपनी भावनाओं और योजनाओं के बारे में मौसी को बता दिया था और मौसी के शब्दों से उसी क्षण उसे बहुत गहरा धक्का लगा था:

"तुझे इस गाँव की लड़की की क्या जरूरत पड़ी है? तुझे मालूम है, इन गाँववालों के कितने रिश्तेदार होते हैं? और हर कोई अपने थैले और पोटलियाँ लिये तेरे घर आने लगेगा। तेरा घर घर न रहकर धर्मशाला बन जायेगा। क्या वह इतनी सुसंस्कृत और पढ़ी-लिखी है कि शहर के तेरे घर को ढंग से रख सके? तेरे यहाँ बड़े-बड़े लोग, मंत्री वग़ैरह आया करेंगे। सबसे पहले तुझे खुद को ही अपनी सीधी-सादी पत्नी की वजह से शर्म आने लगेगी। इसके अलावा तू और भी बड़ा आदमी बनेगा। अभी तू मुख्य इंजीनियर है, बाद में निदेशक या मंत्री भी बनेगा। और वह जैसी गाँव की मास्टरनी थी वैसी ही रह जायेगी।"

मौसी ने इसी तरह की बहुत सी बेतुकी बातें कहीं। अलगेरी ने शुरू में तो उसकी बातें नहीं सुनीं, नाराज़ भी हुआ, पर बाद में सोचने और डगमगाने लगा।

संयोग से, जब वह अपने निर्णय के बारे में डगमगाने लगा

था, तभी गुरुभूमी में अचानक उसे त्सीत्सिना मिल गयी थी। त्सीत्सिना ऐन मौक़े पर आयी थी। उसने पलड़ा अपनी ओर झुका लिया था।

पाठक को घटनाओं का यह मोड़ कुछ अप्रत्याशित लगेगा। पर क्या किया जा सकता है? अगर मैं लेखक होता तो अधिक प्रतीतिकर कहानी लिखता, पर मैं लिखता नहीं। सिर्फ़ वास्तविक घटनाओं का बयान भर कर रहा हूँ। ज़िंदगी को इस बात की परवाह थोड़े ही होती है कि हर एक घटना विश्वास-योग्य हो। ज़िंदगी में केवल यही नहीं और भी बहुत कुछ होता है। मेरे एक मित्र की सगाई एक लड़की से हुई थी और वह शादी की तैयारी भी कर रहा था कि अचानक उस लड़की ने दूसरे से विवाह कर लिया। कोई सोच भी नहीं सकता था। मेरे मित्र को बहुत बुरा लगा और केवल उस धोखेबाज़ से बदला लेने के लिए उसने उसके बाद मिलनेवाली पहली लड़की से ही शादी कर ली। देखिये, क्या क्या होता रहता है ज़िंदगी में!

त्सीत्सिना से मिलने के बाद अलगेरी अनचाहे ही उसकी तुलना अमरा के साथ करने लगा और उसे त्सीत्सिना का पक्ष ही भारी लगा। हाँ, इन दोनों लड़कियों में आसमान ज़मीन का फ़र्क़ था। अगर जीवन की सीढ़ी पर ऊंचा चढ़ना ही है तो अच्छी तरह सोच-विचार लेना चाहिए। जब अलगेरी और त्सीत्सिना साथ निकलते तो सब त्सीत्सिना की ओर ध्यान देते, उन की ओर मुड़-मुड़कर देखते। त्सीत्सिना पूरी तरह शहरी और सुसंस्कृत लड़की है। पेशे से शल्यचिकित्सका है! वे सब लोग जिन्हें वह मौत से बचायेगी, उसके आभारी होंगे, उसे हमेशा सम्मान मिलेगा। और आर्थिक दृष्टि से भी... यह भी सोचने की बात है। संक्षेप में, जब अलगेरी ने अपने भावी जीवन की कल्पना त्सीत्सिना के साथ की तो वह स्तंभित रह गया। जीवन उसे सुखद स्वर्ग के समान लगने लगा।

और अमरा का ध्यान रह-रहकर फिर उन शुरू के दिनों की ओर जा रहा था, जब हरज़ामान के आँगन में दो अपरिचित,

दो इंजीनियर आये थे और बलूत के तले खड़े बात कर रहे थे, उनमें से एक ने पानी माँगा था...

हर दिन, हर मुस्कान को याद कर रही है अमरा। अगर अंत में यही होना था तो अमरा का दिल उससे यह क्यों कह रहा था कि यही उसका सौभाग्य है। और दिल की इस बात पर विश्वास करके वह अलगेरी की ओर देखकर मुस्करा दी, उससे मिलने आयी, जब कि उसने अभी तक किसी को अपने निकट फटकने तक नहीं दिया था और न ही किसी को आशा दिलायी थी। लगता था, अलगेरी की आँखें हमेशा कुछ छुपाये बिना अमरा की ओर ही देखा करती थीं। न ही उसकी नज़रों ने, न संकेतों ने, न ही हाथों ने जब वे यूं ही अमरा से छू जाते थे, अमरा को कभी संदेह का आभास नहीं होने दिया और न ही उसे कभी अलगेरी के बारे में बुरा सोचने का कारण दिया। अलगेरी के सुंदर चेहरे पर कभी कालिमा की छाया नहीं दिखाई दी। आखिर उसमें ये सब कहाँ छुपा हुआ था जो अंततः बाहर आ गया? अमरा रह रहकर इसी सवाल के बारे में सोच रही थी और शायद सोचती ही रहती यदि उसे देखने आये उसके स्कूल के अध्यापकों और अध्यापिकाओं ने उसका ध्यान भंग न कर दिया होता। उस दिन जैसे लोग पहले से जानते थे कि अमरा का दिल दुखी है, इस लिए लोग उसके पास लगातार चले आ रहे थे और अब उसके साथ काम करनेवाले लोग आ गये। अध्यापक लोग चुप बैठे थे, वे वहाँ केवल उपस्थित थे, पर अमरा की सहेलियाँ बिना चुप हुए चहक रही थीं और सारी खबरें, सारी अफ़वाहें सुनाती जा रही थीं। यानी औरतें हमेशा औरतें ही रहती हैं और अपना काम अच्छी तरह समझती हैं, चाहे वे अध्यापिकाएं ही क्यों न हों।

उनके जाने के बाद अमरा अभी थोड़ी देर भी अकेली न रह पायी थी कि तान्येई आ पहुंचा। उसने अपनी अध्यापिका से लिपटकर उसे चूम लिया।

"तुम्हें क्या हुआ, अमरा, यह सब हुआ कैसे?"

"खतरे की कोई बात नहीं। कभी-कभी समतल जगह पर भी पैर फिसल जाता है। ऐसा होता ही रहता है, पर अब जो होना था, सो हो चुका और खतरे की कोई बात नहीं रही।"

"पर यह सब आखिर हुआ कैसे?"

"अरे, तुम तो बहुत बड़े हो गये, तात्येई," अमरा ने बात बदलने के लिए कहा, "तुम तो जवान लड़के हो गये। क्या नोवालूनिये आये हुए बहुत दिन हो गये?"

"बस अभी पहुंचा ही हूँ। मुझे तो कुछ भी पता नहीं था। सुखूमी में मुझे अगरा मिली थी, उसी ने मुझे सारी बात बतायी। मैं फ़ौरन यहाँ के लिए रवाना हो गया।"

"तुम्हारा क्या हाल है?"

"अच्छा है... पर आखिर यह हुआ कैसे?"

"तुमने कोई और नया गीत नहीं लिखा था?"

"हाँ, कुछ लिखे हैं, पर अमरा..."

"और बाबा से मिले?"

"नहीं। मैं अभी किसी से नहीं मिला। मैं सीधा यहीं आ रहा हूं।"

"क्या उनसे मिलोगे?"

"इसमें भी कोई शक है, मिलूंगा।"

"वे बड़े खुश होंगे।"

अमरा ने तात्येई को किसी भी तरह अपनी बीमारी और उस दुर्घटना की बात ही नहीं छेड़ने दी।

उस दिन अमरा को देखने आनेवाला सब से आखिरी आदमी था हड्डी बैठानेवाला अमतोन। वह बीमार के पास काफ़ी देर तक बैठा रहा। पहले वह काफ़ी देर तक अपनी ज़िंदगी के क़िस्से सुनाता रहा, फ़िर बोला,

"अमरा, मेहरबानी करके मुझे अपना पैर तो दिखाओ। डॉक्टर डॉक्टर की जगह ही रहेगा पर अमतोन भी कुछ जानता है।"

उसने खुद अमरा के पैर की पट्टी खोली बड़े ध्यान से उसकी जाँच की, फिर छूकर देखा।

"कुछ नहीं, चलने फिरने लगोगी," उसने अंत में कहा। "मैं तुम्हारे लिए यह बैसाखी लाया हूं। मैंने खुद बनायी है। इसका सहारा लेकर चलना। शुरू में कुछ लगड़ाओगी पर इससे तुम्हारी चाल और भी सुंदर हो जायेगी।"

"शुक्रिया, अमतोन, इस खुशखबरी के लिए।"

"खुश रहो, अमरा, जल्दी से ठीक हो जाओ।"

छब्बीस

हरज़ामान को कभी-कभी ऐसे ही ग्राम सोवियत के दफ्तर में जाना अच्छा लगता था। वहाँ अध्यक्ष से सब विषयों पर बातचीत की जा सकती थी। हरज़ामान को आराम से बैठकर बातचीत करना अच्छा लगता था जिसमें फ़सल और फ़ार्म से लेकर वियत-नाम युद्ध का ज़िक्र होता था। गाँव की हर छोटी-बड़ी बात में ग्राम सोवियत के अध्यक्ष को रुचि होनी चाहिए और हरज़ामान को भी ऐसी ही बातों में रुचि थी।

हरज़ामान का ख्याल था, सरकार को नोवालूनिये जैसी अपनी ज़मीन के हर छोटे से छोटे टुकड़े का भी ध्यान रखना चाहिए। वह ग्राम सोवियतों के अध्यक्षों के माध्यम से इन छोटे-छोटे टुकड़ों की देखभाल करती भी रहती है।

ग्राम सोवियत के अध्यक्ष के अलावा वहाँ सामूहिक फ़ार्म का अध्यक्ष भी था। यह तो और भी अच्छी बात है, बातचीत और

मनोरंजक होगी। एक-एक करके सभी विषयों पर बातचीत हुई: गाँव के अंदरूनी और बाहरी, बड़े और छोटे मामलों, फ़ार्म के चारों ओर की बाड़ से लेकर अमरीका के राष्ट्रपति तक के बारे में। हरज़ामान उनसे विदा लेकर जाने के लिए खड़ा ही हुआ था कि दोनों अध्यक्षों ने घुमा-फिराकर वही बात छेड़ दी जो हरज़ामान को बहुत अप्रिय थी। लगता था, वे महसूस करते थे कि यह बात वृद्ध को बुरी लगेगी और शायद उसे क्रोध भी आ जाये, इसीलिए उन्होंने यह बात घुमा-फिराकर छेड़ी थी। पर हरज़ामान तुरंत समझ गया कि उनका इशारा किस ओर है।

आदमी कितनी जल्दी बदल जाता है। अभी-अभी वह सीधे-सादे ढंग से अमरीका के होनेवाले राष्ट्रपति के बारे में बात कर रहा था, उसके चेहरे पर सौजन्यता का भाव था, मुस्करा रहा था और एक मिनट बाद ही वह झटके से उठ खड़ा हुआ, उसकी आँखें गोल हो गयीं, उनमें खून उतर आया, आवाज़ रूखी हो गयी, वह बिलकुल ही दूसरी तरह का आदमी हो गया।

वैसे अध्यक्षों को इस परिवर्तन से अधिक आश्चर्य नहीं हुआ। वे जानते थे, हरज़ामान के लिए उसका घर, उसकी खेतीवाड़ी और ज़मीन उसकी दुखती रगें हैं। वह बहुत भला आदमी है और आसानी से लोगों से घुलमिल जाता है। पर जैसे ही कोई उसकी खेतीवाड़ी की बुराई करे या नुक़सान पहुंचाने की बात सोचे, वृद्ध फ़ौरन गुस्सा हो उठता है और उसके बाद काफ़ी देर तक शान्त नहीं हो पाता।

बात ज़मीन के उस आधे हिस्से के बारे में हो रही थी जो सड़क की दूसरी ओर रहकर उजड़ रहा था। वहाँ किसी आदमी को बसाने की बात हो रही थी जिससे वह अपना घर बनाकर खेतीवाड़ी शुरू कर दे।

"क्या आपके गले पर छुरी रखनेवाले आदमी को कोई दूसरी जगह नहीं मिली?" हरज़ामान ने कुछ शान्त होते हुए पूछा क्योंकि अब वह गुस्से में दरवाज़ा भड़ाक से बन्द करके नहीं जा सकता था।

शायद अध्यक्ष फ़ौरन बता भी देते कि उनका इरादा वहाँ किसे बसाने का है, पर जब उन्होंने देखा कि हरज़ामान गुस्सा हो रहा है, तो वे डर गये। गरमागरमी में वह अपना गुस्सा उस निर्दोष आदमी पर भी उतार सकता था और हमेशा के लिए उससे लड़ जा सकता था। और अगर दोनों ही आदमी अच्छे और नेक हों तो उन्हें क्यों लड़ना चाहिए। हरज़ामान ने यह जानने की कितनी ही कोशिश की कि वह आदमी कौन है, पर अध्यक्षों ने नहीं बताया।

"क्या इससे बेहतर यह नहीं होगा कि उसे मेरे आँगन में ही बसा दिया जाये? सड़क की दूसरी ओर क्यों बसा रहे हो? ठीक मेरे आँगन या बरामदे में ही बसा दो न। अपना घर भी बना ले, फिर हम कभी उसके घर की दायीं ओर से निकला करेंगे, कभी बायीं ओर से।"

"अगर इस बारे में तुम ऐसा सोचते हो..." एक अध्यक्ष ने कहा।

"अगर तुम्हें हमारी योजना इतनी बुरी लगती है..." दूसरे ने उसका समर्थन किया।

"आप लोग अध्यक्ष हैं, आपका राज है, जो जी चाहे, कीजिये। जैसा आप उचित समझते हैं, वैसा ही कीजिये। पर तब मुझसे पूछने की ज़रूरत ही क्या पड़ी थी?"

हरज़ामान ग्राम सोवियत से घर तक उत्तेजित अवस्था में चलता रहा, उसने सड़क की ओर भी नहीं देखा। वह सीधे घर न जाकर ज़मीन के उस टुकड़े की ओर मुड़ गया जो सड़क बनने से उसकी ज़मीन से अलग हो गया था और जहाँ किसी और को बसाया जानेवाला था...

"मुझ पर यह कैसी मुसीबत आ पड़ी," हरज़ामान उस जमीन पर नजर दौड़ाते हुए सोचने लगा जिस पर अब उजाड़ होने की छाप पड़ चुकी थी। "जैसे अब हमारे गाँव में अनजुती ज़मीन नहीं रही, जैसे गाँव के चारों ओर जमीन की कमी है जो किसी को ठीक मेरी नाक तले बसाना जरूरी हो गया, जिससे कि उसका घर मेरी आँख में काँटे की तरह खटकता रहे। आखिर वहाँ मेरा चश्मा है जिस पर मैं बिना किसी रोक-टोक के आता-जाता था। अब भले ही वहाँ पहुंचने के लिए मुझे सड़क पार करनी पड़ती है। फिर क्या मैं चश्मे तक पहुंचने के लिए किसी और की ज़मीन और खेती पर से होकर गुजरा करूंगा? बस इतनी ही कसर रही है कि मेरे बुज़ुर्गों की क़ब्रें दूसरे की ज़मीन में नहीं आयी। कौन जाने यहाँ किसे बसाया जायेगा, कैसा आदमी होगा, अच्छा होगा या बुरा। मेरे पूर्वजों की कब्रों पर कूड़ा फेंकना शुरू कर देंगे। वैसे ही चट्टान के दूर के कोने में कूड़ा फेंकने के लिए उपयुक्त जगह है। कॉमरेड अध्यक्ष लोग कम-से-कम इस बारे में तो सोच लेते।"

सूनी, उजाड़ होती ज़मीन पर कुछ देर घूमने के बाद हरज़ामान फ़ार्म की ओर चल दिया। हम फ़ौरन समझ गये कि वृद्ध कुछ उदास है। पर ऐसी हालत में उससे यह पता लगाना मुश्किल था कि बात क्या है। वह लोगों से कतराने लगता है, बात करने से बचता है और चुप्पी साधे रहता है। पर दूसरे दिन मुझे लगा कि हरज़ामान मुझे ढूंढ़ रहा है जैसा कि वह हमेशा जब भी मुझे कुछ सुनाना चाहता था या कोई गम्भीर बात करना चाहता था तो करता था। पर उसने अभी तक यह नहीं सोचा था कि बात किस ढंग से छेड़ना अच्छा रहेगा। मैं हरज़ामान को काफ़ी समय से जानता हूं और मुझे मालूम है, कब उसके मुंह से किसी भी तरह कुछ कहलवाना मुश्किल हो जाता है और कब वह कुछ न बोलने की पूरी कोशिश के बावजूद खुद को रोक नहीं पाता।

मेरा अन्दाज़ ग़लत नहीं निकला। हमने सुबह पशुओं को चरागाह में छोड़ दिया और धूप सेंकने के लिए पत्थरों पर बैठ गये। सूरज

अभी-अभी पहाड़ों के पीछे से निकला था, सुहानी धूप फैली हुई थी, न ज्यादा गरमी लग रही थी, न जला रही थी। यहीं वृद्ध ने वह बात छेड़ी जो उसके दिल में इतने दिनों से घुट रही थी:

"बेटा अलोऊ, तुम्हें याद है या नहीं कि हमने यहीं इन पत्थरों पर बैठे अपने गाँव के बारे में बात की थी? तभी तुमने कहा था कि तुम्हारे लिए नोवालूनिये ही दुनिया में सबसे प्यारा है।"

"कैसे याद नहीं होगा!"

"पर मुझे याद नहीं कि तुमने फिर कभी इस बात का जिक्र किया हो। लगता है, हमारे गाँव के प्रति तुम्हारा उत्साह ठंडा पड़ गया, अब वह तुम्हें अच्छा नहीं लगता।"

"क्यों अच्छा नहीं लगता? जो चीज़ अच्छी लगती हो, उसके बारे में आखिर रोज़ तो बताना जरूरी नहीं। ऐसा भी होता है कि पति-पत्नी कई सालों से साथ रहते हैं, एक-दूसरे को प्यार करते हैं, पर इसका जिक्र नहीं करते।"

"हाँ, हाँ, ऐसा होता है। पर पति और पत्नी अपने प्यार की पुष्टि अपने व्यवहार से करते हैं।"

"आखिर कैसा व्यवहार करके मैं नोवालूनिये के प्रति अपने प्यार की पुष्टि कर सकता हूं?"

"जिसकी जड़ नहीं होती वह पतझड़ के पात की तरह होता है। उसे हवा एक जगह से दूसरी जगह उड़ाती रहती है, वह हर जगह पराया ही रहता है।"

"क्या गाँव या उसकी ज़मीन से मेरे सम्बन्ध इतने कमज़ोर हैं कि हवा जैसे चाहे, मुझे झंझोड़ती रहे।"

"नहीं, तुम ऐसा कैसे कह सकते हो? पर मैंने सोचा, अगर तुम हर हालत में हमारे गाँव को प्यार करते हो, अगर तुम्हें धरती पर यह जगह पसन्द है तो क्यों न तुम यहाँ अपना घरबार बना लो। यह सच है कि ज़फ़ास का घर भी तुम्हारे लिए अपने जैसा ही है और हमारे यहाँ भी तुम अपने घर जैसे ही रहे। पर वह अपना होता हुए भी अपना नहीं। और जब अपना घर, अपनी ज़मीन और अपने चूल्हे से उठता हुआ धुआँ हो तो ज़्यादा अच्छा होता है।"

"शायद, यह सच है। मैंने भी इस बारे में कई बार सोचा। देर-सबेर मुझे अपने घर की नींव रखनी ही पड़ेगी। पर अगर वैसा ही हुआ, जैसा मैं चाहता हूं..."

"क्या मतलब, वैसा ही हो जाये?! आखिर हम सब यहीं हैं। क्या हम तुम्हारी मदद नहीं करेंगे?"

"शुक्रिया, प्यारे हरज़ामान।"

हाँ, उसे घरबार और खेतीबाड़ी के बारे में बातें करना कितना अच्छा लगता है। वह सच्चा किसान है, ज़मीन में केवल उसकी जड़ें ही गहरी धंसी हुई नहीं हैं, बल्कि वह उसे प्यार भी करता है और दूसरे आदमी को जो कि ज़मीन के प्रति उदासीन है, उसे भी उसको प्यार करने के लिए मजबूर कर देता है।

"शाबाश, बेटा। तुमने अपने घरबार के बारे में पहले से ही सोचा, शाबाश। पर तुमने अपने बसने की जगह के बारे में भी सोचा या नहीं? क्या तुमने जगह भी पहले से चुन रखी है?"

"नहीं, अभी तक मैं कोई पक्की बात तय नहीं कर पाया हूँ।"

"तुम जिस जगह की ओर उंगली उठाकर इशारा कर दोगे, वही तुम्हें दे दी जायेगी।"

"कौन जाने, देंगे या नहीं।"

"क्यों नहीं देंगे, जरूर देंगे। उनके यहाँ तुमसे बेहतर आदमी ऐसा कौन है जिसे वे ज़मीन का सबसे अच्छा टुकड़ा देंगे और वह भी सबसे पहले।"

"ज़मीन का मामला बहुत नाजुक होता है। वह अध्यक्षों की नहीं, सारी जनता की होती है।"

"तो ठीक है, वे लोगों से पूछ देखें। और अगर लोग तुम्हें वह जगह देने से इन्कार कर दें, जहाँ तुम चाहते हो, तो मैं अपनी मूँछें साफ़ करवा दूंगा! तुम यह कह क्या रहे हो? कितनी शर्म की बात है!"

"नहीं, बस मैं चाहता हूं कि किसी को बुरा न लगे। अचानक ऐसा भी तो हो सकता है कि मैं जो ज़मीन लेना चाहूं, वह किसी और को भी अच्छी लगती हो?"

"कोई बुरा नहीं मानेगा। नोवालूनिये के सारे लोगों को तो इसी बात की खुशी होगी कि तुम हमारे यहाँ बसोगे।"

हरज़ामान ने मुझ पर खोजती हुई नजर डालकर कहना जारी रखा,

"ज़रा सुनो, मैं तुमसे क्या कहना चाहता हूं। एक जगह मेरी नज़र में है। नहीं, नहीं... वह तुम्हें पसंद नहीं आयेगी। लगता है तुम्हें वह पसन्द नहीं आयी, नहीं तो तुम उसे यूं ही नहीं छोड़ देते।"

"कौन सी जगह है वह?"

"नहीं, नहीं, लगता है, वह तुम्हें पसन्द नहीं है।"

"नोवालूनिये में भला ऐसी कौन सी जगह है, जो मुझे पसंद नहीं आ सकती।"

"कहीं ऐसा न हो कि मैं यह ज़मीन तुम्हारे गले मढ़ रहा होऊं। पर सड़क बनने से मेरी ज़मीन से अलग हुआ आधा हिस्सा बिलकुल खाली पड़ा है। जब तुम हमारे घर आये थे तो वहीं तुमने अपने पहले क़दम रखे थे। यह ज़मीन वैसे ही उजड़ती जा रही है। तुम उसे ही ले लो न। भगवान साक्षी है, मैं तुम्हारे जैसा पड़ोसी मिलने से दिल से खुश होऊंगा। क्योंकि यह ज़मीन वैसे ही उजड़ती जा रही है। अगर उसे किसी दूसरे को दे दिया गया तो मुझे लगेगा, उसे मुझसे छीन लिया गया है। और अगर तुम इस ज़मीन पर बस गये तो इसका मतलब होगा, मैंने खुद तुम्हें भेंट कर दी है।"

"मुझे विश्वास है कि आप दिल से ऐसा चाहते हैं और दिल से ही कह रहे हैं... पर फिर भी मैं आपकी आँखों में काँटे की तरह खटकूंगा।"

"इसे कैसे मालूम हुआ कि मैं काँटे के बारे में ही सोच रहा था," हरज़ामान को मन-ही-मन आश्चर्य हुआ। "ऐसे लोग भी होते हैं जो आपके कुछ सोच पाने से पहले ही आपके मन की बात आपको बता देते हैं।"

"तुम्हें शर्म नहीं आती! कौन-सा कांटा? अगर किसी ग़ैर आदमी को वहाँ बसाया गया होता तो वह सचमुच आंखों में कांटे की तरह चुभता। पर तुम तो... भला मैं तुमसे ज़्यादा अच्छे पड़ोसी की आशा कर सकता हूं। तुम्हारे जैसा पड़ोसी मिल जाये तो मुझे और क्या चाहिए? यह सब जानते हैं, अच्छा पड़ोसी दूसरे दिल की तरह होता है। और मैं भी यही चाहता हूं कि मेरा पड़ोसी भला आदमी हो। पर हाँ, अगर तुम नहीं चाहते कि हरज़ामान तुम्हारा पड़ोसी हो तो..."

"नहीं, नहीं। मेरे लिए इससे अच्छी बात और क्या हो सकती है? पर आख़िर इस ज़मीन पर आपका और आपके पूर्वजों का पसीना बहा है। उसके पत्थर-पत्थर में आपकी मेहनत लगी है।"

"ओह, बेटा, अफ़सोस उस चीज़ का होना चाहिए जो लोगों के काम न आये। पर जिस चीज़ से उन्हें फ़ायदा होता हो, उसका अफ़सोस नहीं होना चाहिए। अगर मुझे दिखता है कि मेरी मेहनत से भला हो रहा है, तो मुझे ख़ुशी होती है न कि दुख... अगर ज़मीन बेकार पड़ी रही, तो बुरा लगेगा। तब मैं यह समझूंगा कि उसमें हमारे पूर्वजों की लगायी मेहनत बेकार गयी... अगर ज़मीन बुरे आदमियों को दी गयी तो भी बुरा लगेगा। पर अगर ज़मीन तुम ले लो, तो यह उसे खोना नहीं होगा। मुझे तो ख़ुशी ही होगी।"

उपयुक्त अवसर मिलते ही हरज़ामान नीचे उतरकर ग्राम सोवियत के दफ़्तर के लिए रवाना हो गया। ज़ाहिर था, वह उन लोगों की अच्छी तरह ख़बर लेना चाहता था जिन्होंने सबसे पहले उसकी ज़मीन की बात छेड़ी थी। अध्यक्ष लोग हरज़ामान को आया देखकर पहले कुछ डरे। उन्होंने सोचा, वह अपनी पूरी ताक़त इकट्ठी करके लड़ने आया है। और सचमुच हरज़ामान ने देहरी पर क़दम रखते ही हमला बोल दिया।

"यह मेरी अपनी ज़मीन है। वह तुम जैसे भले आदमियों के गले में क्यों अटक रही है? तुमने सारे नोवालूनिये में से मेरी ही ज़मीन का टुकड़ा क्यों चुना?"

"ज़रा ठहरो, हरज़ामान..." एक अध्यक्ष ने बोलना शुरू किया।

"आख़िर हम तुम्हें मजबूर तो कर नहीं रहे हैं..." दूसरे ने उसकी हाँ में हाँ मिलायी।

"आप लोगों ने मजबूर करने की क्या रट लगा रखी है। मैं तो कुछ और ही बात कह रहा हूं।"

अध्यक्षों की समझ में आने लगा कि हरज़ामान ग़ुस्से में नहीं आया है बल्कि सब कुछ सोच-विचारकर उनके सुझाव से सहमति प्रकट करने आया है।

"क्या मैंने यह कहा कि वहाँ किसी को ज़बरदस्ती बसा दिया गया है। पर आप लोग इस बात को समझते हैं या नहीं कि इस ज़मीन में मेरी मेहनत लगी है।"

"कैसे नहीं समझते!"

"हम कभी यह नहीं भूलते।"

"आप लोगों ने मुझसे पूछे बग़ैर किसे वहाँ बसाने की सोची है? मैं किसी को वहाँ बसाये जाने के ख़िलाफ़ नहीं हूं। पर मुझसे पूछे बग़ैर आपने किसे चुन रखा है? मुझे बताना चाहिए था। मुझे मालूम होना चाहिए या नहीं कि मेरा पड़ोसी कौन होगा?"

"क्यों नहीं, ज़रूर मालूम होना चाहिए।"

"ज़रूर।"

"फिर आप लोग छुपा क्यों रहे थे?"

"हम लोग छुपा नहीं रहे। हम तुम्हें बताना चाहते थे, पर मौक़ा ही नहीं मिल पाया। तुम पिछली बार हमारी पूरी बात सुने बग़ैर ही चले गये थे।"

"मुझे क्या सुनना चाहिए? मैं आप लोगों की बात सुनना ही नहीं चाहता। पता नहीं आप लोग किसे वहाँ बसाना चाहते हैं। वहाँ ऐसा आदमी ही बसना चाहिए जिसे मैं अपना पड़ोसी बनाना चाहूँ।"

"बहुत अच्छी बात है।"

"हम क्या इसके ख़िलाफ़ हैं?"

"और अगर खिलाफ़ हुए तो अपने लिए बेकार का सिरदर्द मोल लेंगे। मैं सिर्फ़ एक ही आदमी को अपने पड़ोस में रखना चाहता हूं। मुझे उसके अलावा और कोई नहीं चाहिए। और अगर आप लोगों ने उसे इन्कार कर दिया तो इस बात की आशा छोड़ दें कि कोई और उस जमीन पर क़दम रख सकेगा। किसी और का क़दम वहां नहीं पड़ेगा, चाहे वह आदमी अलीआस ही क्यों न हो। मेरे जीते जी किसी और का क़दम ..."

"पर तुम्हारा वह चहेता पड़ोसी आखिर है कौन?"

"तुम्हारी इच्छा हमारे लिए क़ानून है। अच्छा, जल्दी से बताओ, तुम किसे चाहते हो, हम वैसे ही बहुत बातें कर चुके हैं।"

"अच्छा तो फिर सुन लीजिये। अगर आप लोगों ने यह फ़ैसला ही कर लिया है कि किसी न किसी को मेरे पड़ोस में बसाना ही है, तो मैं चाहता हूं कि वह आदमी अलोऊ ही हो। हां, हमारा पशुचिकित्सक – अलोऊ।"

"अलोऊ?"

"नानबा?!"

अध्यक्षों ने एक-दूसरे की ओर देखा और बड़ी मुश्किल से अपना ठहाका रोक पाये। इसमें कोई संदेह नहीं था कि अगर वे नहीं जानते कि अबखाज़िया में किसी भी सम्मानित बुज़ुर्ग की बातों पर हंसना बहुत बुरा होता है, तो वे ठहाका मारकर हंस भी पड़े होते।

"तो तुम अलोऊ को चाहते हो?"

"अलोऊ नानबा को?"

"मैं जो कहना चाहता था, मैंने कह दिया है, अब इसके बाबत मैं कुछ भी नहीं सुनना चाहता। यह बात तय हो चुकी है," हरज़ामान जाने के लिए दृढ़तापूर्वक उठा।

अध्यक्ष लोग हरज़ामान को छोड़ने के लिए उसके साथ-साथ बाहर निकले। ग्राम सोवियत के अध्यक्ष ने कहा:

"हरज़ामान, हम भी तुम्हारी जमीन अलोऊ को ही देना चाहते थे।"

"अरे, फिर इतनी देर तक आप लोगों ने मेरा सिर क्यों खपाया? आप लोगों की वजह से मैं इतना परेशान होता रहा। अगर उसी वक़्त बता देते तो सारी बात बिना कुछ मनमुटाव के तय हो गयी होती ..."

"तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध जाने का हमारा विचार ही नहीं था, हरज़ामान। पर हम तुम्हें बता ही नहीं पाये। क्योंकि तुम हमारी बात पूरी सुने बिना ही चले गये।"

ज़ाहिर था, हरज़ामान सारी बात पूरी तरह स्पष्ट कर लेना चाहता था। इसलिए उसने पूछा:

"अलोऊ ने यह जमीन खुद चुनी या तुम लोगों ने उसके गले मढ़ दी?"

"उसने खुद ही चुनी थी।"

"आप लोगों ने तो उसे सलाह नहीं दी थी?"

"हमने उसे कोई सलाह नहीं दी, उसने खुद आकर हमसे कहा।"

"तो क्या तुम लोगों ने बिल्ली को अपना ही बच्चा चुराने के लिए मजबूर कर दिया?"

आखिर तीनों ही हंस पड़े।

जहां तक मेरा सवाल है तो मैं थोथे शब्दों से आपको नहीं उबाऊंगा। सब कुछ बहुत जल्दी हो गया। मैंने दी गयी जमीन ले ली और उस पर बस गया। कहा जाता है: "एक अकेला, दो ग्यारह।" शायद इसका मतलब यही है। पर इसे इस तरह भी कहा जा सकता है: "अकेला चाहे बैठा रहे, पर ग्यारह दोस्त इकट्ठे करना मुश्किल नहीं है।" न जाने कितने लोग आये मेरी मदद करने! उन लोगों ने मुझे एक कील भी ठोकने नहीं दी। एक पत्थर भी नहीं जमाने दिया। सारा काम उन्हीं लोगों ने किया। जैसा कि परियों की कहानी में होता है, पांच दिन में ही मेरी जमीन (हां, हां, मेरी जमीन) पर एक छोटा-सा, सुंदर घर खड़ा हो गया। मैंने कुछ समय बाद नोवालूनिये के और लोगों की तरह एक अच्छा दोमंजिला मकान बनाने की योजना बनायी।

पर शुरुआत के लिए इससे अच्छे की आशा मैं नहीं कर सकता था। हरज़ामान और अलीआस ने भी दूसरे लोगों के साथ मिलकर काम किया। जब तक घर बनकर तैयार नहीं हो गया, वे लोग वहाँ से नहीं हटे।

नोवालूनिये के निवासियों ने जब देखा कि मैं उनके गाँव को सच्चे दिल से चाहता हूं और बेपैंदे का लोटा नहीं हूं बल्कि उनकी ज़मीन में अपनी जड़ें अच्छी तरह जमाने का निश्चय कर चुका हूं, तो वे लोग मेरे लिए हर छोटी-बड़ी चीज लेकर आये जैसे बहू का दहेज दे रहे हों। एक आदमी एक अच्छा-सा देग लेकर आया जिसमें सोंधा-सोंधा दलिया और उससे भी ज़्यादा सोंधा गोश्त बनाया जा सकता था, दूसरा चूल्हे के ऊपर लटकाये जाने-वाली ज़ंजीर लेकर आया जिसमें हमने इस देग को फ़ौरन लटका दिया जिससे वह घर के चूल्हे की सुखद आग के ऊपर हमेशा लटका रहे। यह तो स्पष्ट ही है कि जहाँ आग होगी, वहीं जीवन होगा। तीसरा आदमी दलिया के लिए चमचा लेकर आया जिससे उसे मेहमानों या घर के लोगों को परोसा जा सके, यदि भविष्य में मेरा अपना घर बस जाये... चौथा गिलास लेकर आया जिन में खुशबूदार तेज़ अबखाज़ियाई शराब ढाली जा सके। कहने का मतलब यह कि जब मैं नये घर में रहने लगा तो मैंने देखा, घर में पहले मौक़े के लिए सभी चीजें हो गयी थीं। मेहमान आ जाये तो उसे बैठाने के लिए भी है, खाना पकाने के लिए बर्तन भी हैं और परोसने के लिए भी।

कभी-कभी जीवन में कई काम कितनी जल्दी हो जाते हैं। अभी कुछ दिन हुए, मैं नोवालूनिये में आया हुआ अजनबी था जिसका कोई घरबार न था और अब देखिये – मेरी अपनी ज़मीन भी है, चिमनी भी है और उसमें से धुआँ भी निकलता है।

और सबसे महत्वपूर्ण बात तो यह है कि मैं अमरा के पड़ोस में रह रहा था। हालाँकि मैं अब उसके इतना नज़दीक नहीं था जितना कि शुरू में, जब मैं परदे के पीछे से उसकी साँसों की आवाज़ सुन सकता था, लेकिन अभी भी जब वह हरज़ामान,

माँ, बाप या बीलगा से बात करेगी तो मुझे सुनाई दे जायेगा। बस उसे जल्दी से जल्दी अस्पताल से छुट्टी मिल जाये। मुझे उसे देखने की इतनी उत्सुकता नहीं थी जितनी कि यह जानने की कि उसे मेरा पड़ोस में रहना कैसा लगता है। शायद उसे बुरा लगे और वह अपना असंतोष भी व्यक्त करे, पर दूसरी ओर से देखा जाये तो मैं उसे किस तरह परेशान कर सकता हूं? इसमें कोई संदेह नहीं कि वह कुछ नहीं कहेगी, पर मैं उसके चेहरे के भाव फ़ौरन पढ़ लूंगा। मुझे अमरा को उस क्षण देखने की उत्कट इच्छा हो रही है, जब उसे मालूम पड़ेगा कि मैं यानी अलोऊ उससे दो क़दम दूर रहने लगा हूं, अब मेरे पास अपनी ज़मीन है, घर भी है और मेरी चिमनी से धुआँ भी निकलता है...

अधीरता ने मुझे ज़्यादा देर परेशान नहीं किया। अमरा अचानक अस्पताल से छुट्टी पाकर घर आ गयी। वैसे सिर्फ़ मेरे लिए यह अचानक हुआ था क्योंकि घरवालों को तो शायद मालूम ही था कि वह कब आयेगी।

अमरा के आने की ख़बर मुझे पहले से न देने के कारण मैं कुछ हैरान और चौकन्ना हो गया। निस्संदेह, जब मैं उनके घर में रहता था तब और बात थी। ऐसे मामले में कोई कुछ नहीं कह सकता। पर अगर मैं हर वक़्त उनके इर्द-गिर्द मंडराता रहूँ और अकसर उनकी देहरी लाँघता रहूं तो अमरा पर फ़ौरन लांछन लगने लगेंगे, अफ़वाहें फैलने लगेंगी और बदनामी शुरू हो जायेगी।

हालाँकि मुझे बताया भी नहीं गया था पर जब गाड़ी हरज़ामान के आँगन में आकर रुकी तो मैंने फ़ौरन देख लिया। मुझे अपनी बाड़ में से भी झाँककर देखने की ज़रूरत नहीं पड़ी। क्योंकि मेरी ज़मीन के चारों ओर बाड़ अभी नहीं बनायी गयी थी। मैंने अमरा को बैसाखी का सहारा लिये गाड़ी से निकलते देखा। उसने आँगन पर नज़र डाली और बेशक उसकी नज़र फ़ौरन मेरे घर पर पड़ी।

"माँ, यह क्या है, किसका घर है यह? कुछ दिन पहले तक तो इसका नामोनिशान भी नहीं था।"

"यह अलोऊ का घर बना है हमारे पास," देस ने बताया।
"हमें अच्छा पड़ोसी मिल गया," अलीआस ने कहा।
"कितना अच्छा किया उसने," लोगों से अपनी प्रसन्नता और अप्रसन्नता न छुपा पानेवाली अमरा कह उठी। "बधाई, अलोऊ, मैं तुम्हें दिल से बधाई देती हूं," यह उसने मुझसे कहा, क्योंकि मैं उनके पास आ रहा था।

अमरा भी अपने पैर के बारे में भूलकर मेरी तरफ़ आने लगी थी। उसने सोचा था, उसके लिए यह पहले जितना आसान होगा। पर उसका पैर उसे तंग कर रहा था। अमरा बड़ी कठिनाई से मेरी तरफ़ बढ़ी, एक पैर उसे जैसे कीचड़ में से घसीटना पड़ रहा था। मैं जल्दी से लपककर उसके पास पहुंच गया जिससे उसे एक क़दम भी बेकार न चलना पड़े। फिर उसे घर के अंदर ले गये।

एक बार फिर मैं अपनी भावनाओं में उलझ गया। काश मैं ठीक से जानता कि अलगेरी के दिमाग़ में क्या है। क्योंकि मुझे त्सीत्सिना और अमरा के साथ हुई उसकी कहानी पूरी मालूम नहीं थी। इसके बारे में मुझे काफ़ी देर बाद पता चला। और अब मैं तड़पने लगा: या तो अलगेरी पीछे हट गया, या फिर वह अमरा के चारों ओर चक्कर काटने लगेगा जैसे चील चहचहाती चिड़िया के चारों ओर मंडराती है। इसमें कोई शक नहीं कि अब सब कुछ ख़ुद अमरा पर निर्भर करता है। लेकिन मैं यह भी तो नहीं जानता था कि उसके दिल में क्या है।

मैं सोचता रहा, सोचता रहा और अलगेरी से मिलने की आशा में ऊपर बिजलीघर के निर्माणस्थल की ओर चल दिया। दो धूसर और क़रीब-क़रीब काली चट्टानों के बीच में, उन्हें जोड़ते हुए नया सफ़ेद बिजलीघर खड़ा था। मुझे मालूम हुआ उसके आख़िरी पेच कसे जा रहे हैं, बिजलीघर को चालू करने की तैयारी हो रही है। ऐसे अवसर पर अपनी महत्वहीन बातों से अलगेरी का ध्यान बंटाना मैंने उचित नहीं समझा, पर फिर भी मैंने उसे बुलाया और अपने मतलब की बात छेड़ दी,

"अलगेरी, मैं फिर उसी बारे में बात करने आया हूं। तुम मुझे आख़िरी बार साफ़-साफ़ बता दो कि तुम्हारे और अमरा के सम्बंध बदले हैं या नहीं?"
"मुझे अमरा से कोई वास्ता नहीं रहा," अलगेरी ने गुस्से में जवाब दिया। "तुम्हें ही उससे वास्ता पड़ सकता है।"
"अलगेरी, तुम बहुत मज़ाक़ उड़ा चुके। मैं गंभीरता से बात कर रहा हूं।"
"और मैं भी गंभीरता से बात कर रहा हूं," अलगेरी द्वेषपूर्ण हंसी हंसा। "तुम्हीं तो चाहते थे कि मैं तुम्हारे रास्ते से हट जाऊं, इसीलिए मैं हट गया। तुम्हारा रास्ता बिलकुल साफ़ है।"
अलगेरी ने हाथ भी पूरे फैलाकर दिखाये कि रास्ता कितना साफ़ है।
"मैं मज़ाक़ नहीं कर रहा हूं।"
"मैं भी मज़ाक़ नहीं कर रहा हूं। इसके अलावा मुझे फ़ुरसत भी नहीं है, आज हम बिजलीघर को चालू कर रहे हैं।"
"आज कैसे? और मीटिंग? क्या बिना मीटिंग के?"
"मीटिंगें तब की जाती थीं जब पहले बिजलीघर चालू किये गये थे, और अब... कितने बिजलीघर बन चुके हैं..." वह मुड़कर चला गया जैसे मुझसे और कोई बात नहीं करना चाहता हो।

मैं भी अजीब आदमी हूं। यह समझकर कि अलगेरी वास्तव में मेरे और अमरा के बीच के रास्ते में से हट गया है, मैं और भी ज़्यादा चिंतित हो उठा क्योंकि अब मुझे स्वयं ही कुछ ज़रूरी क़दम उठाने पड़ेंगे। पर मैं नहीं जानता था, मुझे क्या करना चाहिए। या तो मौक़ा हाथ से न जाने दूं और फ़ौरन अमरा के पास पहुंच जाऊं, या फिर देखूं आगे क्या होता है।

उस शाम हरज़ामान हमेशा की तरह घर लौट रहा था। हमेशा की तरह वह फाटक के पास रुककर तारों को देखने लगा। अपना तारा देखे बिना वह घर के अंदर नहीं जा सकता था। वह अपने तारे को ढूंढ़ने लगा और एकाएक उसे ऐसा लगा जैसे आसमान

से तारे नोवालूनिये पर इस तरह बिखरे पड़ रहे हैं जैसे किसीने अंजलि में भर-भर उन्हें बिखेर दिया हो। वे पेड़ों में, घास में अटक गये, मानो बाल्टी में से दहकते हुए अंगारे बिखर गये हों। धरती तुरंत प्रकाशमान हो उठी और आकाश धुंधला पड़ गया।

किसी बड़े त्योहार की तरह जैसे नये साल के अवसर पर होता है लोग भागकर घरों से निकलने लगे। कुछ चिल्ला रहे थे, कुछ हवा में गोलियाँ छोड़ रहे थे। गाँव के सब कोनों में कुत्ते एक साथ भौंक उठे। कुछ तो इतनी देर तक लगातार भौंकते रहे जैसे प्रलय आ गया हो। कुछ खुशी से कूँ-कूँ करने और भौंकने लगे। कुछ देर बाद बील्या भी घर से बाहर निकली। वह आँगन में चक्कर लगाती, हर बत्ती पर भौंक रही थी मानो उसने निश्चय कर लिया हो कि वह तब तक भौंकती रहेगी जब तक कि वह बुझ न जाये। लोगों की हर्षोन्मत्त चीखें कुत्तों के भौंकने की आवाज़ों में मिल गयीं। सब कहीं नये साल के त्योहार जैसा आलम था।

सत्ताईस

जीवन कितना सुखद है! मैं जानता हूँ, ये शब्द मेरे सोचे हुए नहीं हैं और न ही मैं इन्हें कहनेवाला पहला व्यक्ति हूं। जीवन कितना सुखद है! यह लाखों लोग कहते रहे हैं और लाखों लोग कहते रहेंगे। खैर इससे क्या, हर व्यक्ति यह बात अपने ही ढंग से कहता है, क्योंकि हर एक का जीवन भी अपने ही ढंग का होता है। मेरा जीवन भी अपने ही ढंग का है। इसीलिए मैं यह इस

तरह कह रहा हूं, जैसे मुझसे पहले कभी किसीने न कहा होगा: जीवन कितना सुखद है! मैं अमरा के पड़ोस में रह रहा हूं और अमरा से बेहतर लड़की इस दुनिया में कोई नहीं है। मैं धरती की सबसे सुंदर जगह नोवालूनिये में रहता हूँ। जिधर भी दृष्टि डालता हूं, सब मेरा जानापहचाना है, आँखें पुलकित हो उठती हैं... रोजाना सुबह मैं घर की चारों ओर दौड़ लगाता हूं, कसरत करता हूं। उसके बाद मैं चश्मे पर नहाता हूं। बरामदे में खड़ा होकर अमरा को अपने फाटक से निकलते देखता हूं। वह रोजाना एक निश्चित समय पर निकलती है। एक ही ढंग से चटकनी हटाती है, मेरी ओर मुड़कर हाथ हिलाकर अभिवादन करती है और सड़क पर नीचे उतरने लगती है।

"नमस्ते अमरा," मैं उससे कहता हूँ। मैं बहुत धीरे से कहता हूं, मेरी आवाज़ उसे सुनाई नहीं देती, पर मैं भी उसकी ओर हाथ हिलाता हूँ।

बस यही होता है। अब प्रातःकाल की यह सुखद अनुभूति मेरे लिए संध्या तक काफ़ी होगी। और रात बीतने के बाद, दूसरे दिन सुबह तक के लिए भी जब मैं फिर कसरत करके चश्मे पर नहाऊंगा और बरामदे में खड़े होकर अमरा के फाटक से निकलकर अपनी ओर मुड़ने की प्रतीक्षा करूंगा।

और हमारे काम पर भी सब कुछ ठीक चल रहा था। हरज़ामान मेरे साथ अपने सगे बेटे जैसा या शायद उससे भी अच्छा व्यवहार करता था। जब लोग साथ काम करते हैं, झगड़ते नहीं हैं बल्कि एक-दूसरे को प्यार करते हों तब काम काम नहीं, सच्चा सौभाग्य हो जाता है।

कुछ दिनों बाद हमारे फ़ार्म में भी बिजली आ गयी और शहर से आये मिस्तरी ने बिजली से दूध दोहने की मशीन भी फिट कर दी। हरज़ामान आखिरी क्षण तक गुस्सा होता रहा और हमें विश्वास दिलाता रहा कि अबखाज़िया की गायें इन लटकनेवाली भोंडी चीज़ों से अपने को दोहने नहीं देंगी। पर गायें शांत खड़ी रहीं और उन्होंने पैर या पूंछ केवल मक्खियाँ उड़ाने के लिए ही

हिलाये। हरज़ामान बिजली से दूध दोहने की मशीन को हैरान हुआ देख रहा था। साफ़ ज़ाहिर था, वह अबखाज़िया की गायों से हमेशा-हमेशा के लिए निराश हो गया था।

"लगता है, तुम्हारी गायें भली हैं," उसने फ़ार्म के मेनेज़र जफ़ास से कहा।

"हाँ, ये सब मेरे जैसी हैं – शान्त और समझदार हैं, बेकार की बातों पर गुस्सा नहीं होतीं।"

"अगर तुम्हारी गायों ने ये भोंडी चीज़ें लगा लेने दी तो वे गायें नहीं, चिथड़े हैं। ज़रा इन्हें तुम मेरी बकरियों के लगाकर देखो। कोई बीमार या बिलकुल मराऊ बकरी भी तुम्हें बिजली की इस चीज़ के साथ अपने पास भी नहीं फटकने देगी। यक़ीन करो। अगर मैं कह रहा हूं, पास नहीं फटकने देंगी तो सचमुच नहीं फटकने देंगी।"

"हमें तुम्हारी बात पर विश्वास है। जानवरों की आदतें और बुद्धि उनकी देखभाल करनेवाले आदमी जैसे ही हो जाती हैं।"

हरज़ामान ने जफ़ास का वाक्छल न सुनने का बहाना किया।

दूसरे दिन हम हरज़ामान के साथ उसकी केबिन में बैठे रेडियो सुन रहे थे। पहले ताज़ा समाचार सुनाये गये और कुछ देर बाद उद्घोषक ने, जैसा मुझे लगा, कुछ आडंबरपूर्ण आवाज़ में कहा:

"यह सुखूमी है। अब सुखूमी संगीत विद्यालय के विद्यार्थी ताल्येई अहबा का एक नया गीत सुनिये। गीत के बोल हैं," सूरज हमारे यहाँ उदय होता है।"

हरज़ामान ने मेरा हाथ पकड़ लिया।

"सुना, उसने क्या कहा? उसने कहा, हमारे ताल्येई का गीत गाया जायेगा? मैंने ग़लत तो नहीं सुना?"

"नहीं, उसने यही कहा था।"

हम लोग अपनी जगहों पर बैठे सुनने लगे। हरज़ामान के चेहरे के भावों को शब्दों में व्यक्त कर पाना असंभव है। इसमें

कोई संदेह नहीं कि वह बहुत पहले से रेडियो का आदी हो चुका था और हम सब भी। हमारी केबिन में भी बैटरी से चलनेवाला रेडियो था। पर किसी जाने-पहचाने आदमी, हमारे ताल्येई की आवाज़ रेडियो पर सुनना आश्चर्य की बात थी और वह अपनी हैरानी छुपा नहीं पा रहा था। वह इस डर से चौकन्ना होकर बैठा था कि कहीं किसी आवाज़ और सरसराहट से सुनने से चूक न जाये।

वास्तव में रेडियो में पहले सरसराहट और खड़खड़ाहट सुनाई दी और उसके बाद संगीत की धारा बह उठी।

हम पहाड़ी चरागाह पर केबिन में बैठे थे। हमारे चारों ओर हमारी अबखाज़ियाई धरती फैली हुई थी। और संगीत रचना ताल्येई की थी। संगीत रचना करते समय वह इन्हीं जगहों को देख रहा था। या फिर उनके बारे में सोच रहा था और उसका परिणाम यह हुआ कि संगीत और धरती, संगीत और धरती का सौन्दर्य एक-दूसरे में लीन हो गये। हमें महसूस हुआ, यह संगीत इस छोटे से रेडियो में से नहीं बह रहा है बल्कि सारी अबखाज़ियाई धरती गा उठी है: ये मैदान, चट्टानें, पेड़, पगडंडियाँ और दूर खड़ा वह पहाड़ भी। पर इसके साथ-साथ गीत हमें धरती से कहीं बुलंदी पर बुला रहा था जहाँ केवल हमारी शक्तिशाली पहाड़ी चिड़ियाँ ही उड़ती रहती हैं।

हम साँस रोके सुन रहे थे मानो कहीं संगीतकार और गायक के काम में बाधा न डाल दें। हरज़ामान की मुखमुद्रा ऐसी हो गयी थी कि अगर मैं चित्रकार होता और अगर मुझे "सुखी अबखाज़ियाई" का चित्र बनाना पड़ता तो मैं हरज़ामान की इसी मुद्रा, उसके चेहरे के इन्हीं भावों को चित्रित करता। शायद वह

भी हमारी अबखाज़ियाई धरती का स्मरण कर रहा है और अगर उसे अपने विचार व्यक्त करने पड़ते तो मुझे विश्वास है, उसने यही कहा होता :

"हाँ, यह हमारी सुन्दर धरती है। यह विश्व का अतिसुन्दर साकार रूप है और उस पर रहनेवाले लोग भी अतिसुन्दर हैं। हम अबखाज़ियावासियों को विशाल धरती का यह टुकड़ा मिला है। हमें कोई शिकायत नहीं, हम इसे प्यार करते हैं। आप हमारे यहाँ आइये। अपने मेहमानों को हम दुनिया में सबसे ज़्यादा प्यार करते हैं, उनके आगमन पर प्रसन्न होते हैं। हम सैंकड़ों वर्षों से इस धरती को अपने गर्म-गर्म पसीने और आँसुओं से सींचते रहे हैं। इसी के बदले में यह धरती हमें इतना सुख प्रदान करती है।"

मुझे पूरा विश्वास है, हरजामान ने कुछ इसी तरह की बात कही होती।

कुछ दिनों बाद मैं सरकारी खाद्य डिपो में पनीर देने शहर गया। अपने काम जल्दी-जल्दी निबटाकर मैंने थोड़ी देर नगर और समुद्र के किनारे घूमने का निश्चय किया। मुझे सामने से अलगेरी और त्सीत्सिना आते दिखाई दिये। नोवालूनिये तक खबर पहुंच चुकी थी कि उन्होंने शादी कर ली है। हमारे नोवालूनिये के लोग अबखाज़िया के हर कोने में होनेवाली हर बात की खबर रखते हैं।

"अच्छी बात है," मैंने सोचा, "अगर वे एक-दूसरे को प्यार करते हैं तो सुखी रहें।" हालाँकि मेरे और अलगेरी का रास्ता काली बिल्ली काट गयी थी, पर अब मैं सब कुछ भूल चुका था और मुझे वैसी ही खुशी हुई जैसी किसी मित्र को देखने पर होती है।

"अलगेरी," मैं चीख सा पड़ा, "तुम्हें बहुत दिनों से नहीं देखा! तुम हमारे नोवालूनिये क्यों नहीं आते हो?"

"समय कहाँ मिलता है," अलगेरी ने अधीरता से जवाब दिया, "काम बहुत रहते हैं।"

"कोई बुरी बात तो नहीं हुई?" मैंने सहज भाव से पूछ लिया।

"क्या बुरी बात होगी! इसका मौक़ा ही नहीं आता। क्या तुम नहीं जानते, आदमी के सिर पर काम का कितना बोझ हो सकता है?"

"क्या फिर कहीं बिजलीघर बना रहे हो?"

"क्या कोई एक जगह है! एक बिजलीघर होता ही क्या है? यह सब पहले होता था।"

"हाँ, अगर ऐसा ही है तो बेशक तुम्हें फ़ुरसत कैसे मिल सकती है। क्या दो बिजलीघर एक साथ बना रहे हो? अगर वे एक-दूसरे से ज़्यादा दूर न हों, तो मौक़ा मिल सकता है..."

अलगेरी मेरी ओर ऐसे देख रहा था जैसे मैं कोई नासमझ छोकरा हूं जिसे बड़ों की बात समझा पाना असंभव हो क्योंकि अभी वह उसके योग्य नहीं हुआ।

"दो बिजलीघरों का इससे क्या वास्ता? मैं अब सारे गाँवों के बिजलीघरों का मुख्य इंजीनियर हो गया हूं। प्रशासन का मुख्य इंजीनियर। समझे?"

"अच्छा," मैंने ज़ोर से कहा। हालाँकि अपने मन में सोच रहा था, "शायद जब अगली बार मिलेगा तो मंत्री बन चुका होगा।"

मैं रास्ते पर आगे बढ़ गया। चाय फ़ैक्टरी के पास मुझे अगरा दिखाई दी जो जल्दी में दरवाज़े की ओर बढ़ते हुए युवक को रोककर, उसे संभल पाने का मौक़ा दिये बग़ैर लगातार कुछ बोले ही चली जा रही थी। मैंने उसे आवाज़ दी। अगरा मुझे फ़ौरन पहचान गयी और शायद भागकर मेरे पास आना भी चाहती थी, पर उसे डर था कहीं इस बीच वह युवक बाहर न चला जाये। इसलिए वह दूर से ही बोली :

"मैं बहुत अच्छी हूं, अलोऊ! मैं जानती हूं कि तुम भी ठीक हो। शाबाश, ऐसे ही करना चाहिए। नमस्ते!"

यह कहकर वह उस लड़के की ओर मुड़ गयी। उसके सारे हावभावों से जाहिर हो रहा था : "देख रहे हो, दुनिया में तुम

एक ही तो लड़के नहीं हो। देख रहे हो, मैं एक ऐसे आदमी से बात कर रही हूं, जो तुम से कम नहीं है। देख रहे हो, मैं शहरी लड़के के साथ खड़ी हूं और तुम नोवालूनिये में अपनी गायों के पास जाओ।"

खैर, अगरा आखिर अगरा ही है। वह हमेशा अपने ढंग की ही रहेगी।

मैं झुटपुटा हुए नोवालूनिये पहुंचा। मैं अपने घर के पास खड़ा नीचे फैले गाँव की ओर देख रहा था। सबसे पहले मुझे हरियाली के बीच से बहती अलीप्सता दिखाई दी। यह कहना ज्यादा उचित होगा कि मैं उसका शोर सुन रहा था। वह स्वयं फड़फड़ाती मछली की तरह कभी-कभी ही दिखाई दे रही थी। वह पेड़ों के बीच चाँदी की तरह झिलमिलाई मानो अपना एक पहलू दिखाकर फिर छुप गयी हो। मोड़ पर मछली का-सा सफ़ेद पेट चमका। बिलकुल समुद्र के पास पहुंचकर मानो उसने अपनी पूंछ फटकारी और समुद्र में ग़ायब हो गयी।

कुछ देर बाद बिजली जल उठी और नीचे दीपमाला जगमगाने लगी। मुझे गाँव लगभग उसी तरह दिखाई दे रहा है जैसे मैं हवाई जहाज से देख रहा होऊं। बत्तियाँ जलाये गाड़ियाँ सड़क पर चली जा रही थीं। मुझे मालूम है, उनमें तम्बाकू, नोवालूनिये में पैदा तम्बाकू शहर ले जाया जा रहा है। मौसम अच्छा था और अलीआस की टोली दिनरात सुनहला अवखाज़ियाई तम्बाकू चुनने और उनकी गाँठें बाँधने में जुटी हुई थी। पर जो इस समय तम्बाकू की गाँठें बाँधने में व्यस्त नहीं थे, उनके लिए भी काम काफ़ी थे। केवल तम्बाकू की खेती की जानकारी नहीं रखनेवाले लोग ही सोच सकते हैं कि पतझड़ और सर्दियों में तम्बाकू की खेती करनेवालों को कोई काम नहीं होता ... जमीन को पूरे साल ध्यान और संभाल की जरूरत होती है। जमीन को पौधे रोपने के लिए तैयार करना होता है, खाद, राख आदि तैयार करनी होती है, पता नहीं क्या-क्या करना पड़ता है, भला सारी बातें बतायी जा सकती हैं!

अलीआस अभी तक अपनी पत्ते चुननेवाली मशीन में उलझा हुआ है। सच कहा जाये तो अभी तक इस मशीन से कोई ढंग का काम नहीं हो पाया है। काम बिलकुल नया और अज्ञात है पर अलीआस हठी आदमी है। वह किसी क़ीमत पर पीछे हटने को तैयार नहीं।

मेरे घर से कुछ नीचे (जब आप हमारे इलाक़े में हों तो हमारे यहां जरूर आइये) तान्येई का घर है। कभी-कभी जब वह सुखूमी से रविवार को आता है तो मैं उससे मिलता हूं।

एकाएक मैं तेजी से हरजामान के घर की ओर मुड़ता हूं, मानो मुझे किसी चुम्बक ने खींच लिया हो या मुझे पूर्वाभास हो गया हो। वास्तव में हुआ भी कुछ ऐसा ही। अमरा अपने घर की बालकनी में निकली थी। वह मेरी ओर देखने लगी। पर मेरे बरामदे में रोशनी नहीं है और वह शायद मुझे नहीं देख रही है, मैं काली दीवार में घुलमिल गया हूं।

उसने नीचे उतरकर आँगन पार किया और फाटक से बाहर निकल आयी। सचमुच क्या वह मेरे पास आ रही है? यह असंभव है। कोई अवखाज़ियाई लड़की ऐसा क़दम नहीं उठा सकती कि शाम को अकेले मर्द के घर आये। क्योंकि अगर किसीने देख लिया या किसीने तीसरे मुंह से सुन लिया ...

पर यह क्या हो रहा है? अमरा सड़क पार करके मेरे फाटक के पास आकर रुक गयी। नहीं, नहीं। यह नहीं हो सकता। अमरा अच्छी तरह समझती है कि अवखाज़ियाई स्त्री के लिए क्या सम्मानजनक है और क्या असम्मानजनक। यही हुआ। कुछ देर तक वहाँ खड़ी रहकर वह नीचे गाँव की ओर बढ़ गयी।

मेरे आँगन के चारों ओर की बाड़ अभी तक पूरी नहीं बनी है। मैंने फ़ौरन छोटी पहाड़ी पार करके अमरा से पहले पहुंचकर उसका रास्ता काटने का निश्चय किया। अब मैं पहाड़ की ओर गाँव और घरों की तरफ़ जा रहा हूं। अभी हम एक-दूसरे से ऐसे मिलेंगे जैसे संयोग से मिल गये हों। उसे क्या मालूम होगा कि मैं चालाकी कर रहा हूं? उसने मुझे बरामदे में खड़े नहीं देखा?

और अगर मैं उसे सामने से आता मिल जाऊं तो इसमें बुराई ही क्या है? आखिर मैं किसी बुरे इरादे से तो उसे रास्ते में नहीं मिलूंगा। आखिर मैं उसकी हत्या करने या उसे लूटने तो नहीं जा रहा। मैं तो केवल उसे "नमस्ते" कहना चाहता हूं, मेरे लिए इतना ही काफ़ी होगा।

"ऐ, कौन, अलोऊ! कितना डरा दिया मुझे।"

"नमस्ते!"

"नमस्ते, अलोऊ।"

अमरा मुझे रास्ता देने के लिए एक ओर हट गयी। हम साथ चल पड़े और नीचे समुद्र तक पहुंच गये। इस समय हम नोवालूनिये को नीचे, समुद्र की ओर से देख रहे हैं। गाँव हमें और भी अधिक सुंदर प्रतीत हो रहा है।

"हमारा गाँव यहाँ से कितना सुंदर लग रहा है!"

"हाँ, अब बिजली जलने से वह जेटी में खड़े जहाज़ जैसा लग रहा है। याद है, यहाँ "अबखाजिया" नाम का जहाज खड़ा था। और ये लहरें किनारे से नहीं बल्कि जैसे जहाज की बाहरी चादर से टकरा रही हैं।"

हम समुद्र के किनारे-किनारे चलने लगे। तभी मेरे ध्यान में आया कि अमरा बिना बैसाखी के घूमने निकली है... वह बहुत मामूली-सा लंगड़ा रही थी पर उस पर यह इतना फब रहा था मानो उसने और ज्यादा अच्छी लगने के लिए जानबूझकर अपनी चाल ऐसी कर ली हो।

चाँद निकल आया और विशाल समुद्र में चाँदनी फैली गयी। हम रुककर उसे देखने लगे। हम एक-दूसरे के नज़दीक खड़े थे। हमारे पीछे हमारी सुहानी अबखज़ियाई धरती, प्यारी-प्यारी रोशनियों में जगमगाता हमारा गाँव और सामने चाँदनी में झिलमिलाता समुद्र था।

"अब 'अबखाजिया' समुद्र की ओर रवाना होनेवाला है," मैंने कहा।

"हाँ, और हम भी उसमें जा रहे हैं। सुनो, अलोऊ, क्या

यह सच है कि तुमने एक बार किसीसे कहा था, तुम अमरा से प्यार करते हो, अमरा के साथ तुम्हारा सब कुछ तय हो चुका है?"

"हाँ, कहा था।"

"पर तुमने खुद अमरा से क्यों नहीं कहा।"

"क्योंकि अगर मैं कहता तो वह किसी हालत में सुनती ही नहीं। वह दूसरे के प्यार में डूबी थी।"

"और अब?"

"और अब..."

मैं अमरा की ओर मुड़ा और अचानक हम दोनों ने एक-दूसरे के हाथ थाम लिये। हम मौन खड़े थे और हमें लग रहा था जैसे जगमगाता विशाल "अबखाजिया" बंदरगाह से निकलकर शान्त समुद्र में चला जा रहा है। और हम भी जैसे बहुत दूर चले जायेंगे, हर देश में जायेंगे, वहाँ के लोगों से चिल्ला-चिल्लाकर कहेंगे:
"देखिये, हम लोग नोवालूनिये से आये हैं। धरती की सब से सुंदर जगह से! सारी धरती को प्रकाशमान करने-वाला सूरज हमारे यहाँ उदय होता है। हम नोवालूनिये के वासी हैं। हमारे यहाँ आइये और देखिये, हम लोग कैसे रहते हैं! सुन रहे हैं न आप लोग, हम नोवालूनिये के वासी हैं!"

इवान तार्वा

भले ही आज हमें देशाटन की काफ़ी अच्छी सुविधाएं प्राप्त है, लेकिन फिर भी हम जिन जगहों को देखने के लिए उत्सुक रहते है उन्हें देख पाने के लिए मानव जीवन पर्याप्त नही है। पर प्रस्तुत उपन्यास आप को यह आनंद हासिल करा देगा। सच कहा जाये, सोवियत देश के अबखाज़िया नामक सुरम्य प्रदेश जाने की मैं काफ़ी समय से सोच रहा था, – अबखाज़िया के तो नाम मात्र से ही पर्वतीय लोगों का कंठ्य स्वर कानों में गूंज उठता है। पर रोजमर्रा की ज़िंदगी की बहुत-सी समस्याओं के कारण मैं वहां काफ़ी समय तक जा नहीं पाया। मेरे अभिन्न मित्र इवान तार्वा ने, लगता है, मुझे अपने यहां देख पाने की आशा छोड़ ही दी थी, मुझे अत्यंत आकर्षक शीर्षकवाली अपनी पुस्तक "सूरज हमारे यहां उदय होता है" भेंट कर दी। इस उपन्यास को पढ़ लेने के बाद तो मुझे भी विश्वास हो गया है कि सूरज की पहली किरण अबखाज़िया को ही आलोकित करती है और वह फूटती है वृद्ध चरवाहे हरजाथाल के हृदय और उसकी पोती अमरा की सुन्दर आंखों से से। कहानी सुनानेवाले के साथ-साथ मैं भी अपने आपको वृद्धिमान पहाड़ी बुजुर्ग की निगाई के पास बैठा महसूस करता हूं और जब अशोक जैसा भला लड़का यह स्वीकार करता है कि उसकी "आंख अभी उठाते ही गुज़री, कहीं सामने देखा और अमरा से जा टकराती थी!" तो मैं भी उसकी बात समझता हूं। वह आंख उठाकर इसलिए नहीं देख सका क्योंकि उसकी ऐसा करने की बहुत तीव्र इच्छा हो रही थी, क्योंकि उसको प्यार हो गया था। अशोक मुझे भी बहुत पसन्द आया। मैं उसका आभारी हूं कि उसने भावविभोर होकर न केवल

अमरा के बारे में ही मुझे बता दिया बल्कि अन्य भले लोगों, अपने गांव नोवालूनिये, समस्त अबखाज़िया, उसके शानदार रीति-रिवाजों और उसके अद्वितीय प्राकृतिक सौंदर्य के बारे में भी।

पर्वतीय गांव में होनेवाले परिवर्तनों का सटीक वर्णन करते हुए इवान तार्वा हमारे निर्माणकारी युग की देन: मुख्य सड़क का और बिजली घर का निर्माण, लोगों के बोझिल को हल्का करनेवाली मशीनों आदि के बारे में भी बताते हैं। इस तरण के पुनर्निर्माण के साथ-साथ लोग भी बदलते जा रहे हैं।

लेखक ने अपने अबखाज़िया, उसके प्राकृतिक सौंदर्य और पर्वतीय लोगों के रीति-रिवाजों की प्रशंसा की है। अगर हम भी अपनी जन्मभूमि की इस तरह से प्रशंसा कर सकें बहुत ही अच्छा होगा। इवान तार्वा कवि हैं और इसी लिए उनकी उन्नत और रोमांटिक शैली सुगम्य है।

लेखक का जन्म सन् १९२१ में अबखाज़ियाई स्वायत्तशासी सोवियत समाजवादी प्रजातंत्र के ओचमचीर ज़िले के नयनाभिराम गांव वेसलाखूब के एक किसान परिवार में हुआ था। उन्होंने ओचम-चीर का मिडिल स्कूल पास करके सुखूमी के शिक्षण-महाविद्यालय में शिक्षा प्राप्त की। इवान तारवा बहुत छोटी उम्र से ही काम करने लगे थे। मिडिल स्कूल में अध्ययन करते समय वे इलाक़ाई अख़बार में भी काम करते रहे। तत्पश्चात उन्होंने इलाक़ायी अख़बारों का संपादन किया, ज़िला पार्टी समिति में आदेशक रहे, अबखाज़िया के शिक्षामंत्री रहे, जार्जिया की कम्युनिस्ट पार्टी की अबखाज़ियाई ज़िला समिति के सचिव के पद पर रहे और सन् १९५८ से वे स्थायी रूप से अबखाज़ियाई लेखक संघ के अध्यक्ष हैं।

इवान तार्वा – कवि के नाम से सभी भली भांति परिचित हैं: अपनी मातृभाषा में उनके दस से अधिक काव्य और कविता-संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं जिन का रूसी में भी अनुवाद हो चुका है। पर गद्यकार इवान तार्वा से हमारा परिचय सिर्फ़ कुछ समय पहले ही हुआ है। रूसी भाषा में उनका प्रथम उपन्यास "प्रसिद्ध नाम" सन् १९६४ में "सोवियत लेखक" प्रकाशन गृह द्वारा प्रकाशित

किया गया था और उनका दूसरा उपन्यास, जिस को ये पंक्तियाँ समर्पित हैं, पहली बार सन् १९७० में "द्रूझबा नरोदोव" (जातियों की मैत्री) नामक पत्रिका में छपी थीं। अबखाजियाई पाठकों ने इस उपन्यास का बड़े उत्साह से स्वागत किया, इस में अचंभे की कोई बात नहीं क्योंकि प्यार के बदले में प्यार ही मिलता है। इस उपन्यास के लिए उन्हें दे० ई० गुलिआ स्मृति पुरस्कार प्रदान किया गया।

मिखाईल अलेक्सेयेव

पाठकों से

प्रगति प्रकाशन की ताशक़न्द शाखा इस उपन्यास के अनुवाद और डिजाइन सम्बन्धी आपके विचारों के लिए आपकी अनुगृहीत होगी। आपके अन्य सुझाव प्राप्त करके भी हमें बड़ी प्रसन्नता होगी। कृपया हमें इस पते पर लिखिये: प्रगति प्रकाशन, १२६, नवाई स्ट्रीट, ताशक़न्द, सोवियत संघ।

प्रगति प्रकाशन

प्रकाशित हो चुकी है :

रशीदोव श०, **विजेता**। उपन्यास

उज़्बेक लेखक और राजनेता शराफ़ रशीदोव का नाम विदेशों में सुविख्यात है। इनका जन्म १६१७ में एक ग़रीब किसान परिवार में हुआ। रशीदोव का प्रसिद्ध उपन्यास 'विजेता' उनके हमवतनों, उज़्बेक किसानों को समर्पित है। लेखक ने उनके नये जीवन को चित्रित किया है और यह बताया है कि आज के देहात में युवाजन कैसे रहते हैं, कैसे वे नई-नई ज़मीनों को खेती योग्य बनाने के लिए, सूखी स्तेपी में पानी लाने के लिए संघर्ष करते हैं। सुप्रसिद्ध सोवियत लेखक वादीम कोजेव्निकोव ने उपन्यास की भूमिका लिखी है। कई विदेशी भाषाओं में इसका अनुवाद हो चुका है।

प्रगति प्रकाशन

प्रकाशित हो चुकी है

मुख़्तार अ०, **चिंगारी**। उपन्यास

असकद मुख़्तार (जन्म १६२०) प्रसिद्ध उज़्बेक लेखक और कवि हैं।

'चिंगारी' उपन्यास उज़्बेकिस्तान में सोवियत सत्ता की स्थापना के पहले वर्षों के बारे में है। लेखक यह बताता है कि किस प्रकार अमीर-उमराओं के उग्र विरोध पर विजय पायी गयी, सदियों से चले आ रहे अंधविश्वासों को मिटाया गया और किस प्रकार दबी-पिसी उज़्बेक स्त्रियां अपने देश और अपनी नियति की सच्ची स्वामी बनीं।

उपन्यास की कथा एक बुनकर के जीवन पर केंद्रित है। यह अनपढ़ औरत, जो दुनिया को बस अपने बुरक़े की जाली से देखती आयी थी, बुनकरों को सहकारी संगठन में संगठित करती है, कपड़ा मिल के निर्माण का संचालन करती है। उसकी देखा-देखी उसकी सहेलियां, उसकी आत्मिक बहनें भी बुरक़ा उतारकर नये जीवन के निर्माण में भाग लेती हैं।

प्रगति प्रकाशन

प्रकाशित होनेवाली है :

मुख्तार अ०, **चिनार**। उपन्यास

चौरानवे वर्षीय अचील दादा हर साल अपने बेटे-बेटियों, नाती-पोतों और परपोतों से मिलने जाते हैं। पाठक भी उनके साथ सोवियत उज़्बेकिस्तान की यात्रा करेंगे। पाठक देखेंगे कि उज़्बेक किसानों का जीवन कितना बदल गया है, कि मानव-जीवन कितना संपूर्ण और सुखी होता है, अगर वह जन-जीवन से जुड़ा होता है और अपनी स्वार्थमय तुच्छ भावनाओं के दायरे में घुटा नहीं होता।

प्रगति प्रकाशन

प्रकाशित होनेवाली है :

इकामी ज०, **अग्नि पुत्री**। उपन्यास

जलाल इकामी सोवियत ताजिकिस्तान के अग्रणी लेखक हैं। उनकी पुस्तकें सोवियत संघ और संसार भर की कई भाषाओं में अनूदित हो चुकी हैं।

'अग्नि पुत्री' लेखक की सर्वाधिक प्रसिद्ध कृति है। उपन्यास में बुखारा के विभिन्न सामाजिक स्तरों के जीवन का सजीव चित्रण किया गया है। लेखक ने बुखारावासियों की रस्मों और रीति-रिवाजों का ब्योरेवार वर्णन किया है।

'अग्नि पुत्री' – सुंदरी फ़िरोज़ा को मां से उन्मुक्त और निर्भीक स्वभाव मिला। फ़िरोज़ा का प्रारूप बुरक़ा फेंकनेवाली पहली ताजिक स्त्रियों में से एक थी।

प्रगति प्रकाशन

प्रकाशित होनेवाली है :

इकामी ज०, **अग्नि पुत्री।** उपन्यास

जलाल इकामी सोवियत ताजिकिस्तान के अग्रणी लेखक हैं। उनकी पुस्तकें सोवियत संघ और संसार भर की कई भाषाओं में अनूदित हो चुकी हैं।

'अग्नि पुत्री' लेखक की सर्वाधिक प्रसिद्ध कृति है।

उपन्यास मैं बुखारा के विभिन्न सामाजिक स्तरों के जीवन का सजीव चित्रण किया गया है। लेखक ने बुखारावासियों की रस्मों और रीति-रिवाजों का ब्योरेवार वर्णन किया है।

'अग्नि पुत्री' – सुंदरी फ़िरोज़ा को मां से उन्मुक्त और निर्भीक स्वभाव मिला। फ़िरोज़ा का प्रारूप बुरक़ा फेंकनेवाली पहली ताजिक स्त्रियों में से एक थी।